भारतीय विधान-परिषद्

प्रथम खण्ड

[परिषद के तीनों अधिवेशनों तथा तत्सम्बन्धी
समस्याओं का पूर्ण विवेचन]

लेखक

दीनानाथ व्यास 'काव्यालङ्कार'

UNIVERS...
ALLAB...

प्रकाशक
छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागञ्ज, प्रयाग।

प्रथम संस्करण] १९४७. [मूल्य २)

प्रकाशक
श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०
प्रोप्राइटर—छात्रहितकारी पुस्तकमाला
दारागंज, प्रयाग

143067

जयपुर के सोल एजेन्ट
प्रभात प्रकाशन, जयपुर
जोधपुर के सोल एजेन्ट
भारतीय पुस्तक भवन, जोधपुर

345-H
51

मुद्रक
सरयू प्रसाद पांडेय 'विशारद'
नागरी प्रेस, दारागञ्ज,
प्रयाग।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—विषय-प्रवेश	
भारतीय विधान-परिषद का जन्म और विकास	१
लीग की नाराजी का मुख्य कारण	१६
विधान-परिषद में दलशक्ति	२१
२—प्रथम अधिवेशन	३०
बाद की परिस्थितियों पर एक दृष्टि	६५
३—द्वितीय अधिवेशन	७४
बाद की परिस्थितियों पर एक दृष्टि	१०१
४—तृतीय अधिवेशन	१४८
बाद की परिस्थितियों पर एक दृष्टि	१७३
५—परिशिष्ट	
१—१६ मई का घोषणा पत्र	
२—२२ मई का स्मरण पत्र	
३—२५ मई का घोषणा पत्र	
४—६ दिसम्बर का घोषणा पत्र	
५—२० फरवरी १९४७ का घोषणा पत्र	
६—वैधानिक सुधारों की तालिका	

भारतीय विधान-परिषद

(*Constituent Assembly*)

विषय-प्रवेश

उत्पत्ति एवं विकास

"विधान परिषद् का प्रश्न हमारी जबरदस्त जांच का सवाल है। इसी से पता चल जायेगा कि हम सब कहाँ खड़े हैं।"

—जवाहरलाल नेहरू

जाति के जीवन के इतिहास में पुनर्निर्माण एवं क्रान्तिकारी उद्देश्यों की पूर्ति के अवसर कभी-कभी ही आते हैं। जाति अपना पुनर्निर्माण करके एक नवीन राष्ट्र के रूप में परिणत हो जाय ऐसा मौका तो क्वचित ही उपलब्ध होता है। भाग्य से ऐसा अवसर भारतवर्ष को प्राप्त हुआ है। विधान-परिषद क्रान्ति के यन्त्र हैं। भारतीय विधान-परिषद भी राष्ट्र की ६० वर्षों की महान क्रान्ति का परिणाम है। यदि भारतीय ऐसा नहीं मानते तो विधान-परिषद अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सकती। भारतीय विधान-परिषद चाहे जितनी ससीम हो किन्तु निस्सन्देह वह भारतीयों के क्रान्तिकारी उद्देश्यों का सार्वभौम साकार स्वरूप है, वह भारतीयों द्वारा भारतीयों के विधान (Constitution) बनाने की क्रान्तिकारी अभिलाषाओं का वास्तविक मूर्त प्रतीक है।

पन्द्रह वर्षों तक आदर्शों और दस वर्षों तक क्रियात्मक रूप से अखिल भारतीय कांग्रेस भारतीय विधान-परिषद के निर्माण के

लिये संघर्ष कर रही है। अब वह समय आया है जब कि वह इस संघर्ष में सफलता प्राप्त कर सके। इसके शीघ्र निर्माण के लिये कांग्रेस को बालिग मताधिकार तक को छोड़ना पड़ा क्योंकि इसके लिये अधिक समय की आवश्यकता थी और भारतीयों के सामने इतना समय अब नहीं था। इसीलिये जनता ने अपने प्रतिनिधि अप्रत्यक्ष मताधिकार (Indirect Election) के आधार पर ही निर्वाचित किये। भारतीय विधान परिषद् के सदस्य वास्तव में देश के "वास्तविक" बुद्धि सम्पन्न लोग ही चुने गये हैं। ये प्रतिनिधि, वास्तव में देश के रत्न हैं। इसमे महान राजनीतिज्ञ, विधानवेत्ता, ऐतिहासिक, दार्शनिक, समाज शास्त्री आदि सभी तरह के देश के चोटी के व्यक्ति विद्यमान हैं। अपने देश के विधान निर्माण के लिये उक्त योग्यतम व्यक्तियों के जीवन भर के अनुभवों का निचोड़ उन्हें देश के सम्मुख लिपिबद्ध करना है।

इनकी योग्यता एवं सफलता का कसौटी भी यही है कि सीमित रहते हुए भी वे उन समस्त मर्यादाओं को अपने साहस, सहिष्णुता से, साधारणतम भारतीयों की इच्छाओं, एवं मांगों के वास्तविक प्रतिनिधित्व द्वारा पूरी कर सकें। उनके सम्मुख सबसे बड़ा सवाल ही यह है कि भारत के भविष्य का उन्हे निर्माण करना है।

भारतीय विधान-परिषद् के जन्म एवं विकास की कल्पना का सम्बन्ध कांग्रेस के पिछले पन्द्रह वर्षों के इतिहास से है। १६२२ के आरम्भ में महात्मा गांधी ने लिखा था—"हमें यह समझना चाहिये कि ब्रिटिश शासकों के रहते स्वराज्य का क्या अर्थ हो सकता है। यदि भारतवर्ष सचमुच आजादी चाहता है तो उसकी स्वतन्त्रता की घोषणा की योग्यता ही इसका वास्तविक मतलब है। इस पर स्वराज्य ब्रिटिश पार्लियामेंट की खुले हाथों देन नहीं हुई। वह तो भारतवर्ष की मांग की अभिव्यंजना की घोषणा हुई। यह ठीक है वह पार्लियामेंट के एक ऐक्ट द्वारा व्यक्त होगी। लेकिन वास्तव मे यह सिर्फ भारतीयों की घोषित इच्छा की शिष्टाचार पूर्ण स्वीकारोक्ति ही होगी जैसा कि

दक्षिणी अफ्रीका के यूनियन के मामले में हुआ था। ब्रिटिश लोक सभा (House of Commons) इसके लिये एक भी अनावश्यक क्रिया विशेषण तक को परिवर्तित नहीं करेगी। हमारे मामले में यह स्वीकारोक्ति एक सन्धि ही होगी जिसका ब्रिटेन भी एक भागीदार होगा। ऐसा स्वराज्य हमारे समय में तो मिलने वाला नहीं। लेकिन इससे कम की मैंने कल्पना भी नहीं की। जब ऐसा निर्णय होगा तब पार्लियामेंट भारतीयों की अभिलाषाओं को निरकुंशता से नहीं वरन् उसी के स्वतन्त्रता पूर्वक चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा ही स्वीकार करेगी।"

महात्मा गांधी के महान सत्य के प्रयोगों एवं उनके ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ निरन्तर चलते रहने वाले युद्ध के कारण उन्हें विधान निर्माण के तरीकों के विषय मे सोचने का कभी अवसर ही नही मिला। न उन्हें कभी समयाभाव के कारण यह सोचने का मौका मिला कि वे महज इतनी ही सार्वभौम शक्ति प्राप्त करलें जिससे कि देश अपना विधान स्वयं निर्माण करने की ओर अग्रसर हो सके। इस कल्पना को पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने समय पाकर उत्तरोत्तर विकसित किया और वे इसे इस रूप में, जो आज है, भारतीयों के सम्मुख बुद्धिवादी प्रणाली से लाये। विधान निर्माण परिषद के वर्तमान स्वरूप के पीछे पंडित जवाहरलाल नेहरू की अदम्य शक्ति, उत्साह, लगन एव अलौकिक सहिष्णुता अन्तर्हित है। मौजूदा विधान परिषद् का समस्त श्रेय उन्हीं को है।

विधान परिषद् का इतिहास महान क्रान्तियों का एवं स्वाधीनता के गम्भीर प्रयत्नों का इतिहास है। चाहे ये प्रयत्न भीतरी या बाहरी स्वेच्छाचार के ही विरुद्ध क्यों न हुए हों। विधान परिषद् बिना सफल विद्रोह के निर्मित हो ही नहीं सकती। चाहे वह विद्रोह हिंसात्मक हो या अहिंसात्मक। इस प्रकार का सबसे प्रथम और महान विद्रोह इंग्लैंड में १६४६ ई० में हुआ था जिसमें राजा के दैवी अधिकारों का पूर्ण रूप से बहिष्कार किया गया। नियमित विधान निर्मात्री परिषद

की सब से प्रथम चेष्टा अमेरिका के स्वातन्त्र्य युद्ध में १७७६ ई०में की गई थी। उस समय फिलेडेलफिया की कांग्रेस में यह निश्चय किया गया कि "ऐसी सरकार का निर्माण होना जरूरी है जो जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की राय में अपने-अपने प्रान्तों की व आम तौर पर समस्त अमेरिका के संरक्षण और सुख की सर्वोत्तम संचालिका हो।" विधान निर्मात्री परिषद की १७८७ ई० में बैठक हुई और विधान की रूपरेखा लिपिबद्ध की गई। इसके बाद फ्रांस की राज्य क्रान्ति हुई। इस क्रान्ति में राजा और सरदारों की सत्ताएं खूनी विद्रोह द्वारा सफलता पूर्वक समाप्त करदी गईं और जनता के अधिकारों की स्थापना हुई। इस प्रकार हर युद्ध और हर क्रान्ति ने इस विचार धारा को उत्तरोत्तर विकसित किया। प्रथम यूरोपीय महायुद्ध के बाद, आत्म निर्णय का नारा ही युद्ध का नारा हो गया और विधान निर्मात्री परिषद के द्वारा वीमर (Weimar) विधान प्रचलित किया गया। इसी तरह जेक (Cyech) विधान जारी हुआ। १६१७ ई० की फरवरी की रूसी क्रान्ति भी, दूसरे अर्थों में, विधान निर्मात्री परिषद की ही एक उदार पुकार थी। ब्रिटिश साम्राज्य में सीन फीन (Sinn Fein) आन्दोलन जनता द्वारा विधान के निर्माण की ही करीब-करीब मांग कही जा सकती है। दूसरे उपनिवेशों ने भी इसी आधार पर अपने विधान के निर्माण का अधिकार, किसी न किसी रूप में स्थापित अवश्य कर दिया।

भारतवर्ष में भारतीयों द्वारा ही विधान निर्माण की चेष्टा सर्व प्रथम श्रीमती बीसेन्ट की प्रेरणा से हुई। एक राष्ट्रीय सर्वदल सम्मेलन की रूपरेखा बनाई गई पर वह कार्यान्वित न हो सकी। अलबत्ता एक बिल (Bill) तैयार अवश्य किया गया जिसमें भारत के लिये "बाहरी मामलों में औपनिवेषिक स्वराज्य और अन्दरूनी मामलों में स्वराज्य" की रूपरेखा लिपिबद्ध की गई। इस विचार धारा में मामूली सा परिवर्तन तब किया गया जब १६२४ ई० में स्वराज्य पार्टी ने भारतीय व्यव-

स्थापक सभा में अल्पसंख्यकों के उचित संरक्षण और अधिकारों के लिये एक गोलमेज परिषद् की मांग की। साथ ही यह भी मांग की कि भारतवर्ष के लिये ऐसे विधान की स्कीम तैयार की जाय, जो बन जाने पर नयी भारतीय व्यवस्थापक सभा के सामने पेश की जाय और वहाँ से स्वीकृत हो जाने पर ब्रिटिश पार्लियामेंट में पेश होकर कानून की सूरत में जारी कर दी जाय। १६२५ ई० में जब भारतीय व्यवस्थापक सभा के सामने मूडीमैन कमेटी (Mudimann Committee) की रिपोर्ट बहस के लिये पेश हुई तो उक्त मांग साफ-साफ टाल दी गई।

यह विचार धारा उस समय एक कदम और आगे बढ़ी जब तत्कालीन भारत मन्त्री लार्ड बरकनहेड (Birkenhead) ने स्वराजिस्ट पार्टी को यह खुली चुनौती दी कि वे "एक ऐसा विधान तैयार करें जिसके पीछे भारतीय मुख्य दलों की अधिकांश में स्वीकृति हो।" १६२६ ई० तक अखिल भारतीय कांग्रेस की पूर्ण स्वतंत्रता की मांग नहीं थी और न उस समय तक स्पष्ट शब्दों में क्रान्ति की वह भावना ही थी जिसके परिणाम स्वरूप विधान निर्मात्री परिषद का निर्माण हो सके। लेकिन सायमन कमीशन (Simon Commission) के बहिष्कार के साथ ही सर्वदल सम्मेलन (All Parties Conference) के जरिये काग्रेस ने सर्व स्वीकृत विधान बनाने की चेष्टा की। परिणाम स्वरूप देश के सामने वह रिपोर्ट आई जो नेहरु रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध है किन्तु इसे स्वीकार करने के बजाय ब्रिटिश सरकार ने काग्रेस के विरुद्ध १६३० ई० का प्रसिद्ध आन्दोलन छेड़ दिया। १९२६ ई० की प्रसिद्ध लाहौर काग्रेस में भारत ने अपना राजनीतिक ध्येय—पूर्ण स्वतत्रता—घोषित कर दिया।

विधान परिषद् की विचार-धारा ने उस समय एक निश्चित स्वरूप धारण किया जब सरकार ने १६३५ ई० का गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया एक्ट भारत के सिर पर गम्भीर वाद विवाद एवं भयानक विरोध के बाद भी लाद दिया। अप्रेल ७, १६३४ ई० को महात्मा गांधी ने सत्याग्रह

आन्दोलन के बन्द करने और स्वराज पार्टी के पुनर्जीवित करने के प्रस्ताव की सिफारिश की। स्वराज्य पार्टी की रांची में २-३ मई को बैठक हुई जिसमें निम्न प्रस्ताव स्वीकृत हुआ—

"इस कान्फरेन्स की राय है कि सम्राट की सरकार के वे प्रस्ताव जो (White Paper) श्वेतपत्र में सन्निहित हैं, महात्मा गान्धी की उस राष्ट्रीय माग का जो उन्होने कांग्रेस की तरफ से द्वितीय राउन्ड टेबल कान्फरेन्स में की थी, नकारात्मक उत्तर ही नहीं, बरन् उनकी नजर मे वे भारत की राजनीतिक पराधीनता एवं भारतीय जनता के आर्थिक शोषण को बढ़ाने वाले हैं। इसलिये यह कान्फरेन्स निश्चय करती है कि भारत की ओर से इस श्वेत पत्र के प्रस्तावों का हर तरह स्वराज्य पार्टी विरोध और बहिष्कार करे। भारत की अन्य जातियों के साथ यह कान्फरेन्स भारत के लिये आत्म-निर्णय की मांग करती है और इस आत्म-निर्णय के सिद्धान्त के उपयोग के लिये एक ऐसे विधान परिषद (Constituent Assembly) के निर्माण की आवश्यकता जाहिर करती है जिसमे समस्त भारतीय दलों के प्रतिनिधि हों और जो ऐसे विधान का निर्माण करें जो सभी दलो के लोगों को मान्य हो।"

"आगे इस कान्फरेन्स की यह भी राय है कि साम्प्रदायिक मताधिकार द्वारा प्रदत्त प्रतिनिधित्व की प्रणाली एवं अनुपात की स्वीकृति या अस्वीकृति इस समय 'असमय की चीज है।' जब विधान परिषद का निर्माण हो जायेगा तभी इस पर विचार किया जा सकेगा।"

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पटना की बैठक में जो १८ व १९ मई १९३४ ई० को हुई, स्वराज्य पार्टी की इस मांग को स्वीकार कर लिया गया। इसके बाद कांग्रेस पार्लियामेंटरी बोर्ड को निम्न लिखित आधार पर चुनाव लड़ने पड़े।

१—श्वेतपत्र के प्रस्तावों का विरोध और बहिष्कार।

२—भारतीय विधान परिषद का, विधान निर्माण तथा साम्प्रदायिक समस्याओं को सुलझाने के लिये आह्वान।

अब यह समस्या भारत और ब्रिटेन की ही नहीं रही वरन् अब तो यह विधान निर्माण एवं भारतीय विधान परिषद के जरिये भारतीयों द्वारा उसे भारतवर्ष में चालू करने तक व्यापक होगई। कांग्रेस के कुछ नेताओं में यह भी विचार धारा व्याप्त था कि विधान परिषद तो महज सर्वदल सम्मेलन का विस्तृत रुप ही है किन्तु इस विचार धारा का अन्त उस समय हुआ जब फैजपुर अधिवेशन में पण्डित जवाहरलाल नेहरु के जबरदस्त नेतृत्व में २८ दिसम्बर १९३६ ई० को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने भारतीय विधान परिषद की मांग का प्रस्ताव पास कर दिया—

"कांग्रेस १९३५ का गवर्नमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट के पूर्ण बहिष्कार की मॉग को पुनः दुहराती है और साथ साथ ही उस विधान के बहिष्कार को भी पुनः दुहराती है जो भारतीयों की इच्छा के विरुद्ध उन पर लाद दिया गया है। कांग्रेस की सम्मति में इस विधान के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करना, भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम के प्रति धोखेबाजी प्रदर्शित करना है। इस विधान के प्रति सहयोग दिखाना उन करोड़ों भारतीयों का शोषण करना है जो, साम्राज्यवादी पंजे में बरसों से फंसे रहकर निकृष्टतम स्थिति को पहुँच चुके हैं साथ ही इस विधान का समर्थन सरासर ब्रिटिश साम्राज्यवाद को मजबूत करना है। इसलिये कांग्रेस अपने दृढ़ निश्चय को पुनः दोहराती है कि वह इस विधान के मातहत कभी भी नहीं रहेगी और न, इसके साथ किसी प्रकार का सहयोग ही प्रदर्शित करेगी। इसके बजाय वह भारतीय व्यवस्थापिका सभा के भीतर और बाहर इतना तीव्र विरोध करेगी कि एक दिन उसका अन्त ही होजाय। कांग्रेस भारत के राजनीतिक और आर्थिक किसी भी ढांचे को जबरदस्ती किसी के द्वारा निर्माण करने व लादने के विषय में किसी भी बाहरी और भीतरी ताकत को बरदाश्त नहीं कर सकती। यदि किसी ने ऐसा विधान लादा तो भारतीय जनता संगठित रूप में दृढ़ता पूर्वक उसका विरोध करेगी। भारतीय तो उसी

विधान को स्वीकार कर सकते हैं जो उन्हीं के प्रतिनिधियों द्वारा बनाया गया हो और जिसमें एक राष्ट्र के रूप में भारतीय स्वाधीनता को स्वीकार किया गया हो और जो भारतीयों की आवश्यकताओं और और इच्छाओं की पूर्ति को मद्दे-नजर रखकर निर्माण किया गया हो।"

"कांग्रेस उस वास्तविक लोकतन्त्रीय राष्ट्र (True Democracy) की स्थापना चाहती है जिसमे पूर्णतया राजनीतिक शक्तियाँ भारतीय जनता को सौंप दी जायँ, और सरकार क्रियात्मक रूप से उसका अनुगमन करे। ऐसा राष्ट्र तभी बन सकता है जब बालिग मताधिकार (Adult franchise) के आधार पर विधान परिषद का निर्माण हो और उस विधान परिषद को अपने विधान के बारे में अन्तिम निर्णय करने का पूर्ण अधिकार हो।"

इसी विचार धारा को आम जनता की मांग बनाने के लिये कांग्रेस ने इसे प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं द्वारा स्वीकार करवाया—

"इस व्यवस्थापिका सभा की राय में १९३५ ई० का गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट राष्ट्र की अभिलाषाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करता अतः यह कतई असन्तोषप्रद है। क्योंकि इसके निर्माण का उद्देश्य हा भारतीयों को गुलाम बनाये रखने का है। इस व्यवस्थापिका सभा की यह मांग है कि इसे रद्द करार दे दिया जाय और इसके स्थान पर बालिग मताधिकार के आधार पर एक विधान निर्मात्री परिषद द्वारा जिसमें पूर्णतया भारतीयों का ही प्रतिनिधित्व हो, ऐसा विधान बनवा कर जारी किया जाय जिससे भारतीयों को उनकी इच्छाओं और आवश्यकताओं के अनुरूप विकास करने का अवसर प्राप्त हो।"

इसके बाद कांग्रेस ने तीसरा कदम उठाते हुए द्वितीय महायुद्ध के बाद ही तथा ब्रिटिश सरकार की उत्तेजनात्मक चुनौती के परिणाम स्वरूप प्रान्तीय शासन से एकदम हाथ खींच लिया। १९३९ ई० की नवम्बर में कांग्रेस की कार्य-कारिणी ने विधान परिषद के विचार को पुनः विस्तार देते हुए एक प्रस्ताव पास किया—

"यह कमेटी पुनः घोषित करना चाहती है कि ब्रिटेन की नीति से साम्राज्यवादी झलक मिटाने तथा कांग्रेस को पुनः सहयोग प्रदान करने का अवसर देने के विषय मे सोचने के लिये, भारतवर्ष में विधान परिषद का निर्माण अत्यन्त ही आवश्यक है। अंग्रेजों को भारतीय स्वाधीनता की मांग तथा भारतीयों के द्वारा ही उनके विधान निर्माण की माग की स्वीकारोक्ति की घोषणा कर देनी चाहिये। इस कमेटी की धारणा है कि विधान-परिषद ही एक ऐसी लोकतन्त्रीय प्रणाली है जिसके द्वारा एक स्वतंत्र देश के विधान का निर्माण किया जा सकता है। जो लोकतन्त्री शासन एवं स्वतन्त्रता के विषय में विश्वास ही न करे, उसके विषय में सोचना ही व्यर्थ है। वह इस विषय में कोई भी मार्ग ग्रहण कर सकता है। यह कार्य-कारिणी समिति विश्वास करती है कि साम्प्रदायिक समस्या तथा अन्य कठिनाइयों के हल करने के लिए विधान परिषद की स्थापना ही सबसे ज्यादा हितकर है। यह कमेटी ऐसा विधान निर्माण करने में समर्थ है जिसमें तमाम स्वीकृत अल्प संख्यकों के अधिकार उनकी इच्छानुसार सुरक्षित रहेंगे। अल्प सख्यको की वे समस्याएं जिनका आपस में कोई हल नहीं निकल सकेगा, उन्हे पच के सुपुर्द कर दिया जावेगा। विधान परिषद का चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर होगा किन्तु उन अल्प सख्यकों के लिये, जो मौजूदा पृथक निर्वाचन को ही पसन्द करते हैं, वही तरीका अपनाया जावेगा। केन्द्राय व्यवस्थापिका सभा (Central Legislative Assembly) मे उनकी जो संख्या है उसी से उनकी शक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है।

अगले दो वर्षों में विधान-परिषद की कल्पना का काफी विरोध हुआ लेकिन अधिकृत स्वार्थों के विरोध के बावजूद उदार दल ने विधान परिषद का इसलिये विरोध किया कि उन्हें उग्र लोकतन्त्रीय प्रणाली में विश्वास नहीं है। मुस्लिम लीग के विरोध का कारण यह था कि भारतवर्ष में बालिग मताधिकार एकदम अव्यवहारिक है और

साथ ही उन्हें बहु संख्यकों के मुकाबले में मुस्लिम स्वार्थों के नष्ट होजाने का सबसे बड़ा भय था। १९४० ई० की मार्च में पाकिस्तान के प्रस्ताव के पास हो जाने पर मुस्लिम लीग ने कांग्रेस की इस विचार धारा को थोड़ा बहुत स्वीकार किया किन्तु मतभेद यह रहा कि कांग्रेस देश के लिये एक विधान-परिषद चाहती थी और लीग दो की माग कर रही थी।

अल्प संख्यकों की आशंकाओं का कांग्रेस ने कितनी ही बार समाधान किया। कांग्रेस ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि आम जनता का चुनाव बालिग मताधिकार के सिद्धान्त पर होगा और यदि अल्प संख्यक अपना चुनाव पृथक निर्वाचन के आधार पर चाहें तो वे वैसा ही कर सकते हैं और इस प्रकार भारत के भावी विधान निर्माण के कार्य में उनका भी उचित हाथ रहेगा। उनकी खास समस्याओं के विषय में यह निश्चय किया गया कि जहाँ तक उनके अपने रीति रिवाजों और संस्कृति तथा आम समस्याओं का प्रश्न है वहाँ वे अपने ही प्रतिनिधियों के तीन चौथाई बहुमत द्वारा उन्हें निबटा सकते हैं। यदि किसी खास मामले में कोई निर्णय न हो सके तो उन्हें वह मामला स्वतन्त्र पत्रों के, जैसे लीग आफ नेशन्स (League of Nations) या हेग (Hague) के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के सम्मुख रखकर निर्णय लेना चाहिये।

ब्रिटिश सरकार का विधान परिषद सम्बन्धी हर समय परिवर्तित होते रहने वाला रुख ही भारत में ब्रिटिश नीति का सच्चा इतिहास है। १९४० ई० की ८ अगस्त के अपने वक्तव्य में लार्ड लिनलिथगो ने घोषित किया था कि "भारतीयों की नवीन विधान निर्माण संबंधी जिम्मेदारी स्वयं उन्हीं की है, इस भारतीय इच्छा से सम्राट की सरकार की सहानुभूति है। ब्रिटिश सरकार भी चाहती है कि भारतीय इस इच्छा को पूर्ण रूप से क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करे, क्योंकि ग्रेट ब्रिटेन और भारत के बीच के दीर्घ कालीन सम्बन्धों को देखते हुए ब्रिटिश सरकार भी अपने वचनों का पालन करने को उत्सुक है।

बृटिश सरकार की भी यही इच्छा है कि भारतीय अपनी जिम्मेदारियों से पीछे नहीं हटें। बृटिश सरकार ने मुझे यह घोषित करने का अधिकार दिया है कि महायुद्ध के खत्म होने के साथ शीघ्र ही, भारत के राष्ट्रीय प्रतिनिधियों का जहाँ तक हो सके एक दल निर्माण किया जाय, जिससे कि नवीन विधान की रूप रेखा के विषय में विचार किया जा सके। सरकार इस कार्य को शीघ्र ही खत्म कर देने मे जहाँ तक उसकी सामर्थ्य में है सहायता देने को तैयार है और वह इससे सम्बन्धित हर तरह के मामला में भी काफी मदद पहुँचाने को उद्यत है।"

लार्ड लिनलिथगो की इस घोषणा से देश को कोई भी लाभ नहीं हुआ। बल्कि देश ने इस घोषणा को निरर्थक और बेहूदा बताया। लेकिन १९४२ ई० की मार्च मे क्रिप्स (Cripps) ने देश के सम्मुख जो प्रस्ताव रखे वे विधान-परिषद सम्बन्धी कल्पना को थोड़ी बहुत प्रोत्साहन देने वाले माने गये। उन प्रस्तावों में महायुद्ध के बाद ही विधान-परिषद की स्थापना सम्बन्धी रूपरेखा प्रदर्शित की गई थी। उसकी विशेष बातें इस प्रकार हैं :—

अ—"महायुद्ध के खत्म होते ही, बाद में दी गई रीति के अनुसार, शीघ्र भारत में एक चुना हुआ दल स्थापित किया जायेगा, जिसके समक्ष भारत के नवीन विधान बनाने का कार्य रहेगा।"

ब—"ऐसी भी सुविधाएँ रखी जायेंगी जिससे भारतीय विधान के निर्माण में रियासतें भी भाग ले सकें।"

स—"सम्राट की सरकार इस प्रकार बने हुए विधान को निम्न शर्तों के साथ जारी करने को बाध्य रहेगी—

क—किसी भी भारतीय प्रान्त को अलग रहने या शामिल होने का पूरा अधिकार रहेगा।

ख—विधान परिषद और सम्राट की सरकार के बीच एक सन्धि-पत्र लिखा जायेगा और उस पर दोनों के दस्तखत होंगे।···

ग—उसमें ऐसी भी सुविधाएँ रहेंगी जिससे जाति सम्बन्धी और धार्मिक अल्पसंख्यकों को संरक्षण प्राप्त होगा।

घ—विधान निर्माण करनेवाला परिषद् इस प्रकार निर्मित होगा—प्रान्तीय चुनावों का परिणाम ज्ञात हो जाने पर, जो कि महायुद्ध की समाप्ति के बाद आवश्यक है, शीघ्र ही प्रान्तीय धारा (Provincial Legislature) सभाओं के समस्त प्रतिनिधियों को एक चुनाव क्षेत्र माना जाकर उन्हीं में से आनुपातिक निर्वाचन के (Proportional Reprsentation) आधार पर विधान-परिषद् के सदस्यों का निर्वाचन होगा। यह नवीन चुनाव, समस्त प्रतिनिधियों की संख्या का दशमांश होगा। भारतीय रियासतें भी इसमें अपने प्रतिनिधि भेजेंगी। उनका निर्वाचन भी जनसंख्या के अनुपात पर ही होगा और उन्हें भी ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधि की तरह ही अधिकार प्राप्त होंगे।"

क्रिप्स प्रस्ताव के विधान सम्बन्धी भाग का अपने अपने दृष्टिकोणों से कांग्रेस, मुस्लिमलीग, हिन्दू महासभा तथा देश के अन्य दलों ने गहरा विरोध किया। कांग्रेस ने प्रधानतया 'प्रतिनिधित्व में नाकाबिल तत्वों के प्रवेश" तथा "भारतीय रियासतों के ९ करोड़ लोगों को साफ छोड़ देने" तथा किसी प्रान्त के प्रवेश में रुकावट के आश्चर्य जनक सिद्धान्त की पूर्व स्वीकृति" के बारे में घोर विरोध किया। हिन्दू महासभा ने कम्यूनल अवार्ड (Communal Award) के आधार पर प्रवेश निषिद्ध और चुनाओं के विषय में विरोध किया जो अन्तर्राष्ट्रीय तो नहीं किन्तु लोक तन्त्र के तात्विक सिद्धान्तों के आधार के खिलाफ है। लीग ने "एक ही भारतीय गुट" के आधार पर क्रिप्स प्रस्ताव का विरोध किया। लीग का कहना था कि "एक से ज्यादा गुटों की कल्पना का बहिष्कार स्वप्निल है—अव्यवहार्य्य है। आनुपातिक निर्वाचन का मतलब होगा मुसलमानों के स्वार्थों का पूर्णतया

विनाश। प्रथम निर्वाचन द्वारा मुसलमानों का चुनाव ही मुसलमानों का सच्चा प्रतिनिधित्व करेगा और यही सबसे बेहतर तरीका होगा। विधान परिषद में बहुमत के आधार पर मुसलमानों का निर्णय विधान परिषद् के बहुसख्यक दल की दया पर ही रहेगा। इस परिषद में मुसलमान प्रायः कुल २५ प्रतिशत ही रहेंगे। साथ ही लीग ने "भारतीय प्रान्तों की प्रवेश निषिद्धि के तरीके और प्रणाली, जो क्रिप्स प्रस्ताव के अनुसार "शासन व्यवस्था के आधार पर बनाई गई है, तर्क के आधार पर नहीं"—का भी घोर विरोध किया।

इसके बाद सप्रू कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। यह रिपोर्ट बहुत ही परिश्रम के साथ तैयार की गई थी। इस रिपोर्ट में पाकिस्तान को पूर्ण अव्यवहारिक बताते हुए क्रिप्स प्रस्ताव के कुछ सुझावों को निरर्थक बताया गया। परन्तु इसमें क्रिप्स के उन प्रस्तावों की कुछ सशोधनों के साथ सिफारिश की गई जिनका सम्बन्ध विधान निर्मात्री परिषद से है। उस समय तमाम भारतीय नेता जेल में थे। मुस्लिम लीगी क्षेत्रों में इस रिपोर्ट का स्वागत नहीं हुआ। आश्चर्य है कि जब इस रिपोर्ट मे हिन्दू मुस्लिमों के, परिगणित जातियों की सख्या को छोड़कर, समान अनुपात पर विशेष जोर दिया गया है, फिर मुस्लिम लीग ने किस आधार पर इसका विरोध किया?

मार्च १९४६ ई० में मि० एटली ने अपना वक्तव्य दिया कि भारत की स्वतन्त्रता की माग को स्वीकार किया जाता है तथा ब्रिटिश सरकार का यह दृढ़ निश्चय है कि वह स्वतत्रता की प्राप्ति के लिये भारतीयों की यथाशक्ति सहायता करेगी। अल्पसख्यकों को बहुसंख्यकों की स्वतंत्रता प्राप्ति के मार्ग में रोड़े नहीं अटकाने देगी, चाहे फिर अल्पसंख्यकों का मसला कितना ही महत्वपूर्ण क्यों न हो?"

इस वक्तव्य से देश ने फिर करवट बदली। साथ ही ऐटली ने यह भी घोषित किया कि "तीन प्रमुख मन्त्रियों का (Cabinet Mission) लार्ड पैथिक लारेन्स की अध्यक्षता में भारत जायेगा और उनके साथ

सर स्टैफर्ड क्रिप्स और ए० वी० एलैग्जैन्डर भी जायेंगे। ये तीनों मंत्रिगण भारतवर्ष में पहुँच कर कांग्रेस व मुस्लिम लीग के बीच समझौता कराने की चेष्टा करेंगे और जहाँ तक हो सकेगा, भारत के प्रतिनिधियों की एक अस्थायी सरकार कायम करेंगे और भारतीयों की मरजी के अनुसार ही एक विधान बनाने वाली परिषद् की योजना भी कार्यान्वित करने की चेष्टा करेंगे।" वक्तव्य में यह भी कहा गया था कि "इसके बाद वे भारत और ब्रिटेन के बीच एक सन्धि भी कराने के लिये प्रयत्नशील होंगे।"

इस मन्त्रिमण्डल मिशन के भारत में आजाने के बाद दिल्ली में महीनों नेतागणों से लम्बी मुलाकातें हुईं। इसके उपरान्त कांग्रेस और लीगी नेताओं से भी मंत्रि मिशन ने शिमला में गंभीर परामर्श किया, परन्तु इस सम्मेलन से कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में दोनों प्रमुख दलों के नेतागणों से तै करके एक मध्यवर्ती घोषणा मंत्रि मिशन ने १६ मई १९४६ ई० को की। इस योजना में पाकिस्तान को अव्यवहार्य बताया गया। इस घोषणा में इसके सिवाय आवश्यक एवं मर्यादित शक्ति से सम्पन्न संघ (Federation) अस्थायी सरकार व दीर्घ कालीन योजना, रियासतों की समस्या, प्रान्तों का गुटों के अनुसार वर्गीकरण, बालिग मताधिकार की प्रधानता आदि पर प्रकाश डाला गया। इसके सिवाय विधान परिषद् के चुनाव, प्रान्त की आबादी के १० लाख के पीछे एक को निर्वाचित किये जाने की घोषणा की गई। कांग्रेस व लीग—दोनों प्रमुख दलों ने इस घोषणा में गलतियाँ बताईं। कांग्रेस ने केन्द्रीय सरकार की मर्यादित शक्ति एवं गुटबन्दी की समस्या का विरोध किया व लीग ने पाकिस्तान की अव्यवहारिकता की तीव्र निन्दा की।

इसका आशय यह नहीं कि घोषणा सभी दृष्टियों से गलतियों से भरी हुई थी। घोषणा के अनुसार बनाई जाने वाली विधान परिषद् लोकतन्त्रीय आबादी एवं आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्तों पर

आहत थी। साम्प्रदायिक मसलों के अलावा सभी मामलों में निर्णय साधारण बहुमत पर ही लोकतन्त्रीय प्रणाली पर रखा गया। मुसलमानों के लिये सब, विधान परिषद् एवं व्यवस्थापक सभाओं में भी संरक्षण (Safe guards) नियुक्त किये गये। भारतीयों का बहुमत केन्द्र एवं प्रान्तों के गुट के विचारों का स्वागत करता है किन्तु रियासतों का चुनाव प्रान्तों की प्रणाली पर नहीं रखा गया। यही घोषणा पत्र में एक भयंकर कमी है। विधान-परिषद की तमाम सदस्यता भारतीय रखी गयी और उसमें एक भी अभारतीय को स्थान नहीं दिया गया। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि विधान परिषद् के कार्य में ब्रिटिश सरकार की ओर से कोई भी रुकावट नहीं डाली जायेगी। विधान परिषद स्वतन्त्रता पूर्वक अपना विधान निर्माण करेगा।

मंत्रि मण्डल के इन तीन सदस्यों की योजना के अनुसार बृटिश प्रान्तों से विधान-परिषद् के लिये सदस्यों का चुनाव हुआ। प्रान्तीय धारा सभाओं ने इस चुनाव में निर्वाचन क्षेत्र (Constituency) का काम किया। निर्वाचित सदस्यों के चुनाव लिए पर्याप्त स्वतन्त्रता रक्खी गई थी अतः धारा सभा के सदस्यों ने कांग्रेस की इच्छा के अनुसार इस बात की कोशिश की कि विधान परिषद् में सब प्रमुख भारतीय आजायें। चुनाव में पृथक निर्वाचन का सिद्धान्त ही माना गया। अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्र से जितने प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित थी, उतने वोट प्रत्येक सदस्य को देने का अधिकार था। इस प्रकार प्रान्तीय धारा सभाओं के विशेष अधिवेशन बुलाकर नवम्बर सन् १९४६ ई० तक बृटिश प्रांतों में निर्वाचन का काम समाप्त किया गया। विधान-परिषद् का प्रथम अधिवेशन ९ दिसम्बर १९४६ ई० को प्रारम्भ हुआ।

भारतीय विधान-परिषद के दो ऐतिहासिक अधिवेशन अभी तक सफलता पूर्वक हो चुके हैं जिनमें परिषद की आरंभिक सभी कार्रवाइयाँ हो चुकी हैं। विधान-परिषद के निर्माण एवं

आज तक की पूर्ण सफलता में सर्वोपरि हाथ पंडित जवाहर लाल नेहरू का है। इन दिनों वे भारत सरकार के उपाध्यक्ष (Vice-President, Interim Govt.) हैं। दुर्भाग्य की बात है कि पहिले मन्जूर करके भी मुस्लिम लीग विधान परिषद में सम्मिलित नहीं हुई। कई कारणों के अलावा उसके न आने का मुख्य कारण है आसाम की समस्या। मुस्लिम लीग आसाम को "सी" गुट के अन्दर रखकर ही उसके विधान निर्माण का काय करना चाहती है, किन्तु आसाम को मुस्लिम लीगी बहुमत के वशीभूत रहने मे पूरा खतरा है।

लीग की नाराजी का मुख्य कारण—

आसाम इन दिनों प्रसिद्धि का प्रधान केन्द्र इसलिये बन गया है कि मुस्लिम लीग उसे पूर्वीय पाकिस्तान में सम्मिलित करने की जोरदार मांगकर रही है। लेकिन ऐसा सोचना गलत होगा कि इसके सिवाय आसाम की प्रसिद्धि का कोई कारण ही नहीं है। एक स्थल पर आसाम के गर्वनर सर एन्ड्रयू क्लो ने कहा है कि "आसाम की तरह भारत के किसी भी प्रान्त मे जातियों का इतना जबरदस्त मिश्रण नहीं है फिर भी लोग यहाँ की तरह कहीं भी इतने मेल-जोल के साथ रहते नही पाये जाते।" यह कोई साधारण विशेषता नहीं है। और यह सदियों के सम्मिलित रहन-सहन, आचार, विचार आदि से ही पैदा हुई है।

परन्तु यह प्रान्त भारत के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा कई प्रकार से पिछड़ा हुआ है। यही कारण है कि उसे हर बात के लिए केन्द्रीय सरकार का मुखापेक्षी रहना पड़ता है। आय के साधनों की कमी के के कारण ही यह प्रान्त अन्य प्रान्तों की तरह विकसित एव प्रगतिशील नहीं हो सका। आसाम में न तो हाईकोर्ट है, न मेडिकल कालेज है और न कोई विश्वविद्यालय।

आसाम की मजदूर समस्या भी बड़ी पेचीदी है। यहाँ स्थानीय मजदूर प्राप्त होना संभव न होने से ही अधिकतर पूर्वी बंगाल, खास कर मैमनसिंह जिले के मुसलमान ही हजारों की संख्या में आकर यहाँ बसते जारहे हैं।

१६४० ई० की मार्च में अखिल भारतीय मुस्लिमलीग ने 'पाकिस्तान' प्रस्ताव स्वीकार किया। इस प्रस्ताव को भारत के किसी भी दल ने पसन्द नहीं किया लेकिन जब राजा जी के सुझाव पर १६४४ ई० में इस प्रस्ताव पर गाधी जी और जिन्ना साहब की बातचीत हुई तो यह स्पष्ट होगया कि विवाद की असली जड़ आसाम ही है। १६४४ ई० की २५ सितम्बर को अपने पत्र मे जिन्ना साहब ने आसाम पर पाकिस्तानी प्रभुत्व बताया।

इसी अरसे में बंगाल व आसाम की मुस्लिम लीगी सरकारों ने आसाम व बंगाल को पूर्वीय पाकिस्तान में सम्मिलित करने की अपार चेष्टा की। इस समय के आसाम के गवर्नर सर राबर्ट रीड ने सदाउल्ला मंत्रि मण्डल की यह कोशिश रोक दी। गवर्नर ने अपना पद त्याग करने के बाद एक पत्र में लिखा था "जो विभिन्न जातियाँ आसाम में परम्परा में बसी हुई हैं, उनको जबरदस्ती हटाकर दल के दल बाहरी मुसलमान स्वयं आबाद होते जा रहे हैं। वे मुसलमान मैमन सिंह जिले से आरहे हैं। इस आगमन से मुसलमानों को बेहद प्रसन्नता हो रही है, क्योंकि इससे उनकी पाकिस्तानी नीति को सफलता प्राप्त होती है।"

"खण्डित भारत"—डा० राजेन्द्र प्रसाद

इस प्रकार पुरानी जातियों को आसाम से निकालते रहने के बाद भी सिलहट जिले को छोड़ कर प्रायः समस्त प्रान्त में मुसलमान अल्प संख्यकों में ही हैं। सिलहट जिले में मुसलमान ६० प्रतिशत हैं। सिलहट सम्पूर्ण प्रान्त का दशमांश है और इस जिले की आबादी समस्त प्रान्तीय आबादी की ३१ प्रतिशत होती है।

इसके बाद जब मंत्रि मण्डल मिशन ने गुटबन्दी (Grouping)

की घोषणा की तो उसने आसाम व बंगाल को मिलाकर एक गुट (Group) बना दिया। इससे मुस्लिम लीग की मरजी पूरी हो गयी। किन्तु सोचने की बात है कि श्री जिन्ना ने पूरा आसाम प्रान्त कभी नहीं मांगा। श्री जिन्ना ने अपने प्रस्ताव द्वारा तो सिर्फ प्रान्तों के नये सिरे से सीमा निर्धारण की ही ख्वाहिश की थी। पर मिशन ने वास्तविकता पर पर्दा डालकर उसे पूरा प्रान्त ही सौंप दिया। यह ठीक है कि घोषणा के अनुसार आसाम को अपने गुट से अलग हो जाने का अधिकार है और वह भी तब जब कि प्रान्तीय विधान "सी" गुट के लिए नयी प्रस्ताविक प्रान्तीय धारा सभा द्वारा जारी कर दिया जाय। लेकिन बंगाल तो "सी" गुट में महत्वपूर्ण प्रान्त है और उसकी स्थिति इस तरह की है कि वह आसाम के विधान को निर्माण करने में अपना प्रभुत्व काम में ला सकता है। इससे कई ऐसी कठिनाइयाँ सामने आगई हैं जिसका सामना करना आसाम के लिए आवश्यक हो गया है।

यह ठीक है कि आसाम को "सी" गुट से अलग हो जाने का पूर्ण अधिकार है लेकिन उसे किसी दूसरे गुट में शामिल हो जाने का अधिकार नहीं है। उसे "ए" गुट में शामिल होने का हक हासिल नहीं है।

आसाम की मर्दुम शुमारी के कमिश्नरों ने आसाम धारा सभा के चुनाव के लिए पहिले से ही ऐसे नियमों का निर्माण किया है जो अत्यन्त ही भयावह है। बंगाल की मुस्लिम लीग भी अपनी शक्ति का प्रसार करने पर उतारू है, फिर भी "सी" गुट में वह शक्ति नहीं है कि वह गैर रजामन्दी से आसाम को अपने में शामिल कर सके। और उसे अपने प्रभुत्व में रख सके। आसाम में हिन्दू, मुसलमान व अन्य जातियाँ आबाद हैं। मिशन के भारत में आने के साथ ही वहाँ की प्राचीन जातियों ने खण्डित भारत के विरोध की घोषणा कर दी थी। यदि पाकिस्तान बनाने का ही निर्णय हो तो उन्होंने पहिले से ही यह

निर्णय कर दिया था कि वे अपना स्वतन्त्र राष्ट्र कायम रखेंगे। जिसके अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध ब्रिटिश उपनिवेशों के समान हो रहेंगे।

मॉरिस ह्यूलेट से लेकर बेरियर एलविन तक के वंशानुगत नेताओं का कथन है कि ये आदि वासी हिन्दू सामाजिक एवं धार्मिक प्रणाली के ही अंग हैं। इस प्रकार आसाम दो भागों में बंट गया है। हिन्दुओं और मुसलमानों में। मुसलमान लीग के दबाव के कारण अलग हो जाना चाहते हैं।

मुस्लिम लीग आसाम को पाकिस्तानी क्षेत्र में या "सी" गुट में क्यों मिलाने के लिये उत्सुक है, इसके ४ मुख्य कारण हैं—

१—पूर्व में बंगाल के मुसलमानों को फैलाने के लिए आसाम प्राकृतिक स्थान है।

२—आसाम के आदि वासी अशिक्षित, असंस्कृत एवं राजनीतिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्ग में से हैं। इसलिए भारतीयों की दृष्टि से गिरी हुई जातियों में से हैं।

३—आसाम के आदि वासियों के लिये जब कोई स्कीम बने तो बाहर से आकर बसे हुए हिन्दू मजदूरों को उसमें सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिये।

४—आसाम के जंगली व खनिज पदार्थों की बहुतायत के कारण ही पूर्वीय पाकिस्तान में आसाम का मिलाना जरूरी है।

कोई भी भारतीय जो अपने देश का हितचिन्तक है, इन ४ कारणों की वजह से ही आसाम को पाकिस्तानी क्षेत्र में शामिल कर देने पर राजी नहीं हो सकता। वास्तव में यह मूर्खतापूर्ण प्रस्ताव है कि मुसलमानों के अलावा वहाँ जितनी भी बस्ती है, वह उसकी मरजी के खिलाफ लीगी नियंत्रण में रहे। इसके अलावा यदि बाहर के बसाये हुए हिन्दू मजदूर किसी भी स्कीम से बाहर रखे जाते हैं तो बाहर के मुसलमान जो वहाँ जाकर बस गये हैं उनकी स्कीमों में कैसे सम्मिलित किये जा सकते हैं? और उन्हें वहाँ के ही निवासियों की

तरह कैसे स्वीकार किया जा सकता है ? जिन्ना साहब की इस खब्त को भला कौन स्वीकार कर सकता है कि बाहर से आये हुए सभी मुसलमान आसाम के नागरिक स्वीकार किये जायँ किन्तु बाहर के आये हुए सभी हिन्दू नागरिकता की सुविधाओं से वंचित रखे जायँ।

मुस्लिम लीग अपनी बँधी हुई रूढ़िगत परिपाटी का ही आसाम में प्रयोग कर रही है। उसका पहिला दावा है कि सभी मुसलमान एक राष्ट्र के रूप में हैं। शेष सभी जातियाँ बाहर से आकर बसी हुई होने के कारण उस प्रान्त में अपना कोई भी हक नहीं रखतीं। दूसरे यह कि मुस्लिम लीग ही आसाम की हकदार जनता है, अतः दूसरो पर प्रभुत्व रखने का उसे अधिकार है। तीसरे यह कि बाहर से आये हुए मुसलमानों की बेशुमार सख्या के बसाने के लिए उनका एक स्वतन्त्र ही इलाका होना चाहिये।

सचाई तो यह है कि आसाम के भविष्य के जिम्मेदार भी आसामी ही हैं। यदि इसी मूल सिद्धान्त की रक्षा में आसामी असफल होते हैं तो निश्चय ही उनका भविष्य अन्धकारमय है। अंग्रेजों को इसमें कोई भी दिलचस्पी नही है। क्योंकि ताकत के सिपुर्द कर देने के बाद कुछ भी हो, उन्हे उससे क्या ? यह तो भारतीयों को ही देखना है कि उनके पारस्परिक सम्बन्ध न्यायपूर्ण हों।

आसाम ने कोई नई माँग पेश नहीं की है। वह सिर्फ अपनी आवाज पहिले से ही बुलन्द इसलिये कर रहा है कि पाकिस्तान का स्वप्न देखने वाले उसके स्वार्थों का सत्यानाश न कर डालें। देखने और कहने में तो यह बहुत ही छोटी-सी बात है पर पारस्परिक शांति के लिये सबसे महत्वपूर्ण है।

इस तरह आसाम की समस्या बहुत ही गम्भीर है, जो न तो अलग अलग इलाके कायम कर देने से दूर होगी और न आसाम को बंगाल के गुट मे मिला देने से ही हल हो सकती है। यह समस्या तो संयुक्त भारत के साथ के सम्बन्ध से ही दूर हो सकती है। आसाम

अकेला रहकर स्वतन्त्र नहीं रहेगा, इसलिये उसे बंगाल के प्रभुत्व में रहना पड़ेगा—यह दलील नितान्त थोथी है।

ऐसे लक्षण दिखाई दे रहे हैं कि यदि आसाम बंगाल के अधीन प्रान्त के रूप में गुट में शामिल हो जायेगा तो उसमें वह पारस्परिक प्रेम भाव नहीं रह सकेगा। इसके बजाय उसको संगठित भारत के साथ रहने से सबसे महत्त्वपूर्ण लाभ यह होगा कि आज आसाम के सभी दलों में जो पारस्परिक प्रेम है, वह और भी स्थायी हो जायेगा और रहे-सहे भेद भाव भी हमेशा के लिये नष्ट हो जायेंगे।

विधान परिषद में दल-शक्ति

विधान परिषद के चुनाव में कांग्रेस का विशेष बहुमत रहा विधान परिषद के २८९ सदस्यों में से कांग्रेस को २०५ सीटें प्राप्त हुईं। २९६ सीटों का चुनाव समस्त प्रान्तों में जुलाई १९४६ में समाप्त हो गया। ९३ सीटें रियासतों के लिये अलग ही नियत हैं, जिनका चुनाव बाद में होगा। अँग्रेजी भारत में चुनाव की स्थिति निम्न रही।

कांग्रेस—२०५ सदस्य
मुस्लिमलीग—७३ सदस्य
स्वतन्त्र (साधारण)—११ सदस्य
स्वतन्त्र मुसलमान—३ सदस्य
सिख—४ सदस्य
कुल जोड़—२९६ सदस्य

२१० साधारण या आम सीटों में से कांग्रेस की १९९ सीटों पर विजय हुई। कांग्रेस स्वतन्त्र ११ सीटों को प्राप्त नहीं कर सका। दिल्ली, अजमेर, मेरवाड़, कुर्ग और बलूचिस्तान की ४ सुरक्षित सीटों में से कांग्रेस ने ३ सीटें हासिल कीं। दिल्ली और अजमेर मेरवाड़ा का प्रतिनिधित्व वही सदस्य करेंगे जो उक्त प्रान्तों से केन्द्रीय एसेम्बली में निर्वाचित हुए हैं।

मुसलमानों की ७८ सीटें सुरक्षित थीं, इनमें से ३ सीटों पर कांग्रेस की विजय हुई। मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, अब्दुल-गफ्फार खाँ, और रफीअहमद किदवई इन तीनों सीटों पर चुने गये। स्वतन्त्र मुसलमानों की ३ सीटों में से २ स्वतन्त्र मुसलमान फजलुलहक (बंगाल) और सर मुजफ्फरअली खाँ कालिजबक्श (पंजाब के सम्मिलित दल के सदस्य) चुनाव में जीते। शेष ७३ सीटों पर मुस्लिम लीग ने विजय प्राप्त की।

कम्यूनिस्ट पार्टी की ओर से बंगाल में सिर्फ एक सदस्य सोमनाथ लाहिड़ी का निर्वाचन हुआ।

विधान निर्मात्री परिषद के "बी" गुट में लीग का पर्याप्त बहुमत है। "सी" गुट में भी काम चलाऊ बहुमत है ही किन्तु "ए" गुट में १६४ कांग्रेसी १६ लीगी व ७ स्वतन्त्र सदस्य हैं। "सी" गुट में ३५ लीगी और ३२ कांग्रेसी सदस्य हैं। "सी" गुट में डाक्टर अम्बेडकर, फजलुलहक और सोमनाथ लाहिड़ी—ये तीन स्वतन्त्र सदस्य हैं। इन्हीं तीन सदस्यों के रुखों पर "सी" गुट का भविष्य अवलम्बित है। चुनाव के कुछ समय बाद ही फजलुलहक ने मुस्लिम लीग को अपना लिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि देश की दोनों प्रमुख संस्थाओं, कांग्रेस व लीग के चोटी के नेता विधान निर्मात्री परिषद में विद्यमान हैं। इनके सिवाय देश के कुछ चोटी के विधान शास्त्री व वकील भी परिषद में मौजूद हैं। देश का विधान देश के सर्वोत्तम महान व्यक्तियों द्वारा ही निर्मित हो, इस उद्देश्य को मद्दे नजर रखकर कांग्रेस ने अपने दल के बाहर के प्रमुख व्यक्तियों को भी चुनाव में लिया है।

महात्मा गांधी यद्यपि चुनाव से अलग रहे फिर भी विधान निर्मात्री परिषद को उनका मूल्यवान परामर्श हमेशा ही उपलब्ध होता रहेगा। सरतेजबहादुर सप्रू को, जिनके चुनाव के लिये कांग्रेस बहुत ही उत्सुक रही, उनकी अस्वस्थता एवं वृद्धावस्था के कारण छोड़ देना

पड़ा। इसी प्रकार डाक्टर जयकर के इंग्लैण्ड में होने के कारण उनका भी सदस्य पत्र दाखिल नहीं किया जा सका किन्तु बाद में उनके लिये एक स्थान सुरक्षित कर दिया गया।

"ए" गुट

	कांग्रेस	मुस्लिमलीग	साधारण	स्वतन्त्रमुसलमान
संयुक्त प्रांत	४५	७	७	×
मध्य प्रांत	१६	१	×	×
मद्रास	४५	४	×	×
बम्बई	१६	२	×	×
बिहार	२८	५	×	×
उड़ीसा	८	×	×	×
दिल्ली	१	×	×	×
कुर्ग	१	×	×	×
अजमेर मेरवाड़ा	१	×	×	×
कुल जोड़	१६४	१९	७	×

"बी" गुट

	कांग्रेस	आम	मुस्लिमलीग	स्वतंत्र मुसलमान	सिख
पंजाब	६	२	१५	१	४
सिंध	१	×	३	×	×
सीमान्तप्रदेश	२	×	१	×	×
बलूचिस्तान	×	×	×	१	×
कुल जोड़	९	२	१९	२	४

"सी" गुट

	कांग्रेस	आम	मुस्लिम लीग	स्वतंत्र मुसलमान
बङ्गाल	२५	२	३२	१
आसाम	७	×	३	×
कुल जोड़	३२	२	३५	१

नीचे तीनों गुटों के समस्त सदस्यों के नामों की पूरी सूची दी जा रही है—

"ए" गुट

संयुक्त प्रान्त—

कांग्रेस—१ पण्डित जवाहर लाल नेहरू २ श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ३ पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त ४ सर एस० राधाकृष्णन ५ आचार्य जे० बी० कृपलानी ६ पंडित कृष्ण दत्त पालीवाल ७ सरदार जोगेन्द्र सिंह ८ श्री० ए० धर्मदास ६ श्रीमती सुचिता कृपलानी १० श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ११ श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी १२ श्रीमती कमला चौधरी १३ श्री दयाल दास भगत १४ श्री धरम प्रकाश १५ श्री मसुरियादीन १६ श्री सुन्दर लाल १७ श्री भगवान दीन १८ श्री प्रागीलाल १९ श्री दामोदर स्वरूप सेठ २० श्री गोविन्द मालवीय २१ श्रीप्रकाश २२ श्री बालकृष्ण शर्मा २३ श्री मोहन लाल सक्सेना ३४ श्री रामचन्द्र गुप्त २५ श्री महेश्वर दयाल सेठ २६ श्री हरगोविन्द पन्त २७ आचार्य जुगलकिशोर २८ श्री हरिहर नाथ शास्त्री २९ श्री शिब्बनलाल सक्सेना ३० डाक्टर कैलाशनाथ काटजू ३१ श्री अजीत प्रसाद जैन ३२ श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी ३३ श्री फीरोज गाधी ३४ श्री कमलापति त्रिपाठी ३५ श्री० आर० वी० धुलेकर ३६ श्री अलगू राय शास्त्री ३७ श्री फूलसिंह ३८ श्री वैंकटेश नारायण तिवारी ३९ श्री गोपीनाथ श्रीवास्तव ४० श्री गोपाल नारायण सक्सेना ४१ श्री श्री बंशीधर मिश्र ४२ पंडित हृदय नारायण कुंजरू ४३ श्री खुरशीद लाल ४४ श्री जस्पत राय कपूर।

स्वतन्त्र (साधारण)—१राजा जगन्नाथ वर्ल्लसिंह २ सर ज्वाला प्रसाद श्रीवास्तव ३ श्री पद्मपत सिंहानिया।

कांग्रेस (मुसलमान)—१ श्री रफी अहमद किदवई।

मुस्लिमलीग—१ चौधरी खलीकुज्जमा २ नवाब मुहम्मद इस्मा-

इलखाँ ३ महाराज कुमार अमीर हैदरखाँ ४ बेगम ऐजाज रसूल ५ एस० एम० रिजवानुल्लाह ६ अजीज एहमदखाँ ७ मौलाना हसरत मोहानी ।

मध्यप्रान्त और बरार—

कांग्रेस—१ पंडित रविशङ्कर शुक्ल २ सेठ गोविन्द दास ३ सर हरी सिंह गौड़ ४ श्री छेदीलाल ५ श्री० बी० आर० मण्डलोई ६ श्री कलप्पा ७ श्री अगमदास ८ राजकुमारी अमृत कौर ९ श्री बृजलाल वियाणी १० श्री पंजाब राय देश मुख ११ श्री भाटकर १२ श्रीगिबन १३ श्री० एच० के० खाण्डेकर १४ श्री दादा धर्माधिकारी १५ श्री० एच० बी० कामथ १६ श्री० आर० के० सिधवा ।

मुस्लिम लीग—१ श्री० के० काजी ।

मद्रास प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री राज गोपालाचार्य २ डाक्टर पट्टाभि सीतारामैया ३ श्री के० सन्तानम् ४ श्री बी० शिवराज ५ श्री सर० एन० गोपाल स्वामी एयन्गार ६ सर अलादी कृष्णा स्वामी ऐय्यर ७ श्रीमती अम्मू स्वामी नाथन् ८ श्री राम स्वामी रेडियर ९ श्री ओ० बी० अगलेसन १० श्री टी० टी० कृष्णामाचारी ११ श्री रामनाथ गोयनका १२ डा० सुब्रामनयाम् १३ श्री टी० ए० रामालिंगम् चेटियर १४ श्री के० कामराज नादर १५ श्री एन० सी० वीरबाहू पिल्लई १६ श्री सी० परमल स्वामी रेडियर १७ डाक्टर पी० सुब्रायन १८ श्री एल० कृष्णा स्वामी भारती १९ श्री सी० सुब्रामनियम् २० श्री नादिमूथू पिल्लई २१ श्री टी० प्रकाशम् २२ श्री एच० सीतराम रेड्डी २३ श्री एन० संजीवी रेड्डी २४ श्री बी० गोपाल रेड्डी २५ श्री के० चन्द्र मौलि २६ श्री काल बैंकटराव २७ श्री पी० एल० एन० रजून २८ श्री एन० जी० रङ्गा २९ श्री अनन्त शयनम् एयन्गार ३० श्री माधव मैनन ३१ श्री ए० विल्सन ३२ पादरी जैरोमडी सौजा ३३ श्रीमती दुर्गाबाई ३४ श्री प्रेटर ३५ श्री

बी० एच० मनी स्वामी पिल्लई ३६ श्री पी० एम० बेलयुधापानी ३७ श्रीमती डाकशयनी बेलायुधम् ३८ श्री बी० गोविन्द दास ३६ श्री बी० सी० केशवराव ४० श्री एस० नागप्पा ४१ श्री ककुण ४२ राजकुमार सर० एम० ए० मुथई चेटियर ४३ राजाबोब्बिली श्री कुन्ही रमण।

मुस्लिम लीग—१ श्री अब्दुल सत्तार २ हाजी इसहाक सैयद ३ एहमद इब्राहीम ४ ए० महबूब अली वेग ५ श्री बी० पोकर।

उड़ीसा प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री हरे कृष्ण मेहताब २ श्री सनतकुमार दास ३ श्रीमती मालती चौधरी ४ राजकृष्ण बोस ५ श्री भूपानन्द दास ६ श्री विश्वनाथ दास ७ श्री नन्दकिशोरदास ८ श्री बोधिराव दवे।

स्वतन्त्र (साधारण)—१ श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र।

बम्बई प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री सरदार वल्लभभाई पटेल २—श्री शङ्कर रावदेव ३ श्री बी० जी० खेर ४ श्री कन्हैया लाल मुंशी ५ श्री कन्हैया लाल देसाई ६ आर० आर० दिवाकर ७ डाक्टर अलबन० डी० सौजा ८ श्री एन० बी० गाड़गिल ६ श्री बी० एम० गुप्ते १० श्री के० एम० जादे ११ श्री एस० एन० माने १२ श्रीमती हसा मेंहता १३ श्री जी० एम० इलावाडे १४ श्री एस० जिहिनिमगप्पे, १५ श्री एम० के० पाटिल १६ श्री एम० आर मसानी १७ श्री एच० बी० पाटासकर १८ खडूभाई देसाई १६ डाक्टर एम० आर० जयकर।

मुस्लिमलीग—१ श्री आर० आर० चुन्द्रीगर २ श्री अब्दुल-कादिर शेष।

बिहार प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री भगवत प्रसाद २ श्री अनुग्रह नारायण सिंह ३ डाक्टर रघुनन्दन प्रसाद ४ श्री जगजीवनराम ५ श्री फूलन प्रसाद वर्मा ६ श्री महेष प्रसाद सिन्हा ७ श्री शङ्खिश्वर सिह ८ श्री रामेश्वर प्रसाद

सिनहा ६ श्री देवेन्द्रनाथ सामन्त १० श्री रघुवंश सहाय ११ डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद १२ श्री अमिय कुमार घोष १३ श्री सत्यनारायण सिनहा १४ कमलेश्वरी प्रसाद यादव १५ श्री दीपनारायण सिनहा १६ श्री रामनारायण सिंह १७ श्री गुप्तनाथ सिन्हा १८ श्री जगत नारायण लाल १६ श्री श्रीकृष्ण सिन्हा २० श्री बोनी फेसलाकर २१ श्री बृम्हेश्वर प्रसाद २२ श्री जन्द्रिका राम २३ श्री राजबहादुर नारायण मेहता २४ श्री देश जन्धु गुप्त २५ श्री बनारसी प्रसाद मुफनूवाला २६ डाक्टर पी० के० सेन० २७ श्रीमती सरोजिनी नायडू २८ डाक्टर सच्चिदानन्द सिन्हा २६ महाराजधिराज दरभङ्गा ३० श्री श्यामनन्दन सहाय ३१ श्री जयपाल सिंह।

मुस्लिमलीग—१ श्री हसैनइमाम २ श्री लतीफुर्रहमान ३ श्री ताअम्मुल हुसैन ४ श्री सैयद जाफर इमाम ५ श्री महम्मद तहीर।

संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र— अजमेर मेरवाड़ा

कांग्रेस—१ श्री मुकुट बिहारी लाल भार्गव।

दिल्ली—

कांग्रेस—१ श्री आसफ अली।

कुर्ग—

कांग्रेस—१ श्री सी० एम० पुनाच्छा।

"बी" गुट

पञ्जाब प्रान्त—

कांग्रेस—१ डाक्टर गोपीचन्द भार्गव २ पं० श्रीरामशर्मा ३ श्री बक्शीसर टेकचन्द ४ सरदार पृथ्वी सिंह आजाद ५ श्री दीवान चिमनलाल ६ श्री मेहरचन्द खन्ना।

स्वतन्त्र (साधारण)—२ श्री सूरजमल २ श्री हरमज राम।

मुस्लिमलीग—१ श्री महम्मद अली जिन्ना २ सरदार अब्दुर्रबनिश्तर ३ नवाब ममदोत ४ श्री महम्मद मुमताज दौलताना ५ सर

फिरोज खाँ नून ६ राजा गजनफर अली खाँ ७ प्रोफेसर अबूबक अहमद हलीम ८ श्री महम्मद इफ्तिखारुद्दीन ६ श्री महम्मद हसन १० श्री शेख करामत अली ११ बेगमशाहनवाज १२ श्री गुलामभीक नैरंग १३ श्री नजीर अहमद खाँ १४ डाक्टर मलिक उमर हयात १५ श्री अहमद अली।

स्वतन्त्र (मुसलमान)—१ नवाब सर मुजफ्फर अली खाँ किजिलबाश।

सिख—१ सरदार उज्वलसिंह २ ज्ञानी कर्तार सिंह ३ सरदार हरनाम सिंह ४ सरदार प्रतापसिंह।

सीमान्त प्रदेश—

कांग्रेस—१ मौलाना अब्दुलकलाम आजाद २ खान अब्दुलगफ्फार खाँ।

मुस्लिमलीग—१ सरदार बहादुर खाँ।

बलूचिस्तान—

स्वतन्त्र मुसलमान—१ सरदार महम्मद खाँ जोगजाल।

सिन्ध—

कांग्रेस—१ श्री जयरामदास दौलतराम।

मुस्लिमलीग—१ श्री एम० ए० खुरेशी २ श्री एम० एच० गजदर ३ श्री अब्दुल सत्तार पीर जादा।

"सी" गुट

बंगाल प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री शरतचन्द्र बोस २ श्री सुरेन्द्र मोहन घोष ३ श्री फ्रैंक एन्थोनी ४ श्री डाक्टर सुरेशचन्द्र बनर्जी ५ डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र घोष ६ श्री राजकुमार चक्रवर्ती ७ श्री धीरेन्द्रनाथ दत्त ८ श्री अरुण चन्द्र गुहा ९ महाराज उदयमचन्द्र महताब १० श्री आशुतोष मल्लिक ११ डाक्टर एच० सी० मुकर्जी, १२ डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी १३ श्री हेमचन्द्र नस्कर १४ श्री किरण शंकर राय १५ श्री प्रफु-

ल्लचन्द्र सेन १६ श्री सत्यरंजन बक्शी १७ श्री डी० पी० खेतान १८ श्रीमती लीलाराय १९ श्री डम्बर सिंह गुरुङ्ग २० श्री ज्ञानचन्द मजुमदार २१ श्री धनंजयराय २२ श्री पी० आर० ठाकुर २३ श्री प्रियरंजन सेन २४ श्री राधानाथ दास २५ श्री पी० डी० रामकुडू।

स्वतन्त्र—(साधारण) १ डाक्टर बी० डी० अम्बेडकर २ श्री सोमनाथ लाहिड़ी।

मुस्लिम लीग—१ नवाबजादा लियाकत अली खाँ २ सर महम्मद अजीजुलहक ३ श्री एच० एस० सुहरावर्दी ४ ख्वाजा सर निजामुद्दीन ५ एम० ए० एच० इस्फानी ६ के० शहाबुद्दीन ८ श्री अबूहाशिम ८ श्री रमान एहमन ९ श्री ए० एम० अब्दुल हमीद १० श्री फजलुर्रहमान ११ श्री मजबूर्रहमान १२ श्री अब्दुल कासिमखाँ १३ श्री इब्राहीमखाँ १४ श्री सिराजुल इस्लाम १५ श्री तमीजुद्दीनखाँ १६ डाक्टर महम्मद हुसेन १७ श्री मजरुलहक १८ श्री अब्दुलाअल मसूद १९ श्री फारमूजलहक २० शाहजादा यूसूफ २१ श्री मिर्जा महम्मद अब्दुल इलपकी २२ श्री एम० एस० अली २३ श्री महम्मद अलताफ एहमद २४ श्री अजलुल करीम २५ श्री गयासुद्दीन पठान २६ श्री हमीदुलहक चौधरी २७ प्रो० इश्लाक हुसेन कुरेशी २४ श्री महम्मद हुसेन २६ श्री महम्मद हुसेन मलिक ३३ श्री के० नूरुद्दीन ३१ श्री मौलाना शबीर ३२ श्री अहमद उस्माना बेगम ३ श्री शाइस्ता सुहरावर्दी इकरामुल्ला।

स्वतन्त्र मुसलमान—१ श्री ए० के० फजलुलहक।

आसाम प्रान्त—

कांग्रेस—१ श्री गोपीनाथ बारदोलाई २ श्री बसन्तकुमार दास ३ पादरी जे० जे० एम० निकोलस राय ४ श्री रोहिणी कुमार चौधरी ५ श्री अमिय कुमार दास ६ श्री अक्षय कुमार दास ७ श्री धरणीधर बसुमैत्री।

मुस्लिम लीग—१ सर महम्मद सदाउल्ला २ श्री अब्दुल मातीन चौधरी ३ मौलवी अब्दुल हमीद।

प्रथम अधिवेशन

(९ दिसम्बर—२३ दिसम्बर, ४६)

"विधान परिषद पूर्व निर्धारित समय और स्थान पर अपना कार्य आरम्भ करेगी। कोई शक्ति उसे रोक नहीं सकती।"

—बल्लभ भाई पटेल

"मैं किसी की सचाई और असलियत पर शका प्रकट करना नहीं चाहता। किन्तु मै यह तो अवश्य ही कहूँगा कि किसी बात का कानूनी पहलू कुछ भी क्यों न हो, ऐसे अवसर अवश्य आते हैं जब कानून का पल्ला पकड़ कर लटकना कमजोर टहनी पर खड़े होने के समान हो जाता है। खासकर उस समय जब आपका सामना एक राष्ट्र से हो, उस राष्ट्र से स्वतंत्रता के लिये जिसका जोश जोर मार रहा हो। हममें से अधिकाश पिछले बहुत वर्षों से एक पुश्त बल्कि उससे भी अधिक काल से भारत के स्वतत्रता संघर्ष में भाग लेते आ रहे हैं। हम लोग मौत से घिरी उपत्यका में विचरण कर रहे हैं और यदि जरूरत पड़ी तो फिर उसी उपत्यका में सहर्ष विचरण करेंगे।"

—जवाहरलाल नेहरू

श्री जिन्ना विधान-परिषद के विरुद्ध डटे रहे। उनकी अड़ंगा नीति का एकमात्र ध्येय यही था कि परिषद की बैठक बिलकुल टाल दी जाय या उसे भग कर दिया जाय। देश का अन्य वर्ग उनकी बातों का उतना ही जोर से विरोध कर रहा था। बृटिश सरकार ने किसी प्रकार समझौता कराने के लिए पं० नेहरू, श्री जिन्ना और सरदार बलदेव सिंह को लन्दन बुलाया। लन्दन की कान्फरेन्स का कुछ भी फल नहीं निकला, क्योंकि जिन्ना साहब विधान-परिषद को ले डूबने के लिए कटिबद्ध रहे। इधर विधान-परिषद की बैठक के लिए ९ दिसम्बर की तिथि निश्चित हो चुकी थी अतः प० नेहरू और सरदार बलदेव सिंह वायुयान द्वारा ८ दिसम्बर की शाम को दिल्ली वापस आ गये। श्री जिन्ना की

हठवादिता ने देश के राजनैतिक वातावरण को विषाक्त कर रक्खा था। इस समय बृटिश सरकार का रुख भी पहिले की तरह अनुकूल न रहा।

भारत के ऐसे अशात और अनिश्चित वातावरण के बीच भारतीय इतिहास में पहिली बार भारतीय विधान परिषद की बैठक कांग्रेस की की अभूतपूव दृढ़ता एवं महात्मा गांधी के आशीर्वाद के परिणाम स्वरूप सोमवार ता० ६ दिसम्बर १६४६ ई० को पहिली बार हुई। यह बैठक कौंसिल हाउस के कॉस्टीट्यूशन (Gonstitution) हाल में आरम्भ हुई। गैलरियाँ खचाखच भरी थीं। दर्शकों मे विदेशों के कूटनीतिज्ञ (Diplomatic) प्रतिनिधि गण एव अधिकांश में महिलाएँ भी थीं। ब्रिटिश भारत के कुल २८६ निर्वाचित सदस्यों में से २०७ उपस्थित थे। मुस्लिमलीग के ७४ ही सदस्य अनुपस्थित रहे। बूलूचिस्तान और पंजाब के एकमात्र सयुक्त दली निर्वाचित सदस्य भी अनुपस्थि थे ४ मुस्लिम सदस्य उपस्थि थे जो कांग्रेसी हैं, अन्य १३ प्रमुख सदस्य भी अनुपस्थित थे जिनमें से श्रीमती विजयलक्ष्मी पडित और पडित कैलाश नाथ काटजू विदेश गये थे। निर्बाचित सदस्यों में से बगाल के एक सदस्य श्री पी० डी० रायकूट का उन्हीं दिनों देहावसान हो गया। डाक्टर अम्बेडकर और एकमात्र कम्यूनिस्ट सदस्य श्री सोमनाथ लाहिड़ी भी उपस्थित थे। प्रतिनिधियों के बैठने की व्यवस्था प्रान्त के अनुसार की गई थी। अपने अपने प्रांतों के निर्वाचित सदस्य निर्धारित स्थानों पर कुल आठ पक्तियों में बैठे। सामने की बेंचों पर कांग्रेस पार्टी के निर्वाचित सदस्य बैठे थे। ११ बजने के ? मिनिट पहिले तक फोटोग्राफर परिषद हाल में उपस्थित सदस्यों के फोटो लेते रहे। डाक्टर अम्बेडकर श्री शरत बोस के साथ बैठे थे। जवाहरलाल नेहरू और जिन्ना की जगहें पास पास थीं पर जिन्ना अनुपस्थित थे। सदस्यों के बैठ जाने पर ठीक ११ बजे विधान परिषद के अस्थायी अध्यक्ष डाक्टर सच्चिदानन्द सिनहा अध्यक्ष की कुर्सी के बगल वाली कुरसी पर आकर बैठे। हाल में दो माइक्रोफोन लगे थे। राष्ट्रपति कृपलानी ने माइक

पर पहुँच कर डाक्टर सिन्हा को अस्थायी अध्यक्ष का पद ग्रहण करने की प्रार्थना की। आचार्य कृपलानी हिन्दुस्तानी में बोले और इस प्रकार विधान परिषद की कार्यवाही आरम्भ हो गई। वक्तृता खतम होने पर आचार्य कृपलानी डाक्टर सिनहा के पास गये और उनसे हाथ मिलाया। इसके बाद गम्भीर करतल ध्वनि के बीच डाक्टर सिनहा ने भारतीय विधान परिषद के अस्थायी अध्यक्ष पद को ग्रहण किया।

सबसे पहिले डाक्टर सिन्हा ने अमेरिका, चीन और आस्ट्रेलिया से आये हुए बधाई और शुभ कामना के सन्देश पढ़कर सुनाये और विधान परिषद की ओर से उन्हें बधाई भेजने तथा कृतज्ञताज्ञापन की इजाजत चाही। इसके बाद डाक्टर सिन्हा ने अध्यक्ष पद से अपना भाषण आरम्भ किया। डाक्टर सिन्हा जिस युग का प्रतिनिधित्व करते हैं उसके अनुरूप ही सुन्दर सुललित एवं सुविचारपूर्ण शब्दों में उन्होंने अपने मनोभाव प्रकट किये। भाषण के बाद अस्थायी अध्यक्ष ने परिषद की स्वीकृति से श्री फ्रैंक एन्थोनी को डिप्टी अध्यक्ष मनोनीत किया जिससे कि वे अपराह्नकालीन बैठकों की अध्यक्षता कर सकें। खान अब्दुल समद खाँ बलूचिस्तान की ओर से नवाब महम्मद खाँ के निर्वाचन को गैर कानूनी बताते हुए जो दरख्वास्त पेश की गई थी उस पर अस्थायी अध्यक्ष ने फैसला देते हुए कहा कि यह मामला स्थायी अध्यक्ष की उपस्थिति में पेश किया जाय।

डाक्टर सिन्हा ने सदस्यों को मञ्च पर आने और डिप्टी सैक्रेटरी को अपना प्रमाण पत्र दिखाकर रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने को आमन्त्रित किया डाक्टर सिन्हा ने कहा कि "मुझे अपना प्रमाण पत्र किसे दिखाना चाहिये मै अपना प्रमाण पत्र अपने को ही दिखाऊँगा।"—इस पर जोर की हँसी हुई। सैक्रेटरी श्री आयगर सदस्यों के नाम पढ़ते जाते थे और प्रत्येक सदस्य आकर अपने दस्तखत करते जाते थे। हस्ताक्षर की कार्यवाही का आरम्भ मद्रास प्रान्तीय सदस्यों से आरम्भ किया गया था। हस्ताक्षर करने से पूर्व हर नेता के लिये हर्ष ध्वनि होती थी।

पंडित जवाहरलाल नेहरू और मौलाना अब्दुलकलाम आजाद ने जिस समय रजिस्टर पर दस्तखत किये उस समय अपार हर्ष-ध्वनि हुई।

सबसे आगे की कतार में बैठने वालों में पंडित नेहरू, मौलाना आजाद, सरदार पटेल, आचार्य कृपलानी, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद, श्रीमती नायडू, श्री हरेकृष्ण मेहताब, पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त, डाक्टर अम्बेडकर, श्री शरतबोस, तथा श्री आसफ अली थे। डाक्टर अम्बेडकर और श्री शरत बोस एक ही आसन पर बैठे थे। श्रीमती सुचिता कृपलानी अपने पति आचार्य कृपलानी की बगल में बैठी थी।

सदस्यों के प्रमाणपत्र उपस्थित करने और रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने को आमन्त्रित करते हुए डाक्टर सिनहा ने मजाक में कहा कि समय की बचत के लिये हाथ मिलाने की प्रथा का मैं पालन न कर सकूगा। हस्ताक्षर कार्य समाप्त होने में डेढ़ घंटा लग गया। सबसे पहिले हस्ताक्षर करने के लिये राजा जी का नाम पुकारा गया। बीच-बीच में डाक्टर सिनहा विनोद प्रसङ्ग भी उपस्थित करते रहे। जब श्री गाड़गिल और श्री सत्य नारायण सिंह क्रमशः सेक्रेटरी और चीफ व्हिप कांग्रेस असेम्बली पार्टी–हस्ताक्षर करने अध्यक्ष की मेज पर पहुँचे तो उन्हें खयाल आया कि प्रमाण पत्र तो उनकी मेज पर ही छूट गया। तब वे फौरन दौड़े-दौड़े गये और हर्ष-ध्वनि और मजाक के बीच वे अपना प्रमाण पत्र लाये। जब श्रीमती सरोजिनी नायडू हस्ताक्षर करने अध्यक्ष के पास पहुँची तो डाक्टर सिनहा ने अधिकार भरे स्वर में विनोदपूर्ण ढङ्ग से श्रीमती नायडू से कहा कि हाथ मिलाने से बचने की छूट आपके लिये नहीं है, मेहरबानी करके आप इस तरफ आकर हाथ मिलाइये। उसी ढङ्ग से अनुरोध की उपेक्षा करती हुई श्रीमती नायडू ने रजिस्टर पर हस्ताक्षर किया और अध्यक्ष को अँगूठा दिखा दिया। इस पर पूरे परिषद में जोर का ठहाका लगा।

प्रमुख दर्शक-गैलरी में ब्रिटिश हाई कमिश्नर, अमेरिका के

प्रतिनिधि मि० जार्ज मेरेल, सर पी० सी० राम स्वामी ऐंगर और देशी राज्यों के कितने ही प्रतिनिधि उपस्थित थे।

अध्यक्ष डाक्टर सिनहा का भाषण—

अध्यक्ष निर्वाचित करने के लिये विधान-परिषद् के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए डाक्टर सिनहा ने कहा कि "विधान ऐसा बनाया जाय कि उसे अमर स्थायित्व मिले।" संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के विधान का जिक्र करते हुए सिनहा ने कहा कि "उस विधान के सम्बन्ध में यह साधिकार कहा जाता है कि उसमें जबरदस्त आदर्श उपस्थित किया गया है। अतः विधान-परिषद् को अमेरिका के विधान को भली-भांति अध्ययन करके 'हिन्दुस्तान की स्थिति के अनुरूप उसकी उचित बातें ग्रहण करनी चाहिये। ब्रिटेन, भारत के लिये विधान की व्यवस्था करने के मार्ग से अपरिचित है। वहाँ की पार्लियामेंट ही सर्वोच्च सत्ता है और वही कानून बनाती और व्यवस्था करती है। यूरोप में सबसे प्राचीन प्रजातंत्र स्वीजरलैंड का है। इसके बाद हमारे सामने प्राचीन फ्रांस का विधान आता है। फ्रांस में पहिली विधान परिषद १७८९ ई० में बैठी थी किन्तु फ्रेंच प्रजातन्त्र प्रणाली समय समय पर बदलती रही है और इस समय भी अनिश्चित स्थिति में है।"

"अमेरिका की सर्व प्रथम विधान-परिषद् १७८७ ई० में फिलेडेलफिया में बैठी। उक्त बैठक में विधान-परिषद् ने, ब्रिटेन की राजभक्ति के बन्धनों से मुक्त होकर एक स्वस्थ और व्यावहारिक विधान (workable republican constitution) का निर्माण किया। फ्रांस, आस्ट्रेलिया, कनाडा तथा दक्षिणी अफ्रीका ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के विधान को सामने रख कर ही अपने-अपने विधान निर्माण किये। हमारे विधान की विशेषता यह होगी कि इसकी केन्द्रीय अथवा राष्ट्रीय सरकार एक संघ नहीं है, क्योंकि वह सम्पूर्णतया उन अङ्गों पर ही आश्रित नहीं है जिनको हम राज्य या स्टेट कहते हैं।

यह स्वयं ही कामनवेल्थ (Commonwealth) है साथ ही साथ कई कामनवेल्थों के संघ जैसी भी है। क्योंकि इसे प्रत्यक्षतया प्रत्येक नागरिक की आज्ञाकारिता पूर्ण रूप से प्राप्त है जिसके बल पर वह अपने न्यायालयों और अधिकारियों द्वारा कार्य करायेगी। इसी प्रकार इसके अन्तर्गत तमाम राज्य ब्रिटेन की कौन्टी [विभागों] की तरह यूनियन के सब डिवीजन मात्र या राष्ट्रीय सरकार के मातहत नहीं रहेंगे। नागरिकों के ऊपर उनको एक सत्ता मिली है जो उनकी अपनी निजी है। वह सत्ता उन्हें केन्द्रीय सरकार से प्राप्त नहीं हुई है।"

'अमेरिकन नवयुवकों को यह बात नहीं भूलना चाहिये कि उनको जो बढ़िया उत्तराधिकार प्राप्त हुआ है वह उनके पूर्वजों के तप, कष्ट एवं रक्त द्वारा उपार्जित है और यदि बुद्धिमानी के साथ उसे सम्बद्ध किया जावे तो उसमें यह क्षमता है कि वह आने वाली सन्तति को जीवन के तमाम वाञ्छनीय सुख प्रदान कर सकता है। वहाँ के नागरिक शान्ति के साथ स्वतंत्रता, सम्पत्ति, धर्मोपभोग आदि कर सकते हैं। यह इमारत कुशल और सत्यानुरागी कारीगरों द्वारा बनाई गई है। इसकी नींव ठोस है। इसके प्रत्येक भाग सुन्दर और उपयोगी हैं। इसकी व्यवस्था बुद्धिमता पूर्ण है। और उसकी रक्षा पंक्ति दुर्भेद्य है। यदि मनुष्य का कार्य अमरत्व की उच्चाकांक्षा कर सकता है तो उसके एक मात्र संरक्षक जनता की मूर्खता, लापरवाही और अनाचार से यह सब देखते देखते घटे भर में नष्ट भी हो सकता है। प्रजातन्त्र की सृष्टि चरित्रबल, सार्वजनिक भावना एवं नागरिकों की समझदारी पर अवलम्बित होती है। जब साहस, निर्भीकता व्यक्तियों में से व सत्यवादिता एवं ईमानदारी बजट से व बुद्धिमानों का प्रभाव सार्वजनिक जीवन से उठ जाता है और ऐसे अनुत्तरदायी लम्पटों का बोल बाला हो जाता है और वे जब कुकृत्यों के एवज में पुरस्कृत होते हैं, जो जनता के प्रति विश्वासघात करने के लिये उनके मन की बात करते और उनकी खुशामद करते हैं तब प्रजातन्त्र का दुर्ग ढह जाता है।"

"अपने देश में विधान-परिषद का उल्लेख मुझे सबसे पहिले महात्मा गांधी के एक वक्तव्य में मिला है जो आज से बहुत दिनों पहिले १६२२ ई० में दिया गया था और जिसमें गांधीजी ने कहा था—"स्वराज्य ब्रिटिश पार्लियामेंट से मुझे उपहार स्वरूप नहीं मिलेगा। भारत के पूर्ण आत्म प्रकाश के फल स्वरूप उसकी घोषणा होगी जो पार्लियामेंट के ऐक्ट द्वारा की जावेगी। किन्तु यह भारत की जनता की घोषित इच्छा का पुष्टीकरण मात्र होगा जिसमें एक पार्टी ब्रिटेन होगा।" समझौता हो जाने पर ब्रिटिश पार्लियामेंट स्वतत्रता पूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियों की विधान-परिषद की मांग की पुष्टि समय-समय पर विभिन्न सार्वजनिक संस्थाओं एवं राजनीतिक नेताओं द्वारा की जाती रही किन्तु इसे सर्वप्रथम प्रस्ताव का रूप १६३४ ई० में स्वराज्य पार्टी की योजना में मिला। फैजपुर की कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। नवम्बर १६३९ ई० में कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें "भारत की स्वतन्त्रता एवं विधान-परिषद द्वारा अपना विधान बनाने के जनता के अधिकार को स्वीकार करने की घोषणा की गई।" इन सब स्वीकृत प्रस्तावों में विधान-परिषद के निर्वाचन का आधार बालिग मताधिकार रखा गया था। इस दिशा में कांग्रेस ने सर्वप्रथम १६३४ ई० में देश का पथ प्रदर्शन और नेतृत्व किया और आज तो देश के सभी राजनीतिज्ञ इस पर विश्वास करने लगे हैं कि विधान-परिषद ही देश के निर्माण करने का एक मात्र प्रत्यक्ष साधन है।"

"सप्रू कमेटी के सदस्यों ने भी इस कार्य के लिये विधान-परिषद को उपयुक्त समझा। मुस्लिम लीग ने भी अब स्वीकार कर लिया है। यद्यपि दूसरे रूप में, उनका कहना है कि एक नहीं, दो विधान-परिषदें बैठें। यह बात निर्विवाद है कि विधान-परिषद ही विधान बनाने का उपयुक्त साधन है। देश ने इसे भली-भांति समझ लिया है। लोक भावनाओं में इस महान परिवर्तन को लक्ष्य में रख कर ही पंडित

नेहरू ने कहा है कि "अपने लिये एक नयी सरकार अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा निर्माण करने के लिये राष्ट्र अपना कदम उठा चुका है।" यह बात सही है कि हम आज यहाँ विधान-परिषद में ब्रिटिश मंत्री शिष्ट मण्डल (Cabinet mission) द्वारा निर्मित योजना के अन्तर्गत समवेत हुए हैं। कांग्रेस, लीग एवं अन्य राजनीतिक सगठनों द्वारा यह योजना स्वीकार की गयी है।"

"भगवान आपका स्वप्न सफल करे और आपकी कार्यवाही सद्-भावना और देश भक्ति के साथ-साथ बुद्धिमत्ता, सहिष्णुता, न्याय एवं सबके प्रति निष्पक्षता तथा सर्वोपरि दूरदर्शिता द्वारा सचालित हो कि फिर भारत अपनी प्रतिष्ठित मर्यादा एव गौरव को प्राप्त हो एवं संसार के महान राष्ट्रों के मध्य में सम्मान और समानता का स्थान प्राप्त करे। महान भारतीय कवि इकबाल के इस गर्व एवं अपने ऐतिहासिक और प्राचीन देश की अमरता के प्रति विश्वास को जिसे उन्होंने दो सुन्दर पक्तियों में व्यक्त किया है, सत्य प्रमाणित करने का उत्तर-दायित्व हम पर है, इसे हमे नही भूलना चाहिये—

यूनान मिस्र रोमां, सब उठ गये जहाँ से।
बाकी अभी तलक है, नामो निशाँ हमारा॥ इकबाल

ता० १० दिसम्बर को यह निश्चित हो गया कि डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद ही विधान परिषद के स्थायी अध्यक्ष होंगे। अध्यक्ष पद के लिये डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद के सिवाय अन्य किसी का नाम सामने नहीं आया। मङ्गलवार ता० १० दिसम्बर को विधान परिषद में ४ प्रस्ताव आये। इन प्रस्तावों द्वारा यह निर्धारित किया गया कि अध्यक्ष निर्वाचन, नियम तथा कार्य प्रणाली (Rules of Procedure) स्थिर करने के लिये कमेटी की नियुक्ति करने में किस मार्ग का अवलम्बन किया जावे। नियम तथा कार्य प्रणाली स्थिर करने वाली कमेटी के विषय में काफी वादविवाद हुआ और कई संशोधन भी आये। राष्ट्रपति कृपलानी जी ने अपना प्रस्ताव इन शब्दो में पेश किया—

"यह परिषद चैयरमैन तथा अन्य १५ सदस्यों की एक कमेटी नियुक्त करने का निश्चय करती है। यह कमेटी परिषद के विभागों एवं कमेटियों की कार्यप्रणाली की नियमावली पर अपनी रिपोर्ट उपस्थित करेगी।"

श्री सुरेशचन्द्र बैनर्जी ने इस पर यह संशोधन पेश किया कि—"विभागों और कमेटियों सहित परिषद की कार्य-प्रणाली प्रस्तावित कमेटी द्वारा निर्मित नियमों के अन्तर्गत होगी।"—यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया। डाक्टर अम्बेडकर ने इसके विरुद्ध वोट दिया। श्री जयकर ने इस संशोधन पर बोलते हुए कहा कि सदस्यों का एक दल जो आज उपस्थित नहीं है और आगे चलकर उसके उपस्थित होने की सम्भावना है, निश्चय ही परिषद की कार्यवाहियों को ईर्ष्या और सन्देह की दृष्टि से देख रहा होगा। ऐसी अवस्था में ऐसा कुछ करना उचित नहीं है जो उस दल के साथ भावी सम्बन्धों को अधिक कटु कर दे।

बुधवार ता० ११ दिसम्बर को डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद निर्विरोध विधान परिषद के स्थायी अध्यक्ष चुन लिये गये। कितने ही चोटी के नेताओं ने उनके निर्विरोध स्थायी अध्यक्ष चुने जाने पर उन्हें बधाइयाँ दीं। अध्यक्ष निर्वाचित हो जाने पर डा० सिन्हा ने मौलाना अब्दुल कलाम आजाद व आचार्य कृपलानी से डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद को अध्यक्ष की कुर्सी पर लाकर बैठा देने की प्रार्थना की। इस पर कृपलानी और आजाद साहब ने दोनों बाहों में अपनी बाहें डालीं और डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद को लाकर अध्यक्ष की कुर्सी पर बिठाया। राजेन्द्र बाबू डाक्टर सिनहा की बगल में जाकर बैठ गये। उनके कुर्सी पर बैठते ही इनकलाब जिन्दाबाद और जयहिन्द के नारों से सारा भवन गूँज उठा। इसके बाद डाक्टर सिन्हा ने निर्वाचन पर बोलने के लिये प्रमुख वक्ताओं को आमन्त्रित किया। सर्व प्रथम सर राधाकृष्ण-बनारस यूनिवरसिटी के वाइस चांसलर—ने अपने भाषण में कहा—"संसार में सबसे तेज अस्त्र है नम्रता। और डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद

नम्रता के अवतार हैं।" उनके बाद प्रमुख वक्ताओं में सर गोपाल स्वामी अयंगर, फ्रैंक एन्थोनी, सरदार उज्वलसिंह, दरभंगा नरेश, अलवन डी सूजा, मुनि स्वामी पिल्ले, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, सोमनाथ लाहिड़ी तथा श्रीमती सरोजिनी नायडू थे। आचार्य कृपलानी ने डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद के निर्वाचन काल तक अध्यक्षता करने के लिये डाक्टर सिनहा को धन्यवाद दिया।

हर्ष-ध्वनि के बीच अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करने के बाद डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने हिन्दी मे भाषण देने के बाद सभी सदस्यों के स्थानों पर जा जाकर हाथ मिलाया।

स्थायी अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद का भाषण—

परिषद् के स्वशासनकारी एव अन्य निर्णायक स्वरूप पर जोर देते हुए डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने अपने आरम्भिक भाषण में कहा कि—

"मै जानता हूँ कि कतिपय प्रतिबन्धों के साथ इस परिषद का जन्म हुआ है। कार्यवाही के दौरान में और निर्णयों पर पहुँचने के समय हमे इन प्रतिबन्धों को भूलना या उनकी उपेक्षा नहीं करना चाहिये। किन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि इन प्रतिबन्धों के बावजूद भी यह परिषद स्वशासित एवं आत्म निर्णायक संस्था है जिसकी कार्यवाही में कोई बाहरी सत्ता हस्तक्षेप नहीं कर सकती और जिसके निर्णयों को बाहर का कोई भी व्यक्ति न पलट सकता है और न बदल ही सकता है और न संशोधित ही कर सकता है। जन्म के साथ ही इस परिषद पर लगाये गये प्रतिबन्धों से मुक्त होने एवं उनको नष्ट करने की क्षमता परिषद में है और मैं आशा करता हूँ कि आप भद्र महिलाएँ एव पुरुष, जो स्वतंत्र भारत का विधान बनाने के निमित्त यहाँ एकत्रित हुए हैं, इन प्रतिबन्धों को हटाकर ससार के सामने इस प्रकार का आदर्श विधान उपस्थित करेंगे कि वह इस विराट देश में रहने वाले सभी दलों, सम्प्रदायों और धार्मिक व्यक्तियों को सन्तुष्ट कर सके और प्रत्येक को कार्य,

विचार एवं विश्वास की स्वतंत्रता का आश्वासन दे सके तथा प्रत्येक व्यक्ति को ऊँचे से ऊँचे उठने की सुविधा और अवसर एवं सभी विषयों में प्रत्येक को आजादी की गारण्टी दे सके। मुझे आशा और विश्वास है कि यह विधान परिषद समय क्रम के भीतर वह शक्ति प्राप्त करेगी जो अन्य तमाम परिषदों को प्राप्त थी।"

'यह बड़े ही दुर्भाग्य का विषय है कि आज इस परिषद में बहुत स्थान खाली पड़े हैं। मैं आशा करता हूँ कि हमारे मुस्लिमलीगी भाई शीघ्र ही इन रिक्त स्थानों को भरेंगे और देश वासियों के लिये ऐसे विधान निर्माण में प्रसन्नता पूर्वक सहयोग प्रदान करेंगे जो ससार के अन्य तमाम राष्ट्रों के अनुभव के आधार पर एवं हमारे अपने अनुभव परिपाटी, एवं विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को उसकी अभिलषित प्रत्येक बात और विषय पर गारण्टी दे सके और किसी भी दल को किसी भी तरह की शिकायत की गुंजायश न रहे। मुझे आशा है कि आप इस लक्ष्य की प्राप्ति में कोई भी बात उठा न रखेंगे। सर्वो-परि हम जो चाहते हैं वह है स्वतंत्रता और जैसा किसी ने कहा है कि आजाद होने के लिये स्वतंत्रता से अधिक दुनिया में कोई भी चीज कीमती नहीं है। हम इस बात की आशा करते हैं कि इस विधान के परिश्रम के फलस्वरूप हम उस स्वतन्त्रता को प्राप्त करेंगे जिस पर हमें गर्व होगा।"

विधान परिषद की बैठक में अपने अध्यक्ष पद से दिये गये भाषण के बाद डाकटर राजेन्द्रप्रसाद ने कार्य प्रणाली कमेटी के सदस्यों के नाम घोषित किये। ये नाम इस प्रकार हैः—

सर्व श्री जगजीवन राम, शरतचन्द्र बोस, फ्रैंक एन्थोनी, सर ए० कृष्णा स्वामी ऐयर, बख्शी सर टेकचन्द, अलबन डी० सूजा, सर गोपाल स्वामी अयगर, पुरुषोत्तमदास टण्डन, गोपीनाथ बारदोलाई, डाक्टर पट्टाभि सीतारामैया, सरदार हरनाथसिंह, मेहरचन्द खन्ना, के० एम० मुन्शी, श्रीमती दुर्गाबाई और श्री रफी अहमद किदवई।

इसके बाद विधान परिषद् में कांग्रेस पार्टी की परामर्श दात्री समिति के निम्नलिखित सदस्य चुने गये—आचार्य कृपलानी, मौलाना आजाद, पण्डित नेहरू, सरदार पटेल, पण्डित पन्त, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, श्रीमती सरोजिनी नायडू, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद, श्री राजगोपालाचार्य, शंकरराव देव, शरतचन्द्र बोस, रफी अहमद किदवई, सरदार प्रताप सिंह, आचार्य जुगलकिशोर, जयरामदास दौलतराम, डाक्टर पट्टाभि सीतारामैया, डाक्टर जयकर, सर एन० जी० अयगर, डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी, श्री जगजीवनराम, जे० आई० गिल्ले, सत्यनारायणसिंह, हृदयनाथ कुंजरू श्रीमती हंसा मेहता, एम० आर० मसानी, निकोलसराय, फ्रैंक एन्थोनी, और सरदार उज्वलसिंह।

"सार्वभौम भारतीय प्रजातन्त्र"—प्रस्ताव

ता० १२ दिसम्बर बृहस्पतिवार को विधान-परिषद् की बैठक में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने निम्नलिखित अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पेश किया—

Independent Sovereign Republic of India.

[1—This Constituent Assembly declares its firm and solemn resolve to proclaim India as an Independent Sovereign Republic and to draw up for her future governance a Constitution.

2—Wherein the territories that now comprise British India, the territories that now form the Indian States, and such other parts of India as are outside British India and States as well as such other territories as are willing to be constituted into the Independent Sovereign India shall be a Union of them all; and

3—Wherin the said territories, whether with their present boundaries or with such others as may be determined by the Constituent Assembly and thereafter according to the law of the Constitution, shall possess and retain the status of autonomous units, together with residuary powers, and exercise all powers and functions of Gonernment and administration, save and exept such powers and functions as are vested in or assigned to the Union, or as are inherent or implied in the Union or resulting therefrom; and

4—Wherein all power and authority of the Sovereign Independent India, its constituent parts and organs of Government, are derived from the people; and

5—Wherein shall be guaranteed and secured to all the people of India justice, social, economic and political; equality of status, of opportunity and before the law; freedom of thought, expression, belief, faith, worship, vocation, association and action subject to law and public morality; and

6—Wherein adequate safeguards shall be provided for minorities, backward and tribal areas, depressed and backword classes; and

7—Whereby shall be maintained the integ-

rity of the territory of the Republic and its sovereign rights on land, sea and air according to justice and the law of civilized nations; and

8—This ancient land attain its rightful and honoured place in the world and make its full and willing contribution to the promotion of world peace and the welfare of mankind]

१—यह विधान सभा भारत को एक स्वतन्त्र और सार्व-भौम प्रजासत्तात्मक राज्य घोषित करने और उसके आयन्दा के राजकाज के लिये एक विधान तैयार करने का अपना दृढ़ और गम्भीर निश्चय प्रकट करती है।

२—इस शासन विधान में आज के हिन्दुस्तान का सारा प्रदेश, आज के हिन्दुस्तान की देशी रियासतों का सारा प्रदेश और ब्रिटिश हिन्दुस्तान व देशी रियासतों के इन प्रदेशों के बाहर बसे हुए हिन्दुस्तान के तमाम हिस्से और दूसरे वे सब प्रदेश जो स्वतन्त्र सार्व-भौम हिन्दुस्तान के जुज बनना चाहें, उन तमाम प्रदेशों का एक संघ बनेगा। और,

३—इन प्रदेशों की सरहदें जैसी आज हैं वैसी ही रहें, या यह विधान-सभा जैसा निश्चय करे वैसी रहें, या उसके बाद आगे चलकर विधान के कानून के मुताबिक उनकी जो सरहदें कायम की जायँ, वैसी रहें। ऐसी सरहदों वाले ये प्रदेश, इस शासन-विधान में, खुद अपना राज्य चलाने वाले स्वायत्त अंग होंगे और और अपनी स्वतत्रता का उपभोग करेंगे और इस संघ के जिम्मे छोड़ी जाने वाली हुकूमतों के सिवाय बाकी की सभी हुकूमतें, इन घटक राज्यों के पास रहेंगी। और संघ को सरकार के या राजकाज के लिये जो हुकूमत और और काम सौंपे जायँ या जो उसके लिये सुरक्षित रखे जायं या जो ऐसे यूनियन के मातहत हों या उसमें शामिल हों या उससे निकलते

हों, उन सबके सिवाय जो शेष रहें वे, सरकारी या राजकाज की सभी सत्ताएं और कार्य इन स्वायत्त अंगों के जिम्मे रहेंगे। और,

४—इस शासन-विधान में, सार्व-भौम स्वतन्त्र हिन्दुस्तान की, उसके अन्य इकाइयों (Units) की और उसके सरकारी तन्त्रों की कुल सत्ता और हुकूमत आम जनता के हाथ में रहेगा। और,

५—इस शासन विधान द्वारा हिन्दुस्तान की तमाम रिआया को निम्नलिखित बातों का यकीन दिलाया जायेगा और वे सब उसे निश्चय ही प्राप्त होंगी; सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक मामलों में न्याय प्रगति के अवसर में, कानून की निगाह मे बराबरी, विचारों तथा उन्हें प्रकट करने की विश्वास की, धार्मिक श्रद्धा, धार्मिक पूजा, रोजगार, धन्धे, संस्था, संगठन और काम की—कानून और सार्वजनिक नीतिधर्म की मर्यादा में रहकर स्वतन्त्रता। और,

६—इस शासनविधान में, अल्पमत वाली जातियों, पिछड़े हुए और आदि वासी प्रदेशों, और हरिजनों व पिछड़ी हुई जातियों के लिये पर्याप्त संरक्षण रखे जायेंगे। और,

७—इस शासन विधान के जरिये, न्याय और सभ्य राष्ट्रों के कानून के मुताबिक इस प्रजातन्त्र के राज्य के प्रदेश की और इसके सर्वाधीश हकों की अखण्डता जल, थल और आसमान में बरकरार रखी जायेगी। और,

८—यह पुराना देश दुनिया के दरबार में अपने लिये इज्जत की वह जगह प्राप्त करेगा, जिसका यह हकदार है और दुनिया की शान्ति को बढ़ाने में और मनुष्य जाति के कल्याण में राजी खुशी से अपना पूरा-पूरा हिस्सा अदा करेगा।

पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने विधान परिषद् में स्वतंत्र सार्वभौम भारतीय प्रजातन्त्र (Independent Sovereign Republic of India) के सम्बन्ध में उक्त प्रस्ताव पेश करते हुए भाषण दिया—

पं० जवाहरलाल नेहरू का भाषण—"हम आज नयी दिशा

के प्रवेश द्वार पर खड़े हुए हैं। उक्त प्रस्ताव से यह स्पष्ट हो जायेगा कि हम क्या करने जा रहे हैं। इसका सम्बन्ध विशेष रूप से करोड़ों भारतीयों से है, किन्तु व्यापक रूप में देखने पर संसार की जनता से भी इसका कम सम्बन्ध नहीं। यह एक प्रकार की शपथ है जिसे हमें पूरा करना ही होगा। मैं यह स्पष्ट रूप से बता देना चाहता हूँ कि यह विधान-परिषद भविष्य में जिन कार्यों में हस्तक्षेप करेगी अथवा जिन पर सन्धि, व समझौते होंगे, वर्तमान प्रस्ताव उनमें किसी प्रकार की बाधा खड़ी नहीं करेगा। प्रत्येक आदमी जानता है कि ब्रिटिश मन्त्रि मण्डल एवं अन्य नेताओं ने अपने वक्तव्यों द्वारा नयी रुकावटें पैदा कर दी हैं लेकिन मुझे आशा है कि ये रुकावटें हमारे मार्ग में नहीं आयेंगी और हम आप सब लोग तथा जो अभी यहाँ नहीं आये हैं, उनके सहयोग से सफलता अवश्य प्राप्त करेंगे। जहाँ तक हमारे देश-भाइयों का प्रश्न है हम उनका हर हालत में सहयोग प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। हम सहयोग प्राप्त करनेके लिये कुछ भी उठा नहीं रखेंगे, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम जिन सिद्धान्तों के लिये लड़ रहे हैं उन की हत्या करके सहयोग प्राप्त करना चाहेंगे। मैं जिन कारणों से इग्लैंड जाने के लिये राजी नहीं था उनको विधान परिषद के सदस्य भलीभांति जानते हैं। लेकिन तो भी मुझे ब्रिटेन के प्रधान मंत्री का व्यक्तिगत निमंत्रण पाकर वहाँ जाना पड़ा एवं वहाँ सर्वत्र मुझे सम्मान प्राप्त हुआ। लेकिन भारतीय इतिहास के इस सन्धि काल में हमने संसार के सब लोगों से विशेषकर इंग्लैंड से उसकी मित्रता एवं सहयोग की उम्मीद की थी, लेकिन दुर्भाग्य का विषय है कि हमको आनन्ददायक सन्देश के बाद निराशा-जनक सन्देश लेकर वापस आना पड़ा। मेरे लिए यह चोट बहुत ही गहरी साबित हुई है। मुझे बड़ा ही दुख हुआ कि जब हम आगे बढ़ने को कटिबद्ध हैं तभी हमारे मार्ग में रुकावटें खड़ी की गई हैं। पहले इन रुकावटों का जिक्र नहीं किया गया था। वे

अब नयी नयी रुकावटों के साथ सामने आ रही हैं। अब हमसे सीमाबद्ध अधिकार का जिक्र किया जाता है, इसके अतिरिक्त नवीन कार्यप्रणाली की ओर भी संकेत किया जाता है।

"मैं किसी की भी ईमानदारी पर सन्देह प्रकट करना नहीं चाहता हूँ लेकिन फिर भी मैं यह कह देना चाहता हूँ कि किसी भी विषय में कानूनी दृष्टि कोण जो कुछ भी हो, ऐसा समय आता है जब कानून पर भरोसा करके चलना खतरनाक हो जाता है। विशेषकर स्वतंत्रता के लिये उद्दाम भावनावाले राष्ट्र के सम्बन्ध में कानूनी रास्ता तो और भी कच्चा है। यहाँ उपस्थित सदस्यों में से अधिकांश ने काफी अरसे से यहां तक कि एक पीढ़ी या उससे भी पहिले से भारत की स्वतंत्रता के लिये युद्ध किया है, हम मौत के मुँह से होकर आगे बढ़े हैं और जरूरत पड़ने पर हम फिर उसी मार्ग पर चल सकते हैं। हम जिस विधान की रचना करने जा रहे हैं, वह प्रस्ताव उसका अंग नहीं है। इसलिये इस प्रस्ताव पर इस दृष्टि से विचार करने से काम नहीं चलेगा। इस परिषद को विधान रचना की पूर्ण स्वतंत्रता है, दूसरे लोग भी जब इस परिषद में शामिल होंगे तो उनको भी विधान रचना की पूर्ण स्वतंत्रता दी जायेगी। यह प्रस्ताव दोनों हालतों में लागू रहेगा। प्रस्ताव में कई मौलिक नियम निर्धारित हुए हैं। मुझे विश्वास है कि कोई भी दल या गुट, यहाँ तक कि भारत का एक भी आदमी इस पर आपत्ति नहीं कर सकता।"

"परिषद के सभी सदस्य जानते हैं कि अभी परिषद के बहुत से सदस्य अनुपस्थित हैं और बहुत से सदस्य जिन्हें यहाँ आने का पूरा अधिकार है, वे भी नहीं आये हैं। हमें खेद है कि हम आपस में भारत के विभिन्न हिस्सों के प्रतिनिधियों तथा ग्रुपों के रूप में मिलना चाहते हैं हमने अपने हाथ में एक महान कार्य लिया है अतः हम इस को पूरा करने के लिये सब का सहयोग प्राप्त करेंगे। भविष्य में भारत जैसा कि हमने विचार करके देखा है किसी ग्रूप, धर्म, प्रान्तीय या अन्यबातों पर

निर्भर नहीं होगा। बल्कि वह भारत की चालीस करोड़ जनता के अन्तर्गत रहेगा। लेकिन यह बड़े खेद की बात है कि कुछ कुर्सियाँ हम खाली देख रहे हैं और कुछ सहयोगी जिन्हें यहाँ होना चाहिये था, अनुपस्थित हैं। मुझे उम्मीद है कि वे आयेंगे और भविष्य में सबके सहयोग से परिषद का कार्य पूरा होगा। इस बीच हमारा कर्तव्य है कि गैरहाजिर सदस्यों का ध्यान रखते हुए यह खयाल रखें कि हम यहाँ एक दल और एक ग्रूप की हैसियत से नहीं आये हैं बल्कि हमें सदैव ही यह सोचना चाहिये कि हमें भारत के चालीस करोड़ लोगों की भलाई के लिये काम करना है। हम सब का अलग अलग दलों से सम्बन्ध है और कोई इस ग्रूप का है और कोई उस ग्रूप का। सभी अपने अपने ग्रूप या दलों का अनुसरण करते हैं लेकिन फिर भी समय आरहा है जब हम अपने अपने दलों की बातें भूल कर देश की और विश्व की भी बातें सोचेंगे और इस विषय में हमारा देश महान कार्य करेगा। विधान-परिषद के कार्यों के बारे में मैं सोचता हूँ कि समय आ गया है जब हमें, जो इस परिषद के सदस्य हैं अपनी योग्यता के अनुसार दल-गत झगड़ों को छोड़कर अपने सामने उपस्थित महान समस्याओं पर सोचना चाहिये ताकि हम जो कुछ कहें उससे इस देश की समृद्धि बढ़े और ससार यह मानने लग जाये कि हम उसी तरह से मिलकर कार्य कर रहे हैं जैसा कि हमें करना चाहिये।"

"इस समय मुझे भूतकालीन इसी प्रकार की विधान-परिषदों का ख्याल हो रहा है। अमेरिका का विधान-परिषद कैसे बना, किस प्रकार उस विधान परिषद के द्वारा निर्मित विधान काल चक्र को तै करता आज भी फल फूल रहा है और जिसके नियंत्रण में आज अमेरिका का राष्ट्र इतना समुन्नत हुआ है! आज से १५० वर्ष पूर्व पेरिस के सुन्दर शहर में भी इसी प्रकार के एक विधान-परिषद ने वहाँ के बादशाह, सामन्त तथा अन्य संकुचित वर्ग के बिरोध में विधान बनाने का

शुरू किया था । उस परिषद को अपनी कार्यवाही के लिए सभा-भवन भी न मिल सका और उसे अपना काम टेनिस के मैदान में (Tennis field) करना पड़ा । इस प्रकार की अड़चनों के सामने रहते हुये भी उन परिषदों ने अपना काम सफलता पूर्वक समाप्त किया। मुझे यकीन है कि हम लोग भी उसी पवित्र उद्देश और अविच्छिन्न उत्साह को लेकर यहाँ एकत्रित हुये हैं । बाधायें हमें पीछे नहीं घसीट सकतीं, चाहे हम इस सभा-भवन में इकट्ठे हों, चाहे इसके बाहर हमें खुले मैदानों या बाजारों में एकत्रित होना पड़े, हम लोग तब तक इस काम में लगे रहेंगे जब तक यह पूरा न हो जाय । (अपार हर्ष ध्वनि) हमें प्रोत्साहित करने के लिए एक आदर्श हमारे पड़ोस में भी मौजूद है । आप उस निकट भूत की क्रान्ति की ओर दृष्टिपात कीजिये जिसने एक नये ढंग से राज्य की उद्भूति की है । यह वह क्रान्ति है जिसने में ,रूस सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र' (Union of Soviet Socialist Republics) को जन्म दिया है । हमारे पड़ोस में होने के नाते हमारे लिए उसका महत्व बहुत अधिक है । आज हमारा मन इस प्रकार की सफलता को देखकर इस महान आदर्श की ओर स्फुटित होता है । मानव की प्रत्येक आरम्भिक चेष्टा में असफलता का सामना करना पड़ता है । हमारे लिए भी यह बात सची है लेकिन हमारा दृढ़ विश्वास है कि हम आगे बढ़ेंगे, कठिनाइयों के होते हुये भी हम सब अपने चिर संचित स्वप्न को कार्यान्वित करने में सफल होंगे ।"

प्रस्ताव के "सार्वभौम प्रजातंत्रात्मक राज्य" (Independent Sovereign Republic) की ओर संकेत करते हुये पण्डित नेहरू ने कहा कि, आज इस परिस्थिति में भारतवर्ष में राजा पैदा नहीं किया जा सकता और न किसी अन्य देश की राज-सत्तात्मक शक्ति को ही हम स्वीकार कर सकते हैं । क्योंकि हमें देश को पूर्ण स्वतत्र और सार्वभौम राज्य बनाना है । अतः सार्वभौम प्रजातन्त्र के अलावा हमारे लिए अन्य कोई रास्ता नहीं है । हमारे इस प्रस्ताव में जनतंत्र कोरा राज-

नैतिक जनतंत्र ही नहीं रक्खा गया है। हमने इस समय शब्दाडम्बर में न पड़कर वास्तविकता की ओर अधिक जोर दिया है। इस प्रस्ताव का लोकतंत्र या प्रजातन्त्र आर्थिक पहलू से भी वास्तविक प्रजातत्र है। मुझे समाजवाद में अटूट विश्वास है और यह भी पूरा यकीन है कि भारतवर्ष भी एक दिन उस आदर्श को अपना बना लेगा, लेकिन इस प्रस्ताव को सर्वमान्य बनाने के लिए मैंने शब्द को यहाँ नहीं रक्खा है ताकि वह विवाद का विषय न हो। अतः मैंने इसमें अव्यवहार्य वादों और नियमों को न रखकर अपने अभीष्ट उद्देश्य का निष्कर्ष ही रक्खा है।

"मै इस प्रस्ताव को राष्ट्र के स्वप्न और आकाक्षाओं का प्रतीक समझता हूँ। यह केवल एक कोरा प्रस्ताव हा नहीं है। इसे मैं एक घोषणा समझता हूँ;—यह राष्ट्र की दृढ़ प्रतीज्ञा के रूप में मेरे सामने है; यह मेरे लिए एक शपथ है, एक शुभकार्य है जिसके लिए हम सब अपनी भी बलि आवश्यकता पड़ने पर दे सकते हैं। शब्दों में जादू का असर होता है पर ऐसे अवसर जब उन्हें किसी राष्ट्र की आत्मा को व्यक्त करना होता है तो उनकी मर्यादा भी जवाब दे जाती है इसलिए मेरा यह दावा नही है कि मेरे प्रस्ताव के शब्द हिन्दुस्तान की आम जनता के दिल और दिमाग की रवानगी को, जोश को ठीक ठीक व्यक्त कर पाये हैं। लेकिन मैंने अपनी तरफ से इस आशय का भरपूर प्रयत्न किया है कि इस प्रस्ताव में हमारी आशाओं का, समारे स्वप्नों का, हमारे आदर्शों का तथा हमारे विभिन्न प्रयत्नों की सच्ची रूपरेखा दुनियाँ के सामने आ जाय।

"एक व्यक्ति और गैरहाजिर है और जिसकी याद हममें से अधिकाँश लोगों के दिमाग में हमेशा ही रहती है। यहाँ बोलते समय भी मैं उन्हें न भूल सका, मैं आज यहाँ उन्हीं के सहारे से खड़ा हूँ। वह महान नेता और हमारे राष्ट्र का पिता है। (इस पर अपार हर्षध्वनि हुई)। उसीने इस परिषद का निर्माण किया है तथा इसके पहिले जो कार्य हुए; या आगे होंगे उनका सबका आभार वही है। वे यहाँ नहीं

हैं क्योंकि वे भारत के एक कोने में अपने सिद्धान्तों की सफलता के लिये अथक परिश्रम कर रहे हैं। लेकिन मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि उसकी भावना और आशीर्वाद सदा हमारे साथ है।"

"आज भारत किसी का भी उपदेश नहीं चाहता, और न किसी का हस्तक्षेप ही। सहयोग और सदिच्छा द्वारा ही भारत पर अपना प्रभाव जमाया जा सकता है। यह बात न समझकर अक्सर लोग उपदेश किया करते हैं। किसी प्रकार का हस्तक्षेप अथवा नेतागिरी भारत अब बरदाश्त नहीं कर सकता। (इस पर हर्षध्वनि हुई) हम इस परिषद में बहुत ही पवित्र उद्देश्य लेकर आये हैं। ऐसा पवित्र उद्देश्य लेकर हम चाहे कहीं भी मिलें लेकिन हम बराबर तब तक मिलते रहेंगे जब तक कि हमारा कार्य पूरा नहीं हो जाता।"

उक्त प्रस्ताव पर ता० १६ दिसम्बर को शाम की प्रार्थना के बाद भाषण करते हुए महात्मा गांधी ने अपने विचार प्रकट किये तथा प्रस्तावक को आशीर्वाद भी प्रदान किया। "प्रस्तावक पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने देश की विभिन्न जटिल समस्याओं तथा सम्प्रदायों के हितों पर अच्छी तरह विचार करने के बाद ही यह प्रस्ताव पेश किया है। यदि नेहरू जी सोचते हों कि यह कार्यवाही ठीक है तो दूसरे के विचारों के दबाव से उन्हें झुकना नहीं चाहिये। मुझे दृढ़ विश्वास है कि कितनी आलोचनाओं के बावजूद वे अपने प्रस्ताव पर दृढ़ रहेंगे। हमें सत्य तथा न्याय आदि की दृष्टि से बहुत सोच-विचार कर निश्चय करना चाहिए और निश्चय कर लेने के बाद उस पर दृढ़ रहना चाहिये चाहे उसका परिणाम फिर कुछ भी हो।"

इसके बाद परिषद् की बैठक स्थगित हो गयी। अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि " इस सम्बन्ध में सदस्यों की ओर से यह लिखित आवेदन भेजा गया है कि उक्त प्रस्ताव को भलि भांति समझने का समय उनको नहीं मिला है अतः बैठक कल के लिये स्थगित की जाती है।"

बैठक स्थगित करने का इसके अलावा एक दूसरा उद्देश्य यह भी था कि कांग्रेसी सदस्य ब्रिटिश पार्लियामैंट में भारत पर होने वाली बहस का रंग ढङ्ग देख कर ही आगे बढ़ना चाहते थे।

इसके उपरान्त विधान परिषद दो दिन के विश्राम के बाद ता० १६ दिसम्बर को फिर आरंभ हुई। डाक्टर जयकर ने पण्डित जवाहरलाल नेहरू के प्रस्ताव पर विचार स्थगित रखने के लिये अपना प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि "हमारे मार्ग में जो एकाध कठिनाइयाँ हैं उनकी उपेक्षा करने से विधान-परिषद का कार्य बिगड़ जाने की संभावना है। मैं इसे बिगड़ने से बचाना चाहता हूँ। मूल प्रस्ताव में विधान के मूल एवं मौलिक सिद्धान्तों का जिक्र किया गया है। प्रस्ताव पर कल एक सरसरी नजर डालते ही यह स्पष्ट मालूम हुआ कि प्रस्ताव में जिन कुछ बातों का उल्लेख है वे विधान की सैद्धान्तिक भित्ति से सम्बन्ध रखती हैं।

उदाहारणार्थ प्रजातंत्र संघ, मौजूदा सरहदें, अवशिष्ट अधिकार, शक्ति का उद्गम स्थान जनता है, अल्प सख्यकों के अधिकारों आदि का उल्लेख आदि। मत्रि शिष्ट मण्डल के वक्तव्य द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत इस परिषद का कोई मूल भूत सिद्धान्त कितना ही संक्षिप्त रूप में क्यों न हो, इस अवस्था में उसे स्थिर करने का हमें अधिकार नहीं है। निस्संदेह परिषद सर्वोच्च सत्ता प्राप्त सस्था हैं किन्तु किन्तु जिस घोषणा के आधार पर इसकी सृष्टि हुई है, उसकी सीमाओं के अन्तर्गत ही यह सर्वोच्च सत्ता प्राप्त संस्था है। हम उन सीमाओं के बाहर समझौते के बिना नहीं जा सकते। और दो पार्टियाँ—लीग और देशी राज्य—की अनुपस्थति की वजह से किसी समझौते की बात सोची भी नहीं जा सकती। यदि उन सीमाओं की सम्पूर्ण उपेक्षा करके कुछ व्यक्ति इस पहिषद को राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने का साधन बनाकर तथा शक्ति हाथों में लेकर देश में क्रान्ति की सृष्टि करना चाहते हैं तो यह वर्तमान योजना के बाहर की बात है। और

इस पर मुझे कुछ भी नहीं कहना है। किन्तु जब कांग्रेस ने इस घोषणा पत्र को पूर्ण रूप से स्वीकार किया है तब वह उसकी सीमाओं से भी बँधी हुई है।"

"यदि मुस्लिम लीग इसमें भाग न लेगी तो देशी रियासतें भी इसमें शामिल न होंगी। यह बात उन लोगों ने कई बार स्पष्ट करदी है।

सरदार पटेल ने इस पर डाक्टर जयकर को जवाब देते हुए कहा—"डाक्टर जयकर यहाँ देशी राज्यों का प्रतिनिधित्व नहीं कर रहे हैं और अभी तक किसी भी देशी राज्य के प्रतिनिधियों ने यह नहीं कहा कि अगर मुस्लिमलीग परिषद में शामिल न होगी तो वे भी न आयेंगे। ऐसी हालत में एक हिन्दुस्तान के बदले एक पाकिस्तान विधान और दूसरे राजस्थान विधान की आवश्यकता हम पर लादी जायगी। ऐसी दशा में केन्द्र में आपका संघ समाप्त ही हो जायेगा, उसकी स्थापना हरगिज ही नहीं हो सकती।"

डाक्टर जयकर ने अन्त में कहा कि "यदि परिषद इस अवस्था में प्रस्ताव को पास करेगी तो वह अनुचित, गैर कानूनी और खतरनाक होगा।"

इसके बाद बिहार के प्रधान मंत्री श्री कृष्णसिंह ने नेहरू जी के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"कि इस पुनीत प्रस्ताव पर सशोधन पेश करने पर मुझे दुख होता है। विधान परिषद अंग्रेजों की उदारता के कारण नहीं बनाई गई है बल्कि सन् १९३५ ई० के विधान के विरुद्ध कांग्रेस ने जो विद्रोह किया उसकी सफलता के फल स्वरूप बनाई गई है। आज का भारत ऊपर की सत्ता से संचालित है वहाँ यह नया विधान जनता की इच्छा के आधार पर बनाया जावेगा।"

इसके उपरान्त परिषद स्थगित हो गया। दूसरे दिन नेहरू जी के प्रस्ताव पर फिर वाद विवाद शुरू करते हुए श्री मसानी ने कहा— अमेरिका की तरह भारत में भी अल्प संख्यकों को राष्ट्र में जज्ब कर देना चाहिये, नहीं तो वे राष्ट्र को छिन्न-भिन्न कर देंगे। भारत में एक

ही प्रजातन्त्र कायम होना चाहिये जिसमें हरएक व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार अपनी जिन्दगी बिताने का अधिकार होना चाहिये।"

एंग्लोइंडियन नेता श्री फ्रैंक एन्थोनी ने कहा—"भारत में सर्वतंत्र स्वतन्त्र प्रजातत्र स्थापित करना न केवल कांग्रेस पार्टी का ही ध्येय है, बल्कि भारत का हर एक व्यक्ति इसे स्थापित करने के लिए अपने दिल मे प्रतिज्ञा कर चुका है।"

डाक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी ने प्रस्ताव पर बोलते हुए कहा—"मुझे कल यह सुनकर बेहद खुशी हुई कि सरदार पटेल ने १६ मई की घोषणा के अतिरिक्त किसी और चीज़ को स्वीकार नही किया है। विगत सप्ताहों की प्रगति को देखते हुए मैं यह महसूस करता हूँ कि हमारा देश वैधानिक तरीकों से आजाद नहीं होगा। हम लोग अपनी जिम्मेदारी पर अपना विधान तैयार करेंगे और उस विधान को हम विश्व के सामने रखेंगे और यह दिखा देंगे कि हमने अल्प संख्यकों के साथ न्याय किया है।"

डाक्टर अम्बेडकर परिषद की तालियों की गड़गड़ाहट के बीच प्रस्ताव पर बोलने खड़े हुए। आपने कहा कि "मुझे तो इस चीज में अब रत्ती भर भी सन्देह नहीं रहा कि हमारे देश का सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक भविष्य क्या होगा ? पर आज तो हम आपस में ही लड़ रहे हैं। मैं भी लड़नेवाले दलों में से एकदल का नेता हूँ। लेकिन मुझे यकीन है कि हमे समय मिल जाय और परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो संसार की कोई भी ताकत इस देश को एक होने से नहीं रोक सकेगी (तालियों की गड़गड़ाहट) यदि बहुसख्यक, उन लोगों को जो यहाँ नही हैं, कोई रियायत दे दे तो यह उसकी राजनीतिज्ञता होगी। मैं डाक्टर जयकर के प्रस्ताव का इसीलिये समर्थन करता हूँ। हाँ, मैं डाक्टर जयकर के सशोधन के सकुचित कानूनी दृष्टिकोण से सहमत नही हूँ। मैं प्रान्तों की गुटबन्दी के खिलाफ हूँ। मैं परिषद के सदस्यों को एन्डमन वर्क के वे शब्द याद दिलाना चाहता

हूँ जिनमें उन्होंने कहा था कि "अमरीकी उपनिवेशों में दबाव से काम नहीं लिया जाय। इसीसे हम एकता की ओर अग्रसर हो सकेंगे। मैं इस परिषद के अधिकार को सीमित नहीं समझता। क्या इस समय यह प्रस्ताव पास करना बुद्धिमानी होगी? अधिकार एक चीज है और बुद्धिमानी बिल्कुल दूसरी चीज है। इस प्रस्ताव को स्थगित करने से देश के भिन्न-भिन्न दलों में समझौता होने का अवसर मिलेगा। एक दल या व्यक्ति की प्रतिष्ठा की भावना ऐसे अवसर पर अड़ंगा हो—यह उचित और चतुराई नहीं होगी। हममें से सब यहाँ सभी दलों को लाने के लिए इच्छुक है। इस प्रस्ताव को स्थगित करना इस प्रकार की इच्छा को कल्पला के स्तर से कार्यक्षेत्र की ठोस भूमि पर लाना होगा। इसलिए इसे स्थगित करना राजनीति की कसौटी होगी।" सरदार उज्वल सिंह ने सिखों की ओर से प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"विधान सभा मुस्लिम लीग के आने तक अपना अधिवेशन स्थगित नहीं रख सकती, हमें शिकायत है कि मन्त्रिमण्डल मिशन की योजना में पंजाब के सिखों को वे संरक्षण नहीं दिये गये जो भारतीय यूनियन में मुसलमानों को दिये गये हैं।"

इसके उपरान्त ता० १८ दिसम्बर को श्री सिधवा, श्री विश्वनाथ दास, पंडित हृदय नाथ कुंजरू के भाषण हुए। पडित हृदयनाथ कुंजरू ने डाक्टर जयकर के संशोधन का समर्थन किया और इस बात पर हर्ष प्रगट किया कि इस प्रस्ताव पर अभी निर्णय नहीं किया जायेगा उन्होंने आगे चलकर कहा कि "असली विवाद तो १६ मई की घोषणा की धारा १७ के स्पष्टी करण पर ही है। मैं किसी भी प्रान्त को उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी प्रान्तीय गुट में शामिल करने के खिलाफ हूँ। लार्डलिनलिथगो जैसे अंग्रेजों का कहना है कि भारत में ब्रिटिश हुकूमत बरकरार रहनी चाहिये। लेकिन मेरी राय में उन्हें सख्त धोखा हुआ है। यदि ब्रिटेन ने ऐसे लोगों की राय मानली तो उसे ऐसी भयानक स्थिति का मुकाबला करना पड़ेगा जैसी २५ वर्षों में कभी

पैदा नहीं हुई थी। हो सकता है कि भारत को कुछ समय के लिये ताकत के जरीये नीचे रखा जाय लेकिन ताकत के जरीये एक दिन के लिये भी भारत पर शासन नहीं किया जा सकेगा।"

पंडित हृदयनाथ कुंजरु के भाषण के बाद प्रस्ताव पर सर गोपाल स्वामी अयंगर का महत्वपूर्ण भाषण हुआ। आपने कहा—"इस प्रस्ताव पर आजकी बैठक में ही बहस समाप्त करदी जाये। इस प्रस्ताव को स्थगित करने का सुझाव इसलिये उचित नहीं जंचता, क्योंकि हमारे सामने एक बहुत ही बड़ा कार्य है। अतः हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम विश्व तथा अपने देश को यह दिखाये कि हम कुछ ठोस कार्य कर रहे हैं। इस प्रस्ताव में वे उद्देश्य हैं जिन्हें हमें विधान-निर्माण के लिये अपने सामने रखना है। लीग का विरोध गुट बन्दी सम्बन्धी धारा से ही है किन्तु लीग को दूसरे विषय के सम्बन्ध में यहाँ हाजिर होने से किसने रोका है?"

"कल लार्ड पेथिक लारेन्स ने यह घोषणा की कि चाहे हम संघ अदालत से अपील क्यों न करें, पर वे अपनी स्थिति में कोई परिवर्तन न करेंगे। मेरे विचार से यह कहना कि ब्रिटिश सरकार संघ अदालत के निर्णय को स्वीकार करेगी या नहीं यह उसके अधिकार से बाहर है।

"यह विधान-परषिद का अधिकर है कि वह संघ-अदालत को मामला सौंपने से पहिले यह निश्चय करे कि संघ अदालत का निर्णय उसे मान्य होगा या नहीं। माना, यदि सघ अदालत का निर्णय ब्रिटिश सरकार के विचार के अनुसार रहा तो विरोधी दृष्टि कोण रखने वालों की क्या स्थिति होगी? अतः इस सम्बन्ध में यही किया जा सकता है कि इस परिषद द्वारा १७ धारा के ५ वें पैरे मे संशोधन किया जाय। मुख्य कठिनाई विभागों की बैठकों में जैसा भारत मत्री ने बताया है, मत प्रकाशन करने के तरीके पर है। मत-प्रकाशन में साधारणतः अधिक मत प्राप्त करके ही प्रश्नों पर निर्णय दिया जाय। यदि हम

चाहें कि मत प्रकाशन सूबे वार होना चाहिये तो इसके लिये यह आवश्यक है कि सम्बन्धित धारा में परिषद द्वारा सशोधन किया जाय।"

"ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य तथा ब्रिटिश लोक और लार्डसभा के भाषणों से जो नई स्थिति उत्पन्न हो गई है उसे देखते हुए यह आवश्यक है कि संघ अदालत को तो मामला सौंप दिया जाय परन्तु साथ ही १६ वीं धारा में सशोधन कराने के लिये एक प्रस्ताव परिषद मे प्रस्तुत किया जाय। मेरे विचार से फिर यह सम्भव होगा कि मुस्लिमलीग परिषद में आकर यह विरोध करे कि इससे प्रमुख साम्प्रदायिक प्रश्न उठता है। यदि यह साम्प्रदायिक प्रश्न करार दिया गया तो फिर लीग यह कह सकेगी कि बिना दोनों प्रमुख दलों के बहुमत के उस संशोधन को स्वीकार नही किया जा सकता।"

"भारतीय नरेशों के अधिकारों के सम्बन्ध में सर अयंगर ने २५ वर्ष पहिले मैसूर तथा हैदराबाद में नियुक्त दो अधिकृत समितियों की रिपोर्टों का उल्लेख किया। उक्त दोनों समितियों ने यह घोषणा की थी कि जिस प्रकार प्रान्तों की जनता से ही प्रांतों को अधिकार प्राप्त होते हैं उसी प्रकार रियासतों के अधिकार उनकी प्रजा पर आधारित हैं। अतः मेरे विचार से यह आवश्यक है कि प्रस्ताव की धारा ४ की घोषणा करने के लिये रियासतों को भी सम्मिलित किया जाय क्योंकि उसमें बताया गया है कि जनता पर ही शासन के अधिकार आधारित हैं।"

इसके पश्चात् ता० १६ दिसम्बर को सरदार पटेल अस्वस्थ होने के कारण परिषद में न आ सके। डाक्टर सिनहा आज श्रीमती सरोजिनी नायडू के पास जाकर कुर्सी पर बैठे तो सभा भवन तालियों से गूँज उठा। उसके पश्चात् परिषद के एक मात्र कम्यूनिस्ट सदस्य श्री सोमनाथ लाहिड़ी भाषण देने खड़े हुए। आपने कहा—"यदि हम ब्रिटिश मंत्रिमण्डल की योजना से ही बँधे रहे तो भारत में गहरे झगड़े होंगे। मैं नेहरू जी के प्रस्ताव के प्रथम अंशों से सहमत हूँ किन्तु मेरी राय में

शेषांश का अर्थ लीग पर दबाव डालना है। मुस्लिमलीग के जो प्रतिगामी लोग धार्मिक आधार पर देश के टुकड़े-टुकड़े करने का प्रस्ताव पेश करते हैं, मैं उनकी तीव्र निन्दा करता हूँ और चाहता हूँ कि भारत में बसी हुई सभी कौमों को सर्वोच्च अधिकार दिये जायँ।"

इसके बाद श्रीमती हंसा मेहता ने महिलाओं की ओर से बोलते हुए कहा—"भारत की महिलाओं को यह जानकर खुशी होगी कि स्वतन्त्र भारत में हमारा दर्जा पुरुषों के बराबर होगा और हमें उनके समान ही अवसर मिलेगा। नेहरू जी के प्रस्ताव में जो आश्वासन दिये गये हैं उनके कारण मैं प्रस्ताव का समर्थन करती हूं।"

नेहरूजी के प्रस्ताव पर बोलते हुए सर अल्लादी कृष्णा स्वामी ऐयर ने अपने महत्वपूर्ण भाषण को बैठे-बैठे ही आरम्भ किया। उन्होंने डाक्टर जयकर की एक एक दलील को काटना आरंभ किया। आपका भाषण बहुत ही गम्भीर था इसलिये सभी ने उसे बड़े ध्यान पूर्वक सुना। आपने कहा —"ब्रिटिश-मंत्रि मण्डल की घोषणा कोई कानून नहीं है। उसमें यह नहीं बताया गया कि विधान-सभा को विधान तैयार करते हुए कौन से कदम उठाने चाहिये। हमे यह समझ में नहीं आता कि उद्देश्य निश्चित किये बिना विधान कैसे तैयार किया जायेगा। अब तक जितनी भी विधान सभाओं के अधिवेशन हुए हैं उनके इतिहास को उठाकर देख जाइये। एक भी सभा ऐसी नहीं हुई जिसने पहले अपने उद्देश्य न निश्चित कर लिये हों। (तालियाँ) यदि मुस्लिमलीग और रियासत के प्रतिनिधियों ने प्रस्ताव में निहित उद्देश्यों का समर्थन न किया तो उन्हें विधान-सभा में कोई स्थान न मिलेगा। यदि लोक तंत्री भारत चाहेगा तो वह भी दक्षिणी आयर्लैण्ड की तरह ब्रिटिश राष्ट्र समूह का सदस्य बना रह सकेगा।"

"डाक्टर अम्बेडकर ने कहा है कि प्रस्ताव में प्रान्तों की गुट बन्दी का कोई जिक्र नहीं किया गया है। लेकिन मेरी राय में प्रान्तों की

गुट-बन्दी श्वेतपत्र में निहित विधान का आवश्यक अंग नहीं है। नेहरु प्रस्ताव में भी यह नहीं कहा गया कि यदि कुछ प्रान्त अपना गुट बनाना चाहेंगे तो बना सकेंगे। अब तो महात्मा गांधी ने भी "नेहरू प्रस्ताव" का समर्थन कर दिया है। अतः मुझे आशा है कि यह प्रस्ताव अवश्य ही पास हो जायेगा। मुझे साथ ही यह भी आशा है कि डाक्टर जयकर भी अपना संशोधन वापस ले लेंगे।

श्री जयपाल सिंह ने आदि वासियों की ओर से नेहरू जी के इस आश्वासन पर कि "भारत में एक स्वतंत्र राज्य कायम होने जा रहा है, जिसमें सबको समान अवसर मिलेगा" नेहरु प्रस्ताव का समर्थन किया।

श्री० डी० पी० खेतान ने व्यापारियों की ओर से नेहरु जी के प्रस्ताव का समर्थन किया और बताया कि ६ मई के वक्तव्य में कई खामियाँ हैं जिनको दूर करना विधान-परिषद का ही कार्य है।

विधान परिषद के एक मात्र गुरखा प्रतिनिधि श्री० डी० एस० गुरंग ने कहा कि "मैं गुरखा लोगों की ओर से नेहरु प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ। यदि जिन्ना साहब अपने को भारतीय समझते हैं तो उन्हें विधान-सभा में आकर अपना झगड़ा निपटा लेना चाहिये। लेकिन यदि वे ऐसा न करके हमें गृह युद्ध की धमकी देते हैं तो भारत के तमाम गुरखे उनका मुकाबला करेंगे। इस कार्य में तमाम अल्प-संख्यक जातियाँ कांग्रेस का साथ देंगी।

श्री हरिसिंह गौड़ ने नेहरु प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा कि श्री जिन्ना जैसा पाकिस्तान चाहते हैं वह ना बड़े राष्ट्र का एक छुकमा बन जायेगा। तुर्की के अतातुर्क ने ठीक ही कहा था कि जो मुल्क धर्म के साथ राजनिति को मिला देता है वह कभी भी आजादी हासिल नहीं कर सकता। विधान-सभा का यह अधिवेशन अँग्रेजों की मेहरबानी से नहीं बल्कि भारतीयों के अधिकार से हो रहा है। इस पर जो हमला करेगा हम उसका मुकाबला करेंगे।"

परिगणित जातियों की प्रतिनिधि श्रीमती बेला मुध्म ने नेहरू प्रस्ताव का समर्थन किया।

इसके बाद विधान-परिषद के अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने परिषद के कार्यक्रम की चर्चा करते हुए बताया कि परिषद को अधिवेशन समाप्त करने के पहिले ४ बातों पर निर्णय करना है १—परिषद में पेश नेहरू जी का प्रस्ताव २—कार्य-प्रणाली का निर्णय ३—विवादास्पद प्रश्न फेडरल कोर्ट के हवाले किया जाय या नहीं। ४—कुछ समितियों के सदस्यों का चुनाव।

ता० २१ दिसम्बर को विधान-परिषद की बैठक डेढ़ घन्टे तक हुई। उसमें यह निश्चय किया गया कि आजकी बैठक ३ बजे तक रहे। इसके बाद जो बैठक हो वह बन्द कमरे में की जाय। प्रातःकाल की बैठक में एक समझौता कमेटी (Negotiating Committee) कायम करदी गई जो नरेन्द्र मण्डल (Chambers of Princes) द्वारा नियुक्त समझौता कमेटी के साथ बातचीत करेगी।

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने घोषित किया कि नेहरू प्रस्ताव पर अभी ५० महानुभाव और बोलने को उद्यत हैं लेकिन कई आवश्यक कार्यों की वजह से इस पर बहस आगामी अधिवेशन मे जो २० जनवरी सन् ४७ से होगा, होगी। राजेन्द्र बाबू ने आशा प्रकट की कि जो सदस्य अभी उपस्थित नहीं हैं, वे भी तब तक परिषद में उपस्थित हो जायेंगे।

राजकुमारी अमृत कौर और श्री पदमपत सिंहानिया ने आज रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये और अपने प्रमाण-पत्र भी पेश किये। इसके पूर्व ता० १६ दिसम्बर को श्रीमती विजया लक्ष्मी पंडित भी विधान परिषद में सम्मिलित हुई। जिस समय श्रीमती पण्डित ने परिषद में प्रवेश किया हर्षध्वनि से हाल गूंज गया। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि संयुक्त-राष्ट्र मण्डल में महत्वपूर्ण विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में श्रीमती पण्डित का मैं स्वागत करता हूँ। इसके बाद कई सदस्यों ने श्रीमती पण्डित को बधाइयाँ दीं।

"आज सबसे पूर्व श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने यह प्रस्ताव किया कि मौलाना आजाद, नेहरूजी, सरदार पटेल, डाक्टर पट्टाभि सीता रमैया, श्रीशंकर राव देव और सर एन० गोपाल स्वामी अयंगर की एक कमेटी नियुक्त की जाय जो नरेन्द्र मण्डल द्वारा नियुक्त समझौता कमेटी तथा दूसरे रियासती प्रतिनिधियों के साथ बातचीत करके यह पता लगावे कि रियासत प्रतिनिधियों का विभाजन कैसे किया जाय और रियासतों के ६३ प्रतिनिधियों का चुनाव कैसे किया जाय। इस कमेटी में ३ सदस्य बाद में लिये जा सकेंगे। उनका लेने का समय और तरीका विधान-सभा के अध्यक्ष बतायेंगे और चुनाव विधान-सभा करेगी।"

इस प्रस्ताव पर सोमनाथ लाहिड़ी तथा परिगणित जातियों की ओर से श्री ठाकुर और आदि वासियों की तरफ से श्री जयपाल सिंह आदि ने संशोधन पेश किये कि कमेटी जो भी रिपोर्ट पेश करे उसकी तस्दीक विधान-परिषद में होना आवश्यक है। यही संशोधन श्री सन्तानम् ने भी पेश किया। परिगणित एव आदि वासियों के प्रतिनिधियों ने यह मांग की कि हमारे प्रतिनिधियों को भी कमेटी में स्थान दिया जाय।

इन संशोधनों का जवाब देते हुए नेहरूजी ने कहा—"इस कमेटी का किसी भी रियासत के आन्तरिक गठन से कोई सम्बन्ध न होगा। वह तो सिर्फ इस चीज पर विचार करेगी कि रियासतों के प्रतिनिधि किस तरीके से विधान सभा में लिये जायँ। कमेटी को अपनी रिपोर्ट विधान-सभा में पेश करनी होगी।"

उक्त सुझाव पर दीवान चमनलाल ने संशोधन पेश किया जो श्री मुन्शी और विधान-सभा दोनों ने मंजूर कर लिया। इसके बाद तमाम संशोधन वापस ले लिये गये और मूल प्रस्ताव पास हो गया।

इस प्रस्ताव के पास हो जाने पर श्री मुन्शी ने नियम कमेटी (Rules Committee) की रिपोर्ट पेश की। रिपोर्ट पर प्रकाश डालते

हुए आपने कहा—"यह फैसला किया गया है कि विधान-परिषद के अध्यक्ष को प्रेसीडेन्ट कहा जायेगा। इसके विभागों तथा दूसरी कमेटियों के लिये नियुक्त अध्यक्षों का नाम और कुछ रखा जा सकेगा; प्रेसीडेन्ट नहीं।"

"जब तक विधान-सभा के दो तिहाई सदस्य प्रस्ताव पेश न करें, तब तक विधान-सभा भंग न की जा सकेगी।" श्री मुन्शी ने कहा—अध्यक्ष यह घोषित कर चुके हैं कि विधान-सभा सर्वतन्त्र स्वतन्त्र है, इसलिये उसके सदस्य ही उसे भङ्ग कर सकेंगे और कोई नहीं।"

"विधान-सभा के सदस्य हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी तीनों भाषाओं में भाषण दे सकेंगे। विधान-सभा की कार्यवाही का विवरण भी इन्हीं तीनों ही भाषाओं में रखा जायेगा। जो सदस्य इन तीनों भाषाओं से अनभिज्ञ होगा, उसे अपनी भाषा में भाषण करने का अधिकार होगा।"

"यह भी व्यवस्था की गई है कि अल्प-संख्यकों के मूलभूत अधिकारों तथा संरक्षणों (Fundamental Rights and Safeguards) के लिये नियुक्त सलाहकार कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार यूनियन असेम्बली जो फैसला करे, विभागों को उनमें किसी किस्म का संशोधन व परिवर्तन करने का हक न होगा।"

"विधान सभा के ५ वाइस-प्रेसीडेन्ट या उपाध्यक्ष रहेंगे इनमें से दो का चुनाव तो विधान-सभा में होगा, शेष तीन विभागों (Groups) के अध्यक्ष ही वाइस-प्रेसीडेन्ट होंगे। इनका काम विधान सभा के कार्यों तथा विभिन्न शाखाओं के बीच सहयोग स्थापित करना होगा।"

'विधान-सभा का प्रबन्ध कार्य करने को एक संयोजन-समिति (Central Coordinating Committee) नियुक्त की जायेगी। चुनाव की अर्जियाँ सुनने के लिये, विधान-सभा के प्रेसीडेन्ट ट्रिब्यूनल मुकर्रर किया करेंगे लेकिन इस चीज को कानूनी रूप देने के लिये एक आर्डीनेन्स निकालना लाजिमी होगा। विभागों को अपने

स्थायी नियम बनाने का अधिकार होगा, लेकिन वे विधान-सभा द्वारा निर्धारित नियमों के प्रतिकूल न होंगे।"

इसके पश्चात श्री मुन्शी ने यह प्रस्ताव पेश किया कि नियम कमेटी की रिपोर्ट पर विचार किया जाय। अपना प्रस्ताव पेश करते हुए उन्होंने कहा—'रिपोर्ट पर बहस बन्द कमरे में की जाय। नियम कमेटी ने बड़ी मेहनत के बाद यह रिपोर्ट तैयार की है। सर बी० एन० राव जैसे व्यक्तियों से इस कमेटी ने सहायता ली है। इस कमेटी ने जो नियम बनाये हैं, उनमें अब और बाद में बड़ी खुशी से संशोधन तथा परिवर्तन किये जा सकेंगे।

सिंहावलोकन

लीग को विधान परिषद की बैठकों में भाग लेने का अवसर प्रदान करने के लिये हर प्रकार की सुविधाएं प्रदान करते हुए नेहरू प्रस्ताव को विधान-परिषद के द्वितीय अधिवेशन तक के लिये स्थगित कर दिया गया। यदि लीग ने इससे फायदा नहीं उठाया तो विधान-परिषद भारत और उसकी स्वतंत्र इकाइयों के लिये विधान बनाने का काम आगे बढ़ायेगी। कांग्रेस भारत के किसी भी भाग पर किसी विधान विशेष का भार बलात् लादना नहीं चाहती इसलिये परिषद् द्वारा बनाये जाने वाले विधान से सहमत होने वाली प्रत्येक इकाई को उस विधान पर अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण स्वातंत्र्य होगा।

विधान परिषद की सारी बैठकें पूर्ण अनुशासन के साथ सम्पन्न हुईं। सभा में दिये गये प्रायः सभी व्याख्यान उच्चकोटि के थे। डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद—स्थायी अध्यक्ष भिन्न भिन्न हितों के प्रतिनिधियों को मत प्रकाशन की स्वतंत्रता देकर सबके विश्वास-पात्र बन गये। अल्प संख्यकों को उन्होंने मत-प्रकाश में पहिले अवसर दिया और इस सम्बन्ध में किसी दल को किसी प्रकार की शिकायत नहीं हुई।

परिषद् में कितने ही प्रसिद्ध व्यक्ति सम्मिलित हुए। अस्थायी अध्यक्ष की हैसियत से डाक्टर सच्चिदानन्द सिन्हा ने कार्य संचालन में जो कुशलता प्रदर्शित की उसके लिये उन्हें उचित सराहना मि—। सरदार उज्ज्वलसिंह के शब्दों में डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद के लिए सबकी यही भावना रही कि अध्यक्षपद के लिये उनसे अधिक योग्य कोई और व्यक्ति नहीं था। उन्होंने पद ग्रहण करते ही यह घोषणा कर दी कि बाहर की कोई भी शक्ति परिषद के कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकती और प्रत्येक सदस्य ने उनका अनुकरण करते हुए परिषद की सार्वभौम सत्ता के प्रति अपना दृढ़ विश्वास प्रकट किया।

सबसे महान वक्तृता पण्डित जवाहरलाल नेहरू की मानी गई जो उन्होंने भारत को सार्वभौमसत्ता प्राप्त प्रजातंत्र घोषित किये जाने का प्रस्ताव उपस्थित करते हुए दी। वह पूरे एक घन्टे तक बोले और इस बीच उनके मुँह से एक भी निरर्थक शब्द नहीं निकला। उन्होंने बताया कि हमारा राष्ट्र स्वतन्त्र होने और एक ऐसा विधान बनाने के लिये दृढ़प्रतिज्ञ है जिससे सभी श्रेणियों की जनता के साथ राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक न्याय किया जा सके। पण्डित नेहरू की इस वक्तृता में ओज, साहस, और दृढ़ आत्म विश्वास कूट कूट कर भरा था। उनके व्याख्यान से परिषद के सभी सदस्यों पर गहरा प्रभाव पड़ा था।

सरदार पटेल ने विधान सभा में कोई भी वक्तृता नहीं दी किन्तु उन्होंने एक बात कहकर डाक्टर जयकर के निराशाजनक सुझाव का उत्तर दे दिया। उन्होंने कहा—"इस परिषद को १६ मई के वक्तव्य के आधार पर आगे बढ़ना चाहिये और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के ६ दिसम्बर के वक्तव्य की उपेक्षा करनी चाहिये।"—यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं कि सरदार पटेल की इस दृढ़ घोषणा से परिषद की कार्यवाही में बड़ा ही अन्तर पड़ा।

वाद-विवाद के दौरान में सर एन० गोपाल स्वामी अंयगर, सर

अलादी कृष्ण स्वामी अय्यर, डाक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी, श्री निकोलस राय तथा परिगणित जाति के श्री० ठाकुर ने प्रस्ताव के पक्ष में बहुत सी महत्वपूर्ण बातें प्रकट कीं। इन वक्ताओं के भाषणों से सभा यह महसूस करने लगी कि पण्डित नेहरू ने परिषद के लिये जो उद्देश्य पत्रिका प्रस्तुत की है, वह ठीक है। तथा उन्हें अपने कार्य में आगे निर्विरोध बढ़े चले जाना चाहिये। परन्तु श्री फ्रैंक एन्थोनी, डाक्टर अम्बेडकर तथा पण्डित हृदयनाथ कुंजरू की राय से परिषद को यह भी महसूस हुआ कि परिषद की जनवरी की बैठक तक प्रस्ताव पर निर्णय स्थगित रखा जाय। उक्त सदस्यों ने सयुक्त भारत के उद्देश्य को स्वीकार किया तथा प्रस्ताव के उद्देश्यों के प्रति सहयोग प्रकट किया। बहु सख्यकों द्वारा अल्प संख्यकों के मत के प्रति सम्मान प्रकट करने के परिणाम स्वरूप नेहरू जी के प्रस्ताव पर मत लेने का निर्णय स्थगित कर दिया गया।

सभा ने अल्प-संख्यकों तथा 'विशेष हितों' की राय को मान देने के साथ साथ भारतीय रियासतों की वार्ता समिति में साम्प्रदायिक तथा विभागीय आधार पर प्रतिनिधि लिये जाने के प्रयास के प्रति विरोध प्रकट किया। अल्प-संख्यकों ने अपने नेताओं द्वारा छोटी समिति के लिये प्रस्तावित सदस्यों के नामों के प्रति अनुमति प्रकट की। इस समिति तथा अन्य समितियों की नियुक्ति बिना किसी विरोध के की गई। इन सभी समितियों में लीगी प्रतिनिधियों के लिये स्थान रिक्त छोड़े गये हैं। अल्प संख्यकों सम्बन्धी प्रस्तावित विमर्श समिति (Advisory Committee on Minorities) में सदस्यों को लेने के प्रश्न पर अल्प संख्यकों की राय का बहुत ध्यान रखा जायेगा। इस समिति की नियुक्ति परिषद के जनवरी अधिवेशन में की जायेगी।

सभा में २०० से अधिक सदस्य उपस्थित हुए थे। सभा में लीगी सदस्यों को छोड़कर उपस्थिति ६०% प्रतिशत थी। विधान निर्माताओं

को अपने इस कार्य के प्रति कितनी लगन है, इसका यह प्रमाण है। यह कहा जा सकता है कि इस परिषद् में क्रान्ति के आधार पर निर्मित सभा जैसा जोश नहीं है। यह इस कारण कि भारतीय विधान परिषद् का निर्माण अन्य देशों की परिषदों के निर्माण के विपरीत एक अहिंसात्मक आंदोलन के परिणाम-स्वरूप ही हुआ है। देश पर शासन करने वाली सत्ता से समझौता होने के कारण ही इस परिषद् का निर्माण हुआ है, अतः इसे अपने कार्य में कुछ बातों पर विशेष ध्यान रखना ही होगा। लीग इसमें आगे चलकर शामिल हो या न हो, विधान-परिषद् स्वतन्त्र भारतीय जनतन्त्र के लिये विधान-निर्माण करने के कार्य में अग्रसर रहेगी।

ता० २३ दिसम्बर १९४६ ई० को विधान परिषद् के प्रथम अधिवेशन का कार्य समाप्त हुआ। इस बीच इसकी ६ बैठकें खुली हुईं और ३ बन्द कमरे में की गईं।

परिषद् को २० जनवरी १९४७ ई० तक के लिये स्थगित करते हुए स्थायी अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा—"हमें मुस्लिम लीग के दृष्टिकोण का भी ध्यान रखना चाहिये।"

२३ दिसम्बर के बाद की परिस्थितियाँ:—

विधान-परिषद् के प्रथम अधिवेशन के पहिले और बाद में देश के भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों में किसी प्रकार समझौता हो जाय और कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग किसी तरह एक ऐसी योजना स्वीकार करे जिससे देश में प्रगति का शीघ्र मार्ग खुल जाय, यही प्रश्न सबको परेशान कर रहा था। ब्रिटिश मन्त्रि शिष्ट-मंडल की १६ मई सन् १९४६ की घोषणा को पूर्ण रूप से स्वीकार करके कांग्रेस और कुछ दिनों के बाद लीग केंद्रीय सरकार में शामिल हुई थी, पर दोनों दलों का मतभेद उसी उग्र रूप से चल रहा था। कांग्रेस ने अपने पूर्व निश्चय के अनु-

सार विधान-परिषद में शामिल होकर उसे सफल बनाने का दृढ़ निश्चय कर रक्खा था पर, मुस्लिम लीग ने कांग्रेस को 'दुरंगी चाल" चलने का दोषारोपण कर विधान-परिषद में न शामिल होने का निश्चय कर लिया था। इस प्रकार दोनों दलों के बीच समझौता होते न देख इंगलैण्ड के प्रधान मन्त्री श्री एटली ने पं० नेहरू, श्री जिन्ना और सरदार बलदेव सिंह को लण्डन आने का निमंत्रण दिया। लण्डन की बातचीत के फलस्वरूप आपसी कोई समझौता न हो सका। पर ६ दिसम्बर सन् ४७ को बृटिश सरकार ने एक घोषणा निकाली जिसका देश की परिस्थिति पर बहुत निराशाजनक प्रभाव हुआ। इस घोषणा के मुख्य अंश इस प्रकार हैं:—

"विधान परिषद की कार्यवाही के सम्बन्ध में जब तक आपस में समझौता न हो जाय तब तक उसकी सफलता की अधिक सम्भावना नहीं अगर विधान-परिषद जिसमें भारतीय जनता के एक बड़े दल का प्रतिनिधित्व न हो, किसी प्रकार का विधान तैयार करती है तो ऐसे विधान को लागू करने का विचार सम्राट की सरकार ने कभी नहीं सोचा था।"

'सम्राट की सरकार ने कानूनी परामर्श किया है; उसे पूरा विश्वास है कि १६ मई के वक्तव्य का अर्थ वही है जिसे ब्रिटिश-मन्त्रि-मिशन ने किया था। ब्रिटिश-मन्त्रि-मिशन की वह व्याख्या १६ मई की योजना का आवश्यक अंग है।"

इस घोषणा ने नई-नई उलझनें पैदा कर दीं। यह साफ हो गया कि १६ मई की व्याख्या के लिए जो मतभेद भिन्न-भिन्न दलों में है उसे साफ करने के लिए फेडरल कोर्ट की राय लेना व्यर्थ है और प्रान्तों को अवांछित गुट में शामिल होना अनिवार्य है। आसाम और पंजाब में इस ६ दिसम्बर की नई घोषणा ने बहुत अधिक क्षोभ पैदा कर दिया। विधान परिषद के आसामी सदस्य श्री निकोलस राय ने परिषद में १८ दिसम्बर को कहा कि, "ब्रिटिश सरकार की घोषणा का यह अर्थ है कि आसाम का, जहाँ गैर मुसलमानों की संख्या अधिक है, विधान बंगाल

के लोगों के बहुमत अर्थात मुस्लिम लीग द्वारा बनाया जाय। हम किसी ऐसे अन्यायपूर्ण वस्तु का ख्याल नहीं कर सकते। आसाम एक गुट के साधारण बहुमत द्वारा तैयार किये जाने वाले विधान को कदापि स्वीकार नहीं करेगा।" इधर पंजाब के सिक्ख अपने को मुस्लिम लीग के हाथों धरोहर बनना कभी नहीं स्वीकार करेंगे। इस प्रकार समस्या जटिल होती गई। नई-नई गुत्थियाँ पैदा होती गईं। लीग को अपनी अड़ङ्गा नीति में प्रोत्साहन मिला और उसने २६ जनवरी सन् १९४७ की बैठक में यह तय किया कि लीगी सदस्य विधान-परिषद में शामिल न हों।

कांग्रेस जो आसाम तथा सिक्खों से वचनबद्ध थी, इस मामले का निर्णय संघ अदालत से कराने को तैयार होगई। किन्तु लार्ड पेथिक लारेन्स व जिन्ना दोनों ने अपने वक्तव्यों द्वारा स्पष्ट कह दिया कि वे संघ अदालत के निर्णय को स्वीकार नहीं करेंगे। इसके उपरान्त आसाम के प्रधान मंत्री श्री गोपीनाथ बारदोलाई ने अपने विश्वस्त व्यक्तियों को महात्मा गांधी के पास परामर्श के लिये भेजा। गांधी जी ने आसामवासियों को चेतावनी देते हुए कहा—"यदि वर्गीकारण के सम्बन्ध में कांग्रेस-कार्य-समिति का निर्णय स्पष्ट न हो तो आसाम को सैक्शनों में हरगिज भाग न लेना चाहिये। उसे अपना प्रतिवाद उपस्थित करके हट जाना चाहिये। यह कांग्रेस के विरुद्ध एक तरह का सत्याग्रह होगा किन्तु इसमे कांग्रेस का हित होगा। सही हो या गलत, कांग्रेस फीडरल कोर्ट का फैसला मानने को तैयार हो चुकी है। मैं जहाँ तक समझता हूँ, फीडरल कोर्ट का फैसला कांग्रेस के विरुद्ध ही होगा। फीडरल कोर्ट अंग्रेजों की सृष्टि है। ये एक ही थैली के चट्टे-बट्टों के समान हैं। अगर आसाम मौन रहता है तो वह मिट जायेगा। किन्तु आसाम जो नहीं करना चाहता वह कोई उससे जबरदस्ती नहीं करा सकता। वह बहुत दूर तक स्वायत्त शासन प्राप्त प्रान्त है। उसे पूर्ण स्वतंत्र और स्वायत्त शासन प्राप्त प्रान्त की भांति

चलना चाहिये। आसाम में वह साहस, संकल्प और विचार की मजबूती है या नहीं; मैं नहीं जानता, लेकिन आप यदि ऐसी घोषणा कर सकते हों तो बड़ी सुन्दर बात होगी।" परिषद के टुकड़ों में जाने का समय आते ही आसाम कह दे—"महाशयो! आसाम हटता है। भारत की स्वतंत्रता के लिए यह सर्वथा आवश्यक है। प्रत्येक इकाई को स्वयं फैसला करके और तदनुकूल आचरण करने का अधिकार होना चाहिये। मुझे आशा है कि इस दिशा में आसाम दूसरों का पथ-प्रदर्शन करेगा। सिक्खों के लिए भी मेरी यही सलाह है। लेकिन आसाम की स्थिति सिक्खों की अपेक्षा अधिक अनुकूल है। आसाम एक समूचा प्रान्त है और सिक्ख प्रान्त के अन्तर एक सम्प्रदाय मात्र हैं। लेकिन मैं समझता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने निर्णयानुसार काम करने का अधिकार मेरी तरह ही है।"

आगे चलकर गांधीजी ने आसामियों से कहा—"जनता से जाकर कहो कि यदि गांधीजी भी हमें विचलित करना चाहेंगे तो हम उनकी भी न सुनेंगे।"

उधर उत्तर पश्चिम सीमा-प्रान्त के प्रधान मंत्री डाक्टर खान साहब और सीमा प्रान्तीय एसेम्बली के स्पीकर मुल्लानवाजखाँ स्पष्ट शब्दों में पंजाब गुट के साथ सीमा प्रान्त को मिलाने का विरोध कर चुके हैं। अल्लानवाजखाँ कहते हैं—

"पठान और पंजाबी धर्म को छोड़ चाहे जिस दृष्टि से देखे जायँ बिलकुल ही एक दूसरे से भिन्न कौमें हैं। पंजाब के साथ सीमान्त प्रान्त को मिलाने की बात सुनते ही पठान का मन विद्रोही हो उठता है।

इस प्रकार दोनों पाकिस्तानी गुटों के प्रान्त—आसाम और सीमांत प्रदेश मि० जिन्ना के जाल में फँसने को तैयार नहीं हैं। मि० जिन्ना को अपना पक्ष समर्थन करने के लिए न्याय और युक्ति संगत तर्क दिखाई नहीं देते तो वे प्रलाप के सहारे दुराग्रही बने बैठे हैं। प्रान्तों की गुटबन्दी के सम्बन्ध में महात्मा गांधी द्वारा दी गई सलाह के प्रति

जब उनका ध्यान आकर्षित किया गया तो उन्होंने कहा कि "गांधीजी मौके-मौके पर बिलकुल ही भिन्न बातें कहते हैं, क्योंकि उनके सामने दुर्भेद्य अन्धकार है, इसलिए उनकी इस राय का कोई भी महत्व नहीं है।"—मि० जिन्ना अपने उक्त वक्तव्य द्वारा यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि गाँधीजी की बुद्धि ठिकाने पर नहीं है, इसलिए वे अंधकार में हैं।

समस्या गाँधी जी के वक्तव्य से और भी गंभीर हो उठी। आखिर २२ दिसम्बर को काँग्रेस कार्य-समिति ने इस पर एक वक्तव्य दिया—

"१६ मई १९४६ ई० के वक्तव्य पैरा १५ में विधान के बुनियादी सिद्धान्त ये थे—

"ब्रिटिश भारत और रियासतों को मिलाकर एक भारतीय संघ बनाया जाय और तमाम विषय सिवाय उसके जो कि संघ के आधीन हों और सब अधिकार प्रान्तों के पास रहने चाहिये और प्रान्तों को गुट बनाने की स्वतन्त्रता रहेगी।" अतः प्रान्तों को एक प्रकार से स्वतन्त्र माना गया था, सिवाय उन विषयों के जिन पर कि संघ का नियन्त्रण होगा। पैरा १९ में प्रान्तीय विभागों की बैठकों और इस बात का फैसला करने कि गुट बनाये जायँ या नहीं तथा किसी प्रान्त को उस गुट से जिसमें कि उसे रखा गया है, बाहर आने आदि के तरीकों का उल्लेख है।"

"कार्य-समिति ने अपने २४ मई १९४६ ई० के प्रस्ताव में यह बताया था कि बुनियादी सिद्धान्तों और योजना में सुझाई गई कार्य-प्रणाली में बहुत भारी अन्तर था, यहाँ तक कि प्रान्तीय स्वतंत्रता के बुनियादी सिद्धान्तों पर ही कुठाराघात होता था। इस पर मिशन ने २५ मई १९४६ ई० को एक बयान जारी किया जिसमें यह बताया गया कि काँग्रेस प्रस्ताव में वक्तव्य के १५ पैरे की जो यह व्याख्या की गई कि प्रान्त पहिली बार में ही यह निर्णय करने के लिए स्वतन्त्र हैं कि वे उस गुट में शामिल होना चाहते हैं या नहीं जिसमें कि उनको रखा गया है,

"२५ मई १९४६ ई० को मास्टर तारासिंह ने भारत-मंत्री को एक पत्र लिख कर सिखों की नाराजगी और आशकाओं पर प्रकाश डाला था और कुछ बातों का उनसे स्पष्टीकरण करने को भी कहा था। भारत मत्री ने १ जून १९४६ ई० को इसका उत्तर भेजा, जिसमें उन्होंने कहा—आपने पत्र के अन्त में जिन बातों को तफसील से लिखा है, उस पर मैने बहुत ध्यान पूर्वक विचार किया है। परन्तु मिशन न तो अपने वक्तव्यों में कुछ घटा-बढ़ा सकता है और न उसकी व्याख्या कर सकता है।"

"लीग ने अपना पूर्व निर्णय बदल दिया और बाकायदा प्रस्ताव पास करके ब्रिटिश मंत्रि-मिशन की योजना को अस्वीकार और उसके विरुद्ध कार्रवाई करने का फैसला किया। उसके नेताओं ने तभी से बार-बार इस योजना की बुनियाद— भारतीय संघ-विधान को चुनौती दी और हिन्दुस्तान को बांटने की अपनी पुरानी मांग दुहराई। ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य के बाद भी लीग के नेताओं ने भारत के बंटवारे और देश में दो आवाज और पृथक हुकूमते स्थापित करने की मांग की।"

"कार्य समिति को भारी खेद है कि ब्रिटिश सरकार द्वारा ऐसी कार्यवाही की गई जो उसके द्वारा दिये गये आश्वासनों से मेल नहीं खाती और जिसने हिन्दुस्तान के अधिकांश लोगों के दिलों में सन्देह उत्पन्न कर दिया। कुछ समय ब्रिटिश सरकार और भारत स्थित उसके प्रतिनिधियों का रुख देश की वर्तमान स्थिति में कठिनाइयाँ और उलझनें पैदा करने का रहा है। विधान-सभा के सदस्य चुने जाने के इतने अर्से बाद ब्रिटिश सरकार की इस दस्तन्दाजी ने एक नई स्थिति उत्पन्न कर दी है जो कि भविष्य के लिये खतरनाक है।"

"कार्य समिति की अब भी यह राय है कि ब्रिटिश सरकार ने गुटों में मत देने का जो तरीका बताया है वह प्रान्तीय स्वतन्त्रता से जो

कि १६ मई के वक्तव्य में प्रकट की गई योजना की बुनियाद है, बिलकुल मेल नहीं खाता।"

"कांग्रेस कार्य समिति ऐसी किसी चीज को भी टालने के पक्ष में है जो कि विधान-सभा के सफलता पूर्वक कार्य करने में रुकावट बनती हो और अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त करने के लिये सब कुछ करने को तैयार है, बशर्ते कि किसी बुनियादी सिद्धान्त का उल्लङ्घन न हो। देश के सम्मुख उपस्थित प्रश्नों का महत्व और उसके व्यापक परिणामों को समझते हुए कार्य समिति अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक जनवरी के आरम्भ में दिल्ली में बुला रही है ताकि वह नवीन घटनाओं पर विचार करके जैसी उचित समझे, हिदायतें जारी करे।"

इसके उपरान्त ५ जनवरी १९४७ ई० को कांग्रेस महासमिति ने २२ दिसम्बर १९४६ ई० के कांग्रेस कार्यकारिणी के वक्तव्य की ताईद की और अपना निर्णय इन शब्दों में व्यक्त किया—

"कांग्रेस महासमिति की यह दृढ़ राय है कि स्वतन्त्र भारत का विधान एक ऐसे आधार पर बनाया जाय जिसे अधिक से अधिक लोगों की स्वीकृति प्राप्त हो। बाहरी सत्ता का उसमें कोई किसी प्रकार का दखल नहीं होना चाहिये, और न किसी प्रान्त या प्रान्त के भाग पर किसी दूसरे प्रान्त द्वारा कोई जबरदस्ती की जाय। कांग्रेस महासमिति कुछ प्रान्तों, विशेषकर आसाम और सीमाप्रान्त तथा पंजाब के सिक्खों के मार्ग में १६ मई १९४६ ई० की ब्रिटिश मिशन योजना द्वारा डाली गयी कठिनाइयों को अच्छी तरह महसूस करती है और खासकर ऐसी हालत में जब कि ब्रिटिश सरकार ने अपने ६ दिसम्बर के वक्तव्य द्वारा कुछ धाराओं का भाष्य कर दिया है। कांग्रेस किसी भी ऐसी जबरदस्ती या सम्बद्ध लोगों की इच्छा के विपरीत उनपर लादे जाने वाले निर्णय में शामिल नहीं हो सकती। कांग्रेस महासमिति इस बात के लिये उत्सुक है कि विधान-परिषद स्वतंत्र भारत के लिये जो विधान बनाये उसमे सभी सम्बद्ध दलों की सदिच्छा

प्राप्त हो। कांग्रेस महा-समिति उन कठिनाइयों को दूर करने के उद्देश्य से जो विभिन्न अर्थों के कारण उत्पन्न हो गयी हैं, कांग्रेस जनों को ब्रिटिश भाष्य के अनुसार ही कार्य करने की सलाह देती है। लेकिन यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिये कि किसी प्रान्त पर जबरदस्ती न हो और न पंजाब के सिखों के अधिकारों को हानि पहुँचे। यदि किसी प्रान्त पर कोई जबरदस्ती करने की कोशिश की जाय तो कोई प्रान्त या प्रान्त का भाग जनता की इच्छा के अनुसार कार्य करने के लिये स्वतंत्र है।"

इससे स्पष्ट होगया कि कांग्रेस महा-समिति ने सिखों व प्रान्तों की स्वतंत्रता एवं उनके संरक्षण का पूरा खयाल रखते हुए उन्हें ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के भाष्य पर अमल करने की सलाह दी है। महा-समिति, आने वाले खतरों से विधान के कार्य में गड़बड़ी न पड़ जाये और लीग को साथ लेकर विधान-निर्माण करने के लिये रास्ता साफ हो जाये, इसी उद्देश्य को लेकर ब्रिटिश सरकार के उक्त वक्तव्य को मानने की सलाह दे रही है।

द्वितीय अधिवेशन

[ता० २० जनवरी १९४७ से २५ जनवरी १९४७ तक]

अनिश्चित वातावरण

भारतीय विधान-परिषद का दूसरा अधिवेशन २० जनवरी से आरंभ होकर २५ जनवरी को समाप्त हुआ। यह अधिवेशन विशेष लम्बा नहीं था। कुल ६ दिन ही इस अधिवेशन की बैठकें हुईं। विधान-परिषद को कुछ कमेटियाँ और नियुक्ति करनी थी, कुछ नियम स्वीकार करने थे और भारतीय-विधान के उद्देश्यों के सम्बन्ध में पण्डित जवाहरलाल नेहरू द्वारा पिछले अधिवेशन में पेश किये गये प्रस्तावों का निबटारा करना था। यह कुल काम-काज आरम्भिक अधिवेशन का ही एक अंग था। यह तो पिछले अधिवेशन के समय ही निबट सकता था किन्तु मुस्लिम लीग का सहयोग मिल जाने की आशा ने उस समय उन समस्त कार्यों को अधूरा ही रख दिया और प्रथम अधिवेशन इसी उम्मीद में उस समय स्थगित कर दिया गया। विधान-परिषद को जिन कमेटियों की नियुक्ति करनी थी उनमें मौलिक अधिकारों, अल्प-सख्यकों, कबायली और प्रांतीय शासन के क्षेत्र से अलग रखे गये इलाकों के बारे में सलाहकार कमेटी (Advisory Committees for Fundamental Rights, Minorities, Excluded Areas) की नियुक्ति विशेष महत्व रखती थी। इस कमेटी की नियुक्ति विधान-परिषद ने इसीलिये की कि उसके संगठन से भारत के सभी छोटे-बड़े अल्पसख्यकों को समाधान हो जाय और वे उसके द्वारा भावी विधान में अपने सभी उचित अधिकारों के लिये आवश्यक संरक्षण प्राप्त कर सकें।

जब पिछली बार विधान-परिषद का अधिवेशन स्थगित किया गया था तो यह आशा प्रकट की गई थी कि परिषद के इस अधिवेशन में मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों के लिये सम्मिलित होना सम्भव हो जायेगा। मुस्लिमलीग की ओर से शामिल होने के मार्ग में उस समय तक मुख्य बाधा यह बताई जा रही थी कि ब्रिटिश-मन्त्रि-मंडल की योजना में विधान-परिषद के विभागों की जो कार्य-पद्धति बताई है, उसको कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया है। कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य को स्वीकार करके उस बाधा को भी दूर कर दिया। कांग्रेस का निर्णय तो ६ जनवरी को ही हो चुका। यदि मुस्लिम लीग चाहती तो उसके पास इतना समय था कि वह विधान-परिषद का दूसरा अधिवेशन आरम्भ होने तक कांग्रेस के निर्णय पर विचार कर लेती और अपने प्रतिनिधियों को उसमें शामिल होने की अनुमति दे देती। किन्तु मुस्लिम लीग में आज तक भी सहयोग की प्रवृत्ति जाग्रत नहीं हुई है। और अपनी परम्परा के अनुसार ही वह अवरोधक नीति का पल्ला पकड़े रही। लीग की कार्यसमिति की बैठक २६ जनवरी को बुलाने का मतलब ही यही था। इस प्रकार विधान-परिषद का यह द्वितीय अधिवेशन भी लीग प्रतिनिधियों की अनुपस्थिति में ही हुआ, क्योंकि विधान-परिषद किसी प्रकार के सद्भावना के अभाव में अनिश्चित समय के लिए स्थगित करने के पक्ष में नहीं थी। लीग के विधान-परिषद में शामिल होने के लिए पूर्ववत मार्ग खुला रहेगा। लेकिन मुस्लिमलीग के कारण ही देश आजादी की ओर अपनी कूच को अनिश्चित समय के लिए नहीं रोक सकता।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य को स्वीकार करते हुए जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, उस पर आज तक जिन्ना साहब की प्रतिक्रिया सामने नहीं आई हैं। किन्तु प्रमुख लीगी नेताओं ने जो उद्गार प्रकट किये हैं उनसे पता चलता है कि उन्हें इस प्रस्ताव से पूरा सन्तोष नहीं हुआ है। उन्हें शिकायत

है कि कांग्रेस ने इस प्रस्ताव में प्रान्तों की स्वतंत्रता पर पूरा जोर दिया है। किन्तु लीगी नेताओं को इससे हिचकिचाने की आवश्यता नहीं होना चाहिये। उन्हें यह महसूस करना चाहिये कि आसाम और सीमा प्रान्त को और सिखों को गुटबन्दी के बारे में यथार्थ आशकाएँ हैं। उन्हें अपने कथन और कार्यों द्वारा उसके निवारण प्राप्त करने का पूरा अधिकार है। विधान-परिषद के "बी" और "सी" विभागों में उन्हें वे संरक्षण निश्चित रूप से दिये जाने चाहिये जो अखिल भारतीय संघ में लीगी नेता मुसलमानों के लिये प्राप्त करने को उत्सुक हैं। यदि मुस्लिम लीगी प्रतिनिधि "बी" और "सी" विभागों में सब पक्षों की सद्भावना से विधान बनाने को तैयार हो जाँय तो सारी कठिनाई दूर हो सकती है, और विधान-निर्माण का कार्य शीघ्र ही सफल भी हो सकता है।

पिछले दिनों ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में भारत के विषय में जो बहस हुई थी उसके दौरान में चर्चिल और सायमन जैसे विरोधी पक्ष के समर्थ वक्ताओं ने मुस्लिम लीगी प्रतिनिधियों की विधान-परिषद में अनुपस्थिति की ओट में विधान-परिषद के प्रतिनिधित्व सम्बन्धी महत्व को कम करने की चेष्टा की। इसमें शक नहीं कि मुस्लिम लीग की अनुपस्थिति अवश्य ही खेद जनक है फिर भी यह तो यथार्थ में सत्य है कि विधान-परिषद भारत की सभी जातियों और दलों का प्रति-निधित्व करती है। इस मामले में मुस्लिम लीग अकेली है और दुराग्रही प्रवृत्ति का पल्ला पकड़े हुए है अतः वही इसके लिये जिम्मेदार भी है।

आसाम का भय :—

आसाम के प्रश्न ने इधर की परिस्थिति को विशेष रूप से जटिल कर दिया है। आसाम किसी प्रकार अपने को बंगाल के लीगी बहुमत के हाथ बेचने को तैयार नहीं है। "सी" गुट के ७० सदस्यों में आसाम के केवल १० सदस्य ही रहेंगे। अतः आसाम को यह भय

है कि "सी" विभाग के सदस्य आसाम के हित के विरुद्ध नियम बनायेंगे जिससे भविष्य में भी उस गुट से अलग होने की स्वतंत्रता आसाम को न रह सके। ६ दिसम्बर की घोषणा के बाद यह आशंका और भी दृढ़ होगई क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने यह एलान किया कि गुटों की समस्याओं का निर्णय केवल साधारण बहुमत पर होगा। इस घोषणा ने प्रान्तीय स्वतंत्रता का गला घोंट दिया। आसाम का दावा है कि प्रान्तीय स्वतंत्रता ब्रिटिश मंत्रि-मण्डल की योजना का आधार है इसलिए उसे अपना भाग्य-निर्णय करने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए।

अखिल भारतीय कांग्रेस-कमेटी ने ब्रिटिश सरकार की व्याख्या को स्वीकार कर लिया है और इस कारण आसाम की स्थिति और भी पेचीदा होगई है। इस स्वीकृति के बाद यह और भी जरूरी हो जाता है कि आसाम के कांग्रेसी प्रतिनिधि विधान-परिषद के "सी" विभाग में बैठकर बंगाल और आसाम का विधान बनायें और गुटबन्दी के बारे में भी निर्णय करें। कांग्रेस ने यह कहा है कि वह सम्बन्धित लोगों की इच्छाओं के विरुद्ध उन पर किसी विधान को लादने में साथ देने के लिये रजामन्द नहीं होगी। किन्तु ऐसा लगता है कि आसाम के प्रतिनिधि कांग्रेस के इस निश्चय के बाद भी विधान-परिषद के विभाग में बैठने को तैयार नहीं हैं। आसाम के प्रधान मंत्री श्री बारदोलाई ने कहा है कि आसाम के प्रतिनिधि विधान-परिषद का तो बहिष्कार नहीं करेंगे किन्तु वे किसी भी दशा में उसके विभाग में नहीं बैठेंगे। प्रान्तीय आसाम कांग्रेस कमेटी ने भी इसी आशय का एक प्रस्ताव पास किया। इससे यह स्पष्ट हो गया कि आसाम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की कार्य समिति का यह प्रस्ताव अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के प्रस्ताव से मेल नहीं खाता। कांग्रेस के अनुशासन की दृष्टि से इस प्रकार एक अजीब परिस्थिति उपस्थित होगई है। आम धारणा तो यही है कि केन्द्रीय संस्था का निर्णय उसकी शाखाओं को अक्षरशः

मान्य होना चाहिये किन्तु आसाम प्रान्तीय कार्य समिति अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के निर्णय का स्पष्ट ही विरोध कर रही है। महात्मा गांधी की सलाह ने आसाम के इस रवैये को काफी प्रोत्साहन प्रदान किया है। उन्होंने कहा है कि आसाम और सीमाप्रान्त के अथवा सिखों के प्रतिनिधि चाहें तो विधान-परिषद् से अथवा गुटों से अलग हो जाने का निर्णय कर सकते हैं। गांधी जी की यह सलाह तो मान्य ही है कि आसाम को उसकी इच्छा के विरुद्ध बंगाल में नहीं मिलना चाहिये और न सीमा प्रान्त को अथवा सिखों को उनकी इच्छा के विरुद्ध पंजाब और सिन्ध के गुटों में शामिल किया जाना चाहिये। किन्तु यदि मुस्लिम लीग विधान-परिषद में शामिल हो जाती है और आसाम और सीमा प्रान्त और सिखों के प्रतिनिधि उससे असहयोग कर देते हैं तो समस्या सुलझती नहीं, बल्कि एक नयी उलझन पैदा हो जाती है। विधान-निर्माण के कार्य में सभी प्रान्तों और दलों का सहयोग आवश्यक है। उसे प्राप्त करने के लिए कांग्रेस जितनी उत्सुक है, उतना ही उत्सुक "बी" और "सी" विभागों में बहुसंख्यक दल होने के नाते मुस्लिम लीग को भी होना चाहिये। गांधी जी ने कहा है कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों को अपने कार्य-क्रम और नीति मूलतः इतनी आकर्षक रखनी चाहिये कि अनिच्छुक प्रान्तों और दलों के विवेक को स्वीकार्य हो सके। मौजूदा गुत्थी इस ढंग से सुधर सकती है। यदि मुस्लिम लीग उन्हें उचित आश्वासन देने को प्रस्तुत हो जाय तो यह समस्या ही सुलझ जाय।

ऐसे ही निराशापूर्ण वातावरण के बीच विधान-परिषद का दूसरा अधिवेशन २० जनवरी से आरम्भ हुआ। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद अध्यक्ष पद पर आसीन थे। प्रारम्भ में उन सदस्यों ने जो पहिले अधिवेशन में उपस्थित नहीं थे अपने प्रमाण-पत्र दाखिल किये और रजिस्टर हाजिरी पर हस्ताक्षर किये। इसके बाद विधान-परिषद के अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने एक महत्व-पूर्ण वक्तव्य देते हुए कहा—

"गत दिसम्बर में ब्रिटेन की लोक-सभा और लार्ड-सभा में कुछ वक्तव्य ऐसे दिये गये हैं जिनमें भारतीय विधान-परिषद का स्वरूप कम प्रतिनिधिक बतलाया गया है। इनमें श्री चर्चिल और श्री सायमन मुख्य थे। चर्चिल ने कहा कि विधान-परिषद हिन्दुस्तान की एकमात्र बड़ी जाति का प्रतिनिधित्व करती है। सायमन ने चर्चिल की अपेक्षा विशेष स्पष्ट बात कही थी। उन्होंने विधान-परिषद को 'हिन्दुओं की संस्था' कहा था। उन्होंने आगे यह भी कहा था कि 'क्या दिल्ली में होने वाली हिन्दुओं का इस बैठक को सरकार उसी रूप में विधान परिषद मानती है जिस रूप में उसने घोषित किया था?' ये दोनों व्यक्ति उत्तरदायित्व के उच्चतम पदों पर रहे हैं और भारत के मामलों में इनका लम्बा और घनिष्ठ सम्बन्ध भी रहा है। वर्तमान राजनीतिक विवादों के सम्बन्ध में उनके विचार जो भी हों, मुझे विश्वास है कि वे ऐसी बातें करना पसन्द नहीं करेंगे जो वास्तविक तथ्यों के विरुद्ध हैं और जिनसे शरारत भरे परिणाम निकल सकते हों। इसी कारण मै इस अवसर पर विधिवत् वास्तविक तथ्यों को बताना आवश्यक समझता हूँ।

"परिषद के कुल २९६ सदस्यों में से, जो आरंभिक अधिवेशन में भाग लेने वाले थे, २१० सदस्य सम्मिलित हुए। इन २१० सदस्यों में १६० हिन्दू सदस्यों में से १५५ हिन्दू सदस्य, ३३ परिगणित जातीय सदस्यों में से ३० परिगणित जातीय सदस्य, पूरे ५ सिख सदस्य, ७ भारतीय ईसाई सदस्यों में से ६ भारतीय सदस्य (जिनमें से एक को पिछड़ी हुई जातियों का सदस्य भी समझा जाता है) पूरे ५ पिछड़ी हुई जातियों के सदस्य, पूरे ३ एंग्लोइंडियन प्रतिनिधि, पूरे ३ पारसी प्रतिनिधि, और ८० में से ४ मुसलमान प्रतिनिधि शामिल थे।"

"इसमें स्पष्ट अनुपस्थिति केवल मुस्लिम लीग की है, जिसके लिये हमें खेद है। लेकिन उक्त संख्याओं से यह स्पष्ट है कि मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों को छोड़ कर, भारत की प्रत्येक जाति, चाहे

उसका प्रतिनिधित्व करने वाले लोग किसी भी दल के हों, एसेम्बली में सम्मिलित थे। इसलिये यह कहना कि परिषद् 'भारत की एक ही बड़ी जाति का प्रतिनिधित्व करती है' या वह 'हिन्दुओं की संस्था है' या 'सवर्ण हिन्दुओं की संस्था' है, वास्तविक तथ्यों के विरुद्ध है।"

"सदस्यों को स्मरण होगा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रस्ताव पर जब विधान निर्मात्रि-परिषद् में बहस हो रही थी तो श्री जयपाल-सिंह (विहारी प्रतिनिधि) ने बताया था कि मन्त्रि-मिशन के १६ मई १९४६ ई० के वक्तव्य, जैसा कि वह भारत में प्रकाशित हुआ है, एसेम्बली कार्यालय द्वारा प्रचारित छपे हुए पर्चे में अन्तर है। यह अन्तर उन्होंने वक्तव्य के २०वें अवतरण में बताया है। उनकी यह शिकायत थी कि जब भारत में प्रकाशित मूल वक्तव्य में सम्बन्धित हितों के "पूर्ण" प्रतिनिधित्व का उल्लेख था, तो हमारे पुनः मुद्रित संस्करण में केवल "उचित" प्रतिनिधित्व का ही उल्लेख है। तब से मैंने इस मामले की जांच करवाई है। भारत सरकार के प्रधान सूचना अफसर ने, जिन्होंने कि भारत में मूल रूप से वक्तव्य को प्रकाशित किया और जिनसे सलाह ली गई, हमें यह सूचित किया है कि मन्त्रि-मण्डल मिशन के सूचना अफसर ने जो प्रति दी थी ठीक उसी के अनुरूप यह छापी गई। पार्लियामेन्ट के समक्ष जो श्वेत-पत्र रखा गया था उसी को ठीक नकल हमारे पर्चे में की गई है। जान पड़ता है कि पार्लियामेन्ट में पेश करने से पूर्व उस वक्तव्य में मन्त्रि-मण्डल-मिशन ने छोटे मोटे परिवर्तन किये और उन्ही संशोधनों के साथ वह भारत में छपा।"

"श्री जयपालसिंह द्वारा निर्देषित अंतर ही एक मात्र अन्तर नहीं है। दूसरे अन्तर भी हैं। लेकिन मुझे सन्तोष है कि प्रायः सब मामलों में ये अन्तर केवल मौखिक हैं। बीसवें पैरेग्राफ में अन्तर शुद्ध मौखिक है या नहीं, इस पर भिन्न-भिन्न रायें हो सकती हैं। व्यक्तिगत रूप से मैं यह नहीं समझता कि किसी महत्व पूर्ण अन्तर का समावेश हुआ है।

इस महत्व पूर्ण अध्यक्षीय वक्तव्य के बाद नेहरुजी के उद्देश्य प्रस्ताव पर बहस आरम्भ हुई। इसके पहिले प्रथम अधिवेशन में भी इस उद्देश्य प्रस्ताव पर काफी बहस की जा चुकी है। सबसे पहिले उक्त प्रस्ताव पर भाषण करते हुए सर राधाकृष्णन् ने कहा—"ऐसे भी लोग हैं जो यह कहते हैं कि ब्रिटिश मंत्रि-मिशन की योजना के अनुसार हमे वास्तविक आजादी नहीं मिल सकेगी और न हममें वास्तविक एकता ही पैदा हो सकेगी। उनका कहना यह है कि इतिहास की साक्षी तो यह है कि दूसरे देशो में हिंसा से ही क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। फिर हम लोग विधान सभा में बहस करके अथवा बातचीत करके भारत मे वैसे परिवर्तन कैसे कर सकते हैं? लेकिन उत्साही तथा दूरदर्शी लोग मौके से सदैव ही फायदा उठाया करते हैं। हमें भी एक मौका मिला है और उससे फायदा उठाकर हम यह देखना चाहते हैं कि क्या हम उक्त परिवर्तन उन साधनों से कर सकते हैं जो अतीत इतिहास की दृष्टि से असाधारण हैं।"

"आजादी के सवाल पर तो कोई मतभेद रह ही नहीं गया। भारत ब्रिटेन के दूसरे उपनिवेशों की तरह उपनिवेश नहीं रह सकता। फिर भी यदि हम लोग ब्रिटिश-राष्ट्र-समूह से अलग हो जाने का निश्चय करें तो स्वेच्छा से सहयोग तथा पारस्परिक मेल-जोल के सैकड़ो उपाय और भी हो सकते हैं। ऐसे स्वेच्छापूर्ण सम्बन्ध स्थापित होते हैं या नहीं, यह सब कुछ ब्रिटिश सरकार के रुख पर निर्भर करता है। हाँ, चर्चिल के वक्तव्य जैसे वक्तव्यों से सिर्फ मुसीबत बढ़ती है।"

"जब तक भारत में अंग्रेजी राज्य कायम है तब तक रियासतों में भी देशी नरेश बने रहेंगे। यदि एक सार्वभौम सत्ता इस देश को जीत कर के प्राप्त की गई सर्वोच्च सत्ता के बावजूद अपने दायित्व को जन प्रतिनिधियों के हस्तांतरित कर रही है तो जो लोग सार्वभौम सत्ता पर निर्भर करते हैं, उन्हें भी अपना दायित्व जन प्रतिनिधियों को हस्तांतरित कर देना चाहिये। अनेक राजा मेरे मित्र हैं। मुझे आशा है कि वे भी

अपने देश के पुनर्निर्माण में महत्वपूर्ण भाग लेंगे। हमारे दिल में उनके प्रति कोई भी दुर्भावना नहीं है।"

"हम किसी खास श्रेणी अथवा जाति के लिये विधान नहीं बना रहे। हम तो समूचे भारतीयों के लिये स्वराज्य स्थापित कराने की कोशिश कर रहे हैं। हम एकाधिकार का अन्त कर देंगे। हम तो सर्व-साधारण जनता की तमाम आशाएँ पूरी करने के लिये काम कर रहे हैं। अतएव हमें अपने उद्देश्य स्पष्ट रूप में निश्चित कर लेने चाहिये। हमें अनुपस्थित सदस्यों के आने की प्रतीक्षा में इस पर विचार स्थगित नहीं करना चाहिये।"

"कांग्रेस ने अपनी इच्छा के विरूद्ध गुटबन्दी के सम्बन्ध में ब्रिटिश सरकार की व्याख्या को स्वीकार किया है। इसके बाद और अल्प-संख्यकों को उचित सरक्षण देने के बाद भी यदि ब्रिटिश सरकार ने परिवर्तन को टालने के लिये कोई और बहाना निकाल लिया तो मानव जाति के इतिहास में यह सब से विश्वासघात होगा।"

"इस समय ब्रिटेन के पास दो रास्ते हैं। ब्रिटिश सरकार विधान-सभा द्वारा तैयार किये गये विधान को स्वीकार कर ले और यह देख ले कि उसमें अल्प-संख्यकों को पर्याप्त संरक्षण दिये गये हैं या नहीं। यदि उसने वैसा कर लिया तो हम उसके साथ सहयोग करने को तैयार हो जायेंगे। लेकिन उक्तशर्तें पूरी होने के बाद भी यदि उसने हमारे मार्ग में अड़चनें पैदा कीं तो हमारा उसके साथ कोई सहयोग न हो सकेगा।"

सर एस० राधाकृष्णन् के बाद नेहरू प्रस्ताव पर श्री एन० बी० गाडगिल, श्रीमती पण्डित, श्री रंगा, श्री एस० नागप्पा, श्री जगत, नारायण लाल, श्री अलगूराय शास्त्री, श्री के० माधव मैनन, श्री बी० दास, श्री देवेन्द्र नाथ सामन्त, डा० सौजा, श्री खेड़गीकर, डा० एस सी मुकुर्जी, श्री एच पी पाटस्कर, श्री एस० एच० प्रेटर, श्री आर० बी० धुलेकर, श्री विश्वम्भर नाथ त्रिपाठी ने अपने-अपने विचार प्रकट किये। सभी वक्ताओं ने प्रस्ताव की मूल बातों का जोरदार समर्थन किया और

विचार कर एक निश्चित मार्ग निर्धारित करने पर जोर दिया। बहस के बीच में ही २५ जनवरी को डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कार्य-सचालन समिति (Steering Committee) के सदस्यों की कांग्रेस पार्टी द्वारा चुनी हुई नामावली परिषद् के सामने पेश किया और सभा ने उसे स्वीकार कर लिया। इस समिति के सदस्यों के नाम इस प्रकार हैं:—

१ मौलाना आजाद २ सरदार पटेल, ३ एच० सी० प्रेटर ४ श्रीमती दुर्गाबाई, ५ श्री किरण शंकर राय, ६ श्री सत्यनारायण सिंह ७ श्री एस० एन० मने, ८ श्री के० एम० मुन्शी, ६ दीवान चिमनलाल १० श्री अनन्त शायतम्, ११ सरदार उज्वल सिंह।

उक्त वक्ताओं के बाद डाक्टर जयकर से निवेदन किया गया कि वे नेहरू प्रस्ताव पर किये गये अपने संशोधन के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहे तो कह सकते हैं। डा० जयकर ने कहा कि "मैं अपने उस सशोधन को वापस लेता हूँ जिसमें मैने यह माग की थी कि नेहरू प्रस्ताव पर बहस करना स्थगित कर दिया जाय। मैंने विगत अधिवेशन में यह सुझाव पेश किया था कि हमें २० जनवरी तक प्रतीक्षा करना चाहिये जिसमें मुस्लिम लीग को विधान-सभा में आने का निर्णय करने का समय मिल जाय। लेकिन लीग ने उसके जवाब में यह फैसला किया कि उसकी कार्य-कारिणी का अधिवेशन विधान-परिषद् के आरम्भ होने के ६ दिन बाद की जाय। ऐसी सूरत में मैं अपना प्रस्ताव वापस लेता हूँ।"

आगे चलकर डा० जयकर ने कहा कि "मैं अपना संशोधन तो वापस ले चुका हूँ लेकिन मुझे अपने थोड़े से विचार पेश करने हैं। आज्ञा हो तो पेश कर दूँ।" इस पर व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति उठाते हुए पडित गोविन्द बल्लभ पंत ने कहा कि "अपना संशोधन वापस ले लेने के बाद अपना कोई और संशोधन पेश करके डा० जयकर को गड़बड़ी पैदा नहीं करनी चाहिये। वे अपना सुझाव संशोधन की शक्ल में पेश करते हैं या नहीं, इसमें कोई खास फर्क नहीं पड़ता। यदि डा०

जयकर अपना कोई नया सुझाव पेश करके विधान सभा को एक नई परेशानी में डाल दें तो उसे संशोधन न कहने से दिक्कत दूर न हो सकेगी। अब वे किसी भी रूप में कोई नया सुझाव पेश नहीं कर सकते। अध्यक्ष ने जो उन्हें विशेष अवसर प्रदान किया था, उससे उन्होंने लाभ उठा लिया है। अब उनसे बैठ जाने की प्रार्थना की जानी चाहिये।'

अध्यक्ष ने व्यवस्था दी कि "अब कोई नया प्रस्ताव पेश नहीं किया जा सकता।" इसके बाद श्री पंजाबराव देशमुख ने कहा कि "डाक्टर जयकर को नया प्रस्ताव पेश करने का अधिकार दिया जाना चाहिये।" श्री आर. के. सिधवा ने पन्त जी की आपत्ति का समर्थन किया।

अध्यक्ष ने परिषद से पूछा कि "क्या वह सहमत है कि डाक्टर जयकर अपना संशोधन वापस ले लें? हाउस मान गया और उसके बाद अध्यक्ष ने घोषित किया कि "जयकर और कोई वक्तव्य पेश नहीं कर सकते।"

२२ जनवरी को विधान-परिषद में अपने उद्देश्य सम्बन्धी प्रस्ताव पर हुई बहस का उत्तर देते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक महत्वपूर्ण भाषण दिया। उसमें उन्होंने कहा—

"जो लोग विधान-सभा में शामिल होना चाहते थे, उन्हें काफी अवसर दिया जा चुका है। बदकिस्मती से अभी तक उन्होंने शामिल होने का कोई निर्णय नहीं किया, मुझे इसका खेद है। अब तो मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि भविष्य में वे जब भी आना चाहे, हम उनका स्वागत करेंगे। वे आना चाहें तो आ सकते हैं, मगर अब हम यह साफ कर देते हैं कि भविष्य में किसी के आने अथवा न आने का इन्तज़ार नहीं किया जावेगा और हमारी गाड़ी रुकेगी नहीं (करतल ध्वनि) हमने काफी इन्तजार किया। ६ सप्ताह के लिए ही नहीं, कुछ ने सालों तक और देश ने कई पीढ़ियों तक इन्तजार किया। आखिर-कार अब हम कब तक इन्तजार करें? यदि हममें से कुछ खुशहाल

लोग इन्तजार कर सकते हों तो करें, लेकिन प्रश्न यह है कि देश के भूखे नगे लोग कब तक इन्तजार करें !"

"इस प्रस्ताव में सर्वोच्च सत्ता प्रजा में निहित होने का प्रतिपादन है। किन्तु कुछ रियासतों के राजा इससे सहमत नहीं? यह आक्षेप आश्चर्यजनक है। कहना न होगा कि यदि कोई राजा अथवा कोई और व्यक्ति ऐसा एतराज वस्तुतः गंभीरता के साथ उठाता है तो हमें समूची रियासती प्रणाली तथा नरेशों व मंत्रियों की एक साथ निन्दा करना पड़ेगी। (हर्ष ध्वनि) किसी भी व्यक्ति का आज यह कहना निन्दनीय है कि उसे मनुष्यों पर राज्य करने का दैवी अधिकार प्राप्त है, फिर चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो। किसी भी व्यक्ति के ऐसे मन्तव्य को सहन नहीं किया जा सकता, (हर्ष ध्वनि) यह एक ऐसी चीज है जिसे यह परिषद कभी स्वीकार न कर सकेगी। मुझे आशा है कि यदि यह चीज परिषद के सामने पेश की गई तो वह उसे रद्द कर देगी। राजा के दैवी अधिकारों के बारे मे हमने काफी सुना। हमने अतीत काल के इतिहास में भी इस बारे में काफी पढ़ा है। हमारा यह खयाल था कि इसका खात्मा हो चुका है। लेकिन आज भारत में यदि कोई इस प्रश्न को फिर उठाता है तो उससे प्रकट होता है कि भारत में कुछ हिस्से और कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो वर्तमान का खयाल किये बिना अतीत में सराबोर हैं। (हर्ष ध्वनि) अतएव मैं उनसे एक मित्र के नाते निवेदन करूँगा कि यदि वे अपनी इज्जत चाहते हैं तो उन्हें उक्त खयाल अपने दिमाग में भी नहीं लाना चाहिये। इस सम्बन्ध में किसी किस्म का समझौता नहीं किया जा सकता। (हर्ष ध्वनि)"

"यदि रियासतों के प्रतिनिधि विधान-सभा में शामिल नहीं हैं तो इसमें हमारा कोई कुसूर नहीं। यह कुसूर उस योजना का है जिसके अनुसार हमें काम करना पड़ रहा है। अब हमें चुनाव करना है कि क्या कुछ व्यक्तियों के यहाँ न आ सकने के कारण, हम अपना काम बन्द कर दें ? रियासती प्रतिनिधियों के यहाँ न आ सकने के कारण

इस प्रस्ताव पर ही हन अपितु अन्य विषयों पर भी विचार करना बन्द कर देना खतरनाक होगा। जहाँ तक हमारा ताल्लुक है हम चाहते हैं कि वे जितनी जल्दी आना चाहें आ सकते हैं। यदि वे अपनी अपनी रियासतों के ठीक ठीक प्रतिनिधि होकर आयेंगे तो हम उनका स्वागत करेंगे।"

"इस प्रस्ताव में हमने यह दावा किया है कि हम लोग सर्वतंत्र स्वतंत्र भारत के लिये प्रजातंत्र के आधार पर विधान तैयार करेंगे। भारत के लिये हम और क्या चाह सकते हैं? कोई भी हालत क्यों न हो, हम लोग सिवाय प्रजातंत्रीय भारत के और किसी चीज की कल्पना भी नहीं कर सकते। अब प्रश्न यह है कि उस प्रजातंत्र का इंग्लैण्ड ब्रिटिश राष्ट्र समूह तथा अन्य देशों के साथ कैसा सम्बन्ध रहेगा? चिरकाल से हम लोग स्वाधीनता दिवस पर यह प्रतिज्ञा लेते आ रहे हैं कि भारत को ब्रिटेन के साथ सम्बन्ध विच्छेद कर लेना चाहिये, क्योंकि यह सम्बन्ध ब्रिटिश गुलामी का प्रतीक है। हमने कभी यह खयाल नहीं किया कि हम विश्व के दूसरे देशों से अलग अलग रहें अथवा उन देशों का विरोध करना आरम्भ कर दें जो अब तक हम पर शासन करते रहे हैं। आज हम लोग आजादी के द्वार पर खड़े हैं। इस नाजुक घड़ी में हम किसी भी देश के साथ संघर्ष मोल न लेंगे। हम सब के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेंगे। हम लोग ब्रिटिश जनता व ब्रिटिश राष्ट्र समूह के साथ भी मैत्री स्थापित करना चाहते हैं।"

"मैं अपना यह प्रस्ताव न केवल इस परिषद अपितु समूचे विश्व के सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ। इस प्रस्ताव द्वारा हम यह साफ कर देना चाहते हैं कि हम सब के साथ मैत्री चाहते हैं, हम किसी के साथ बैर विरोध नहीं करेंगे। हमने अतीत काल में काफी नुकसान उठाया है, हमने काफी संघर्ष किया है और शायद हमें भविष्य में भी कोई संघर्ष करना पड़े, लेकिन एक महात्मा के नेतृत्व में हम लोगों

ने सब के साथ, यहाँ तक कि अपने विरोधियों के साथ मैत्री व सद्-भावना पूर्ण व्यवहार करने की सोची है। हम इसमें कहाँ तक सफल हुए हैं, यह मैं नहीं जानता, कारण यह कि हम लोग कमजोर प्राणी हैं। फिर भी उक्त संदेश की छाप इस देश के करोड़ों व्यक्तियों पर पड़ चुकी है। हम चाहे कितनी ही गलतियाँ क्यों न कर बैठें, लेकिन हम इस सन्देश को भूल तो नहीं सकते। हममें से कुछ व्यक्ति बड़े हैं और कुछ छोटे। लेकिन हम सब छोटे व्यक्ति इस समय अनेक उच्च सिद्धान्तों के प्रतिनिधि हैं। अतएव हम पर भी कभी बड़प्पन की छाया पड़ जाती है। और हम भी अपने को बड़ा मानने लगते हैं। आज इस विधान-सभा में हम लोग एक महान आदर्श लेकर उपस्थित हैं। इस प्रस्ताव में भी इसका जिक्र कर दिया गया है। मुझे आशा है कि इस प्रस्ताव के अनुसार एक ऐसा विधान तैयार किया जायेगा जिससे कि हमे वह आजादी मिल जायेगी जिसे पाने के लिये हम अब तक कोशिश करते रहे हैं। उस आजादी के अनुसार सब को रोटी मिलेगी, कपड़ा मिलेगा और रहने के मकान मिलेंगे। इतना ही नहीं, सबको उन्नति करने का अवसर भी मिलेगा। मुझे आशा है कि हमारी आजादी से एशिया के दूसरे देश भी आजाद हो जायगे। हम लोग एक तरह से एशियाई देशों की आजादी के नेता हो चुके हैं। (हर्षध्वनि)।'

"यदि भारत की उन्नति नहीं होती है तो इस मुल्क में कोई भी जाति, कोई दल या कोई धार्मिक वर्ग उन्नति नहीं कर सकता। यदि भारत का पतन होता है तो उसके साथ हम सबका पतन होगा, चाहे हमारे पास कुछ ज्यादा सीटें हो या कम, चाहे हम थोड़ा फायदा उठा लें या ज्यादा। लेकिन यदि भारत की हालत ठीक रही, यदि वह एक आजाद और सजीव देश के रूप में रहा तो हम सब का भला होगा, चाहे हम किसी भी जाति या धर्म के हों। मैं विधान सभा को यह नहीं बता रहा हूँ कि क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये! लेकिन

मैं परिषद को इस बात पर विचार करने को कहूँगा कि हम क्रान्तिकारी परिवर्तनों के द्वार पर खड़े हैं—ये परिवर्तन हर रूप में क्रान्तिकारी होंगे। जब किसी देश की आत्मा अपने बंधनों को तोड़ती है तो वह विशेष रूप से कार्य करती है और उसको अजीब तरीके से काम करना चाहिये। सम्भव है कि वह विधान सभा जो विधान बनाये उससे स्वतंत्र भारत सन्तुष्ट न हो। स्वतन्त्र भारत अपनी इच्छानुसार कार्य करेगा। यह विधान-सभा आगामी पीढ़ी को या उन लोगों को जोकि हमारे इस कार्य के उत्तराधिकारी बनेंगे, बांध नहीं सकती। अतएव हमें अपने कार्यों की छोटी-छोटी तफसीलों की बातों में नहीं उलझना चाहिये। यदि झगड़े में वे बातें हमने प्राप्त की तो भी वे अधिक दिनों तक न टिकेंगी। सहयोग से हम मानव स्वतन्त्रता में जो प्राप्त करेंगे वह टिक सकता है। जिन छोटी-छोटा बातों को हम लड़ झगड़कर ऐंठ कर तथा धमकी दिखाकर प्राप्त करेंगे वे ज्यादा दिनों तक नहीं टिकेंगी। इससे तो केवल मनमुटाव का एक गहरी और बुरी लीक पड़ जायेगी।"

"मैं यही कामना करता हूँ कि यह प्रस्ताव जल्दी ही कारगर हो और इस प्रस्ताव के शब्दों में वह शक्ति आ जाय कि दुनिया में यह प्राचीन देश अपना सम्मानजनक तथा न्याचोचित स्थान प्राप्त करे और मानव समाज के कल्याण तथा विश्वशांति की प्रगति में स्वेच्छा से पूर्ण योग दे।"

पंडित नेहरू जी के भाषण के बाद अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने प्रस्ताव को मत-दान के लिए सभा के समक्ष पेश करते हुए कहा—

"इस अवसर की गंभीरता तथा तथा प्रस्ताव में निहित प्रतिज्ञा की महानता को स्मरण रखिये। मुझे आशा है कि प्रत्येक सदस्य अपने स्थान पर खड़ा होकर प्रस्ताव पर मत देगा।

इसके बाद विधान-परिषद के कुल सदस्य अपने-अपने स्थानों पर खड़े हुए और उन्होंने शांति पूर्वक नेहरू प्रस्ताव को स्वीकार किया। इसके बाद जोरों से हर्ष-ध्वनि हुई।

नेहरू जी के उद्देश्य-प्रस्ताव पर एक दृष्टि

नेहरू जी के प्रस्ताव को स्वीकर करके विधान-परिषद ने स्वतंत्र भारत के विधान की नींव स्थापित कर दी। भारतीय विधान-परिषद ने नेहरू जी के उस उद्देश्य-प्रस्ताव को हृदय से स्वीकार कर लिया जिसमें उन उद्देश्यों की घोषणा की गई है जिनके आधार पर स्वतत्र भारत के विधान की रचना की जायेगी। इस प्रस्ताव में बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। उसकी सबसे मुख्य घोषणा यह है कि भावी भारत स्वतंत्र सार्वभौम प्रजातन्त्र होगा। इस घोषणा में भारतीय जनता की हार्दिक आकांक्षाओं का समावेश है। इसके अतिरिक्त वर्तमान स्थिति को देखते हुए भारत का और कोई राजनीतिक भविष्य हो ही नही सकता। इस घोषणा से जाहिर है कि भारत विदेशी प्रभुत्व के समस्त प्रतीकों को मिटाकर दुनियाँ के राष्ट्रों के बीच बराबरी का और सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त करना चाहता है। पूर्ण आजादी के लिये ही भारत की जनता ने अब तक संघर्ष और बलिदान किये हैं और उससे कम पर उसे किसी भी दशा में सन्तोष नहीं हो सकता। भारतीय जन आन्दोलन की पूर्णता प्रजातन्त्र के ही रूप में हो सकती थी। ब्रिटेन ने भारतीय जनता के इस अधिकार को स्वीकार किया है कि वह अपनी इच्छानुसार ब्रिटिश-राष्ट्र-समूह में रहने या उससे अलग होने का निर्णय कर सकता है। भारत का निर्णय यह है कि वह संसार में सार्वभौम स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में जीवित रहना चाहता है। इसका यह अर्थ नहीं कि ब्रिटेन के प्रति भारत का कोई बैर या विरोध होगा। यदि ब्रिटेन अपने वादों के अनुसार भारत की स्वतंत्रता को सच्चाई और सादगी से स्वीकार कर लेता है और उसके मार्ग में कोई अड़ंगे नहीं लगाता तो भारत ब्रिटेन के साथ मित्रता पूर्ण सम्बन्ध कायम रखेगा। इसकी यह मित्रता एकांगी नहीं होगी। भारत को बिना किसी खास गुट में शरीक हुए मानव जाति

की प्रगति और संसार की शांति के लिये सभी राष्ट्रों के साथ सहयोग भाव से मिल जुलकर काम करना है। किन्तु यदि ब्रिटेन भारत के साथ अच्छे सम्बन्ध कायम रखेगा तो दोनों देशों के बीच हितकर मैत्री संभव हो सकती है।

विधान-परिषद् की घोषणा में दूसरा मौलिक सिद्धान्त यह प्रति पादित किया गया है कि सार्वभौम स्वतत्र भारत, उसकी इकाइयों और शासन के अंगों को समस्त अधिकार और सत्ता जनता से प्राप्त होगी। इस प्रकार जनता को ही तमाम अधिकारों और सत्ता का स्रोत माना गया है। कुछ राजों के प्रतिनिधियों की ओर से प्रस्ताव के इस अंश पर आपत्ति उठाई गई है किन्तु लोक-हृदय में इतनी भयकर क्रान्ति उत्पन्न हो गई है कि इस तरह का आपत्ति को आज कोई सुनना भी गवारा नहीं कर सकता। वह जमाना लद गया जब कोई राजा लोगों पर शासन करने के अपने दैवी अधिकारों का दावा कर सकता था। अब तो यदि राजा अपना अस्तित्व कायम रखना चाहते हैं तो उन्हें जनता की सर्वोपरि सत्ता को स्वीकार करना ही होगा। किन्तु राजाओं को विधान परिषद द्वारा इस मौलिक सिद्धान्त की घोषणा पर भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। नेहरू जी ने स्वयं ही स्पष्ट कर दिया है कि भारत में स्वतत्र सार्वभौम प्रजातन्त्र की स्थापना का यह अर्थ नहीं कि भारत के किसी भाग में राजतंत्र कायम नहीं रह सकते। नेहरू जी ने स्पष्ट ही कर दिया है कि सिवाय उन विषयों के जो भारतीय संघ को सौंपे जायेगे, उसकी समस्त इकाइयाँ स्वशासित होंगी और भारतीय प्रजातन्त्र उनके भीतरी मामलों में कोई हस्तक्षेप नहीं करेगा। उस दशा में रियासतों को यह अधिकार होगा कि वे चाहें तो अपने यहाँ राजतन्त्र को बनाये रखे। वर्तमान प्रगति की धारा में भारतीय रियासतें अपनी खिचड़ी अलग पकायें और जनमत को ठुकराते हुए अधिक दिनों तक जीवित रहें—यह एक कोरी कल्पना होगी। समय को पहचान उन्हें नेहरू जी के शब्दों मे वास्तविकता से

आँखें बन्द नहीं करनी चाहिये। इनके अतिरिक्त विधान-परिषद ने इस प्रस्ताव द्वारा भावी विधान के लिए इन मूल बातों को स्वीकार किया है कि प्रजातन्त्र भारत विभिन्न इकाइयों का एक संघ होगा, इकाइयाँ स्वशासित होंगी और अल्प-संख्यकों को पर्याप्त संरक्षण प्रदान किये जायेंगे। ब्रिटिश मन्त्री-मिशन की घोषणा में भी यही आधार सन्निहित है। इसके अलावा विधान-परिषद ने स्वतन्त्र भारत में लोगों को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा सामाजिक न्याय और सुरक्षा प्रदान करने का भी आश्वासन प्रदान किया है। भावी विधान के ये मौलिक आधार विधान-परिषद ने सर्वसम्मति से स्वीकार किये हैं और उसके बाहर देशों में भी उनका एक स्वर से स्वागत किया गया। हमारी आशा यह होनी चाहिये कि विधान-परिषद उनके आधार पर ऐसा विधान बना सके जो देश के अधिक से अधिक लोगों को स्वीकृत हो सके और उनकी आर्थिक एवं राजनीतिक आकांक्षाओं को परितृप्त कर सकें।

कुछ लोगों ने यह आशका कर नेहरू-प्रस्ताव को दोषपूर्ण और अवैधानिक बताने की चेष्टा की है कि यह प्रस्ताव मंत्रि-मिशन की योजना के बाहर गया है और नियंत्रण की सीमा का उलंघन कर गया है। प्रस्ताव के प्रारम्भ में ही भारत को "सार्वभौम प्रजातन्त्र" घोषित करने की बात है। जिनको इसमें सीमा उलंघन का आभास मिलता है, उन्हें इग्लैंड के प्रधान मन्त्री श्री एटली के इन शब्दों की ओर ध्यान देना चाहिए। एटिली के शब्दों में "भारत को स्वतन्त्र घोषित करने का पूरा अधिकार" है। ब्रिटिश-मंत्रि-मण्डल के सदस्यों ने भी भारतीय-विधान-परिषद को भारत के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक विधान बनाने के अधिकार को स्पष्टतः मान लिया था। आज का परिस्थिति में प्रजातत्र होने के अतिरिक्त भारत के सामने कोई अन्य मार्ग नहीं है। मध्यकालीन राजसत्ता को पुनः जीवित करने की चेष्टा कर ऐतिहासिक शक्तियों के विरुद्ध जाने की गलती की आशा विधान-सभा से आज के युग में नहीं की जा सकती।

इस प्रसंग में देशी नरेशों का स्थान और स्थिति क्या होगी—यह विचार कर लेना भी आवश्यक होगा। मिशन की योजना में देशी रियासतों के शामिल करने की आयोजना है। विधान-परिषद उसके लिए प्रयत्नशील भी है। लेकिन इस प्रकार की भिन्न-भिन्न प्रणाली और ढंग वाले अंगों *को मिलाकर हिन्दुस्तान को एक सम्मिलित राज्य (Union) ही बनाया जा सकता है। ऐसे संघ के लिए सघीय विषयों के अतिरिक्त अन्य सभी मामलों में संघ की अन्य सभो इकाइयों को अपने प्रबन्ध में पूरी स्वतन्त्रता होगी। इस सिद्धान्त को विधान-परिषद स्वीकार भी कर चुकी है। यही सिद्धान्त मन्त्रि-मिशन की योजना का एक आवश्यक अंश है। दोनों मे विरोधाभास किंचितमात्र भी नही है, अतः देशी नरेशों को अपनी सत्ता के लिए विधान परिषद् की ओर से सशंकित होने की आवश्यकता नहीं है। इस तरह की राजसत्ता पर सबसे बड़ा प्रहार उनकी प्रजा द्वारा ही सम्भव है। विधान-परिषद इस दिशा में अपना कदम न उठायेगी।

नेहरू प्रस्ताव की एक बात और शंका और वैधानिक तर्क की बात हो चली है। प्रस्ताव में इस बात की ओर संकेत किया गया है कि प्रान्तों की या देश के अन्य भागों की सीमा सुविधानुसार परिवर्तित की जा सकती है। इस परिवर्तन का अधिकार विधान-परिषद या उसके द्वारा बने हुये विधान की धाराओं को होगा। लेकिन प्रस्ताव के शब्दों से यह बात साफ हो गया है कि इस प्रकार का कार्य संघ के अन्य अंगो की राय और अनुमति के बिना नहीं हो सकता है। अतः देशी नरेशों को इस पंक्ति से भी भयभीत नहीं होना चाहिए।

देशी नरेशों को यह भी सोचना चाहिए कि आज तक उनकी सत्ता किसी न किसी प्रकार इंग्लैंड के राजा के नाम पर जीवित थी। वे लोग उन्हीं के प्रतिनिधि के हाथ की कठपुतली रहे हैं। अंग्रेजों के भारत से चले जाने के बाद उनका अपने पैरों पर खड़ा रहना असम्भव होगा। उनकी आर्थिक स्थिति राजनैतिक, प्रादेशिक परिस्थिति इतनी

ठोस नहीं है कि वे सार्वभौम सत्ता का रूप धारण कर अपने को अधिक दिनों तक कायम रख सकें। यह उन्हीं के हित में अच्छा होगा कि वे अपनी राजसत्ता को बाँट कर संघ सत्ता (Union or Federal Government) को हस्तान्तरित कर दें। वह संघ सरकार राज्य के आवश्यक कार्यों को अपने हाथों में रक्खेगी और देशी रियासतों को उस बड़े बोझ से छुटकारा मिल जायगा, साथ ही उनकी आन्तरिक स्वतन्त्रता पर भी किसी प्रकार चोट नहीं पहुँच सकती। अगर देशी नरेश नेहरू प्रस्ताव को इस दृष्टि से देखें तो उनकी शंका निमूल जान पड़ेगी।

द्वितीय अधिवेशन के अन्य निर्णय

नेहरू जी के महत्वपूर्ण आधार भूत उद्देश्य प्रस्ताव के सर्व-सम्मति से स्वीकृत हो जाने पर नेहरू जी ने एक दूसरा महत्वपूर्ण प्रस्ताव और पेश किया। इस प्रस्ताव में परिषद की रियासत-समिति का दायरा बढ़ाया गया है, जिससे समिति भूटान तथा सिक्किम की विशेष समस्याओं पर भी विचार कर सके।

इस प्रस्ताव पर बोलते हुए नेहरू जी ने कहा कि "भूटान तथा सिक्किम दूसरी भारतीय रियासतों की तरह नहीं हैं लेकिन ये दोनो रियासतें भारत के संरक्षण में एक तरह से स्वतंत्र ही हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि भारत से सम्बन्धित भूटान की भावी स्थिति क्या रहेगी। यह मामला भूटान के प्रतिनिधियों से विचार विनिमय करने के बाद ही तै हो सकता है। इस मामले में किसी भी तरह की जबरदस्ती नहीं की जा सकती। रियासती-समिति के अधिकार बहुत ही सीमित हैं। क्योंकि भारतीय रियासतों की समस्या पर रियासती प्रतिनिधि परिषद में आकर विचार करेंगे, किन्तु विधान-परिषद को रियासतों के अन्य प्रतिनिधियों से भी विचार विमर्ष करने का अधिकार है।"

पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त द्वारा समर्थित होने पर यह प्रस्ताव पास हो गया।

श्री० एन० वी० गाडगिल ने प्रस्ताव किया कि १६४६-४७ तथा १६४७-४८ के लिये परिषद् के खर्च का तखमीना स्वीकार कर लिया जाय। इस पर श्री० के० सन्तानम् ने सुझाव पेश किया कि वजट पर समिति की स्थिति में परिषद को ही विचार करना चाहिये। सन्तानम् के उक्त सुझाव का श्री सोमनाथ लाहिड़ी ने विरोध किया। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने सन्तानम् का सुझाव मत के लिये पेश किया और वह स्वीकृत होगया।

ता० २३ जनवरी को विधान-परिषद का अधिवेशन स्थगित रहा। ता० २४ जनवरी को श्री सत्य नारायण सिंह ने विधान-परिषद के उपाध्यक्ष का चुनाव करने का प्रस्ताव पेश किया, किन्तु अध्यक्ष ने इस पद के लिये नाम पेश करने तथा निर्णय करने के लिये २५ जनवरी नियत कर दी।

इसके बाद पण्डित गोविन्द वल्लभ पन्त ने एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पेश किया। वह प्रस्ताव इस प्रकार है—"ब्रिटिश मंत्रि मण्डल मिशन के १६ मई के वक्तव्य की धारा २० के अनुसार अल्प संख्यकों व नागरिकों के अधिकारों तथा कबायली व बहिष्कृत इलाकों के सम्बन्ध में अनेक प्रश्नों का निबटारा करने के लिये एक परामर्श समिति नियुक्त की जाय जिसमें ७२ सदस्य हों।"

इस प्रस्ताव पर भाषण करते हुए पण्डि गोविन्द वल्लभ पन्त ने कहा—"वैसे तो इस मामले पर अध्यक्ष के ठीक चुनाव के बाद ही विचार आरम्भ हो जाना चाहिये था लेकिन मुस्लिम लीग के आने की प्रतीक्षा में हम वैसा न कर सके। लेकिन लीग को विधान सभा में शामिल कराने की हमारी सभी कोशिशें बेकार साबित हुईं। इस परिस्थिति में भी आखिर हमें तो अपना कार्य जारी रखना ही है। मुझे आशा है कि प्रत्येक समझदार व्यक्ति यह स्वीकार करेगा कि मुस्लिम लीग को विधान

सभा में शामिल कराने के लिये कांग्रेस तथा विधान-सभा के सदस्यों ने कुछ उठा न रखा था। फिर भी लीग शामिल नहीं हुई। इधर हम लोग जितनी देर करते हैं, जनता में उतनी ही निराशा फैलती है। यह प्रचार लगातार किया जा रहा है कि विधान-सभा अवश्य ही असफल होगी। इस अवस्था में विधान सभा का अधिवेशन और अधिक स्थगित नहीं किया जा सकता।"

"कमेटी के ५० सदस्य विधान-सभा द्वारा चुने जायेंगे। इनमें से भी १६ सदस्य आम विभाग से चुने जायेंगे। अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व इस प्रकार होगा—

बंगाल, पंजाब, उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त, बलोचिस्तान और सिंध के हिन्दू ७; संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त, मद्रास, बम्बई, आसाम और उड़ीसा के मुसलमान ७; परिगणित जाति ७; सिख ६; भारतीय ईसाई ४; पारसी ३; एंग्लोइन्डियन :; कबायली व बहिष्कृत-प्रदेश १३। इस प्रकार इस कमेटी में तमाम अल्प संख्यकों तथा पिछड़ी हुई जातियों का प्रतिनिधित्व हो जाता है। वे अपनी-अपनी जाति के हितों की रक्षा करने में समर्थ हो सकेंगे।"

"इस परामर्श कमेटी को अपनी रिपोर्ट ३ महीने के भीतर ही पेश कर देनी होगी। इस कमेटी के प्रस्ताव आने से पहिले कोई विधान तैयार न हो सकेगा।"

"अल्पसंख्यकों के प्रश्न की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसी प्रश्न को लेकर भारतीय राष्ट्र की विभिन्न जातियों के बीच झगड़े पैदा होते हैं। साम्राज्यवाद ऐसे ही झगड़ों पर पनपता है। वह ऐसे झगड़ों को उकसाता है। अतएव अल्पसंख्यकों को सन्तुष्ट किये बगैर हम उन्नति न कर सकेंगे। यदि १६ मई के वक्तव्य में इस प्रकार की कमेटी का जिक्र न भी होता तो भी हम उसे अवश्य ही कायम करते। इस कमेटी में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि उनकी इच्छा के अनुसार लिये गये हैं।"

"मुझे आशा है कि भारत की अल्पसंख्यक जातियाँ यूरोप की

अल्पसंख्यक जातियों से शिक्षा लेकर अपने हितों की रक्षा के लिये किसी बाह्य शक्ति पर निर्भर न करेंगी। उनके हितों की रक्षा की गारन्टी सिर्फ वे लोग दे सकते हैं जिनमें वे रहती हैं। ××× हम लोग जातियों के रूप में सोचते हैं, नागरिकों के रूप में नहीं। यह ठीक नहीं। आखिरकार नागरिकों से ही जातियाँ बना करती हैं। प्रत्येक सरकार व राजनीतिज्ञ का उद्देश्य नागरिकों की भलाई करना होता है। यदि हम इस चीज का खयाल रखें तो हम समझ सकते हैं कि मौलिक अधिकारों का महत्व क्या है? इन अधिकारों के विकास पर ही मानव जाति की उन्नति निर्भर है।"

"हमें परिगणित जातियों तथा पिछड़ी हुई जातियों की खास चिंता करनी होगी। मुझे आशा है कि यह कमेटी उच्च सिद्धान्तों को अपने सामने रखेगी और उससे विभिन्न जातियों में सद्भावना पैदा हो जायेगी। इस कमेटी के कार्य के फलस्वरूप हम उस आजाद भारत के लिये जमीन तैयार कर सकेंगे, जिसके लिये हम जीते व मरते हैं।"

सरदार हरनामसिंह ने पन्तजी के उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन किया। उक्त प्रस्ताव पर श्री के० एम० मुन्शी तथा सर गोपाल स्वामी अयंगर आदि ने कई संशोधन पेश किये। इसके बाद प्रस्ताव के समर्थन में १० सदस्यों के भाषण हुए। श्री जयपाल सिंह आदि ने यह मांग पेश की कि आदिवासियों तथा अन्य अल्पसंख्यक जातियों को और अधिक प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये।

बहस का उत्तर देते हुए पन्त जी ने कहा—

"कमेटी के सदस्यों की संख्या क्रियात्मक दृष्टि से निश्चित की गई है। वैसे तो ऐसी कमेटियों के निर्णय वोटों द्वारा नहीं वरन् सर्वसम्मति से और पारस्परिक समझौते की भावना से किये जाते हैं।"

अन्त में यह प्रस्ताव कुछ संशोधनों के बाद पास हो गया।

तीसरे पहर विधान-परिषद की बैठक बन्द कमरे में हुई और उसमें बजट पर विचार-विनिमय हुआ।

ता० २५ जनवरी को विधान-परिषद् के आरम्भ होते ही डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने घोषित किया कि डाक्टर एच० सी० मुकर्जी विधान-परिषद के उपाध्यक्ष नियुक्त किये गये हैं। इस घोषणा का करतल ध्वनि से स्वागत किया गया।

इसके उपरान्त डाक्टर पट्टाभि सीतारमैया ने प्रस्ताव पेश किया और कहा कि विधान-परिषद् के भावी कार्यक्रम के लिये एक ऐसी कमेटी का नियुक्त करना आवश्यक है जो यह विचार करेगी कि विधान-सभा की भावी कार्यवाही कैसे चलायी जाय ? सर गोपाल स्वामी अयगर, श्री के० एम० मुन्शी और श्री विश्वनाथ दास इस कमेटी के सदस्य होंगे। उक्त प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हो गया।

दूसरा प्रस्ताव श्री राजगोपालाचार्य ने पेश किया। प्रस्ताव का उद्देश्य भारतीय संघ के विषय निर्धारित करना होगा। अपना प्रस्ताव पेश करते हुए राजा जी ने कहा कि "इस कमेटी को नियुक्त करना इसलिये जरूरी है कि संघ, प्रान्तों व समूहों के आपसी सम्बन्धों का स्पष्टीकरण हो जाय। मुस्लिमलीग के सदस्य गैरहाजिर हैं। लेकिन उन्हें भी इस कमेटी को नियुक्त करने के हमारे प्रस्ताव से किसी किस्म की गलत फहमी नहीं होनी चाहिये।"

"मुस्लिम लीगी सदस्यों के गैरहाजिर होने का असली कारण यह है कि वे ब्रिटिश-मंत्रि-मंडल-मिशन की योजना में निहित सिद्धान्त से ही असहमत हैं। इस योजना में उस अखण्ड भारत का जिक्र किया गया है जिसमें सर्वोच्च सत्ता निहित रहेगी। लीग इसके खिलाफ है। अब यदि वे इस विधान-सभा में शामिल होना चाहें तो उन्हें सबसे पहिले यह मानना होगा कि वे अखण्ड भारत के उसूल के पक्ष में हैं।"

"इसका अभिप्राय यह है कि हम लीग की कठिनाई और उसकी समस्या को बखूबी समझते हैं। हमें उन्हें सोचने का समय देना चाहिये। लेकिन इसका यह अभिप्राय नहीं कि हम आगे न बढ़ें। यदि

हम अपना कार्य बन्द कर दे तो इसका मतलब यह होगा कि हम अपनी विधान-सभा को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दें।"

"इस प्रस्ताव का उद्देश्य यह है कि विधान तैयार करने में विधान-सभा की सहायता की जाय। इस विधान सभा का काम विश्व की अब तक की विधान-सभाओं के काम से अधिक जटिल है। ब्रिटिश सरकार के वक्तव्य की छानबीन करने पर हमें ज्ञात होगा कि—१—हमें अखण्ड भारत के लिये विधान तैयार करना होगा। २—हमें ऐसा विधान तैयार तैयार करना होगा जिसके अनुसार राष्ट्र रक्षा, यातायात और विदेशी मामले केन्द्र के विषय रहेंगे। केन्द्र को अपने उक्त विषयों के लिये पैसों के प्रबन्ध करने का भी अधिकार होगा। यह भी नियम बनाया गया है कि विभिन्न प्रान्त अपने जो अधिकार, समूहों के हवाले करना चाहेंगे, कर सकेंगे। केन्द्रीय सरकारों के अधिकारों से अवशिष्ट अधिकार प्रान्तों के रहेंगे। रियासतों के भी वे अधिकार होंगे जो केन्द्रीय सरकार के न होंगे। १० वर्ष के बाद विधान में संशोधन हो सकेगा और इसका अधिकार भी प्रान्तो के हाथ में निहित है। यह सब बाते वक्तव्य की दफा १५ में प्रतिपादित हैं। उक्त कमेटी को उन सब चीजों पर गौर करना होगा।"

श्री सत्यनारायण सिंह ने राजा जी के प्रस्ताव पर दो संशोधन पेश किये। पहिले संशोधन में कमेटी में लिये जाने वाले व्यक्तियों के नाम पेश किये गये और दूसरे द्वारा अध्यक्ष को यह अधिकार दिया गया कि समय-समय पर कमेटी में जो स्थान रिक्त हों, वे उनके लिये नई नियुक्तियाँ करते रहे।

श्री जयपालसिंह ने श्री सत्यनारायण सिंह द्वारा पेश किये गये नामों का विरोध करते हुए कहा कि "डाक्टर जयकर, डाक्टर अम्बेडकर और डाक्टर देश मुख के नाम भी इस कमेटी में अवश्य ही शामिल कर लिये जायें। प्रस्तावक श्री राजा जी ने कहा है कि शेष

सदस्य मुस्लिम लीग में से लिये जायेगे। कबायली क्षेत्रों के एक प्रतिनिधि को भी इस कमेटी में शामिल किया जाना चाहिये।"

सरदार हरनामसिंह ने कहा कि यह कमेटी ऐसी नहीं है कि उसमें कबायली व साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की आवश्यकता हों। इस कमेटी का उद्देश्य यह निश्चित करना होगा कि सत्र सरकार के विषय क्या हों।

राजाजी ने उक्त संशोधनों का उत्तर देते हुए कहा कि "इस कमेटी में जो महानुभाव लिये गये हैं, उनका किसी भी पार्टी से कोई ताल्लुक नहीं है और कानून बनाने मे सभी विशेषज्ञ हैं। इस प्रस्ताव द्वारा अध्यक्ष को १० और सदस्य लेने,का भी अधिकार दिया गया है। वे अपने इस अधिकार का प्रयोग खूब समझदारी के साथ करेंगे। वे मुस्लिमलीग में शामिल होने के बाद उससे भी सलाह लेंगे। रियासतों के प्रतिनिधियों का भी सवाल है। रियासती सदस्यों के शामिल होने पर यह कमेटी और शक्तिशालो हो जायगी। मै श्री सत्यनारायण सिंह के संशोधन से सहमत हूँ। मुझे आशा है कि मेरा प्रस्ताव मजूर कर लिया जावेगा।"

इसके बाद राजा जी का प्रस्ताव स्वीकार होगया।

श्री सत्यनारायण सिंह ने एक प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि विधान-सभा का अधिवेशन अप्रैल तक के लिये स्थगित कर दिया जाय और अप्रैल में भी तारीख निश्चित करने का अधिकार अध्यक्ष को दिया जाय। सेठ गोविन्द दास ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। श्री सन्तानम् ने व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति उठाते हुए कहा कि अधिवेशन अनिश्चित तारीख तक के लिये स्थगित नहीं किया जा सकता। सर एन० गोपाल स्वामी अयगर ने श्री० के० सन्तानम् का समर्थन किया। लेकिन अध्यक्ष ने यह व्यवस्था दी कि उनके लिये अभी से कोई तारीख निश्चित कर देना संभव नही। मैं तारीख बाद में निश्चित करूँगा।

श्री० एच० वी० कामठ ने कहा कि "हम सभी लोगों का सहयोग

चाहते हैं किन्तु उसके लिये हम विधान-सभा को स्थगित करने के पक्ष में नहीं है। इसलिये मै यह संशोधन पेश करता हूँ कि अप्रैल के बाद विधान-सभा की बैठक स्थगित न की जाय।"

श्री सत्यनरायण सिंह ने कहा कि "श्री कामठ आदि ने जो विचार प्रकट किया उन सब पर पहिले से ही विचार कर लिया गया है। अतएव मैं श्री कामठ से अपील करूँगा कि वे अपना संशोधन वापस ले लें।"

श्री० कामठ ने अपना संशोधन वापस ले लिया और श्री० सत्य-नारायण सिंह का प्रस्ताव पास हो गया।

अधिवेशन स्थगित होने से पहिले अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने उपाध्यक्ष चुने जाने पर डाक्टर एच० सी० मुकर्जी को बधाई दी। डा० अलबन डी० सौजा, तथा श्री विश्वनाथ दास ने भी बधाइयाँ दी।

डाक्टर मुकर्जी ने इसका उत्तर देते हुए कहा कि "मैं पहिले साम्प्रदायिक वादी ईसाई था। लेकिन जब मैने गरीब ईसाइयों की हालत देखी तो मुझे ऐसा लगा कि ऊनकी हालत भी वैसी ही है जैसी कि गरीब हिन्दुओं तथा मुसलमानों की। इस पर मैं साम्प्रदायिकता को छोड़कर राष्ट्रवादी बन गया।

अधिवेशन समाप्त होने से पहिले डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि "मुझे श्री सोमनाथ लाहिड़ी (कम्यूनिस्ट) का एक पत्र मिला है जिसमें उन्होंने शिकायत की है कि मेरे मकान की पुलिस ने तलाशी ली और विधान-सभा से सम्बन्ध रखने वाले कई कागज उठाकर ले गई। उन्होंने मुझसे पूछा है कि क्या विधान-सभा के अध्यक्ष एक विधान-सभा के सदस्य के अधिकारों की रक्षा के लिये कुछ करेंगे?

मैने यह मालला वैधानिक सलाहकार के हवाले कर दिया और उन्होंने अपना रुक्का अभी मेरे पास भेजा है। मैं उसे देखूँगा और नश्चय करूँगा कि क्या मुझे कोई कदम उठाने का अधिकार है?

यदि मुझे महसूस हुआ कि मुझे कुछ भी करने का अधिकार नहीं है तो मै श्री सोमनाथ लाहिड़ी को सूचित कर दूंगा।"

इसके बाद विधान-परिषद अप्रेल मे अनिश्चित तारीख तक के लिये स्थगित होगई।

द्वितीय अधिवेशन के बाद की तत्सम्बन्धी परिस्थितियों पर एक दृष्टि

मुस्लिम लीग का रवैया

२६ जनवरी को मुस्लिम-लीग के मन्त्री श्री लियाकत अली खॉ ने अपना वक्तव्य देते हुए बताया कि कांग्रेस ने अभी ६ दिसम्बर के सरकारी वक्तव्य को स्वीकार नहीं किया। इसी तरह के वक्तव्य अन्य मुस्लिम-लीगी जिम्मेदार नेताओं ने भी दिये हैं। इस गलतफहमी को दूर करने के लिए मौलाना आजाद ने निम्न वक्तव्य देते हुए कहा है कि—"इस दिशा मे जो शंकाएँ प्रकट की जारही हैं वे निराधार एवं दुर्भाग्य पूर्ण है। कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य को पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया है।"

"ब्रिटिश मंत्रि-मिशन के १६ मई के वक्तव्य में यह कहा गया है कि अपनी प्रारंभिक बैठक के बाद विधान-परिषद तीन ग्रूप में बट जायेगी। और ये श्रेणियॉ यह निश्चित करेंगी कि प्रान्तों की गुटबन्दी हो या न हो। यदि गुटबन्दी करने का निश्चय हो और उसके लिये विधान भी बन जाय तब भी प्रान्तों को अधिकार होगा कि ये विधान के अर्न्तगत प्रथम चुनाव होने के बाद वे अपने को गुट से अलग करलें।"

"अब सवाल यह है कि इस सम्बन्ध में ग्रूप निर्णय किस प्रकार करेंगे। कांग्रेस का मत यह है कि अन्तर्गत् प्रान्त के प्रतिनिधि एक इकाई की तरह काम करेंगे कि उनका प्रान्त गुट में शामिल हो

या न हो। इसके विपरीत लीग और मंत्रि-मिशन का मत यह है कि श्रेणी में निर्णय साधारण बहुमत से किया जायेगा। और प्रान्तों को प्रथम चुनाव के बाद ही गुट से बाहर निकलने का अधिकार होगा। आसाम की परेशानी का यही मुख्य कारण है। उसे भय है कि "सी" श्रेणी में बङ्गाल का बहुमत है इसलिये वह विधान का निर्माण इस प्रकार करेगा कि आसाम का बाद मे गुट में से निकल सकना असंभव हो जाय। भारत मंत्री और सर स्टैफर्ड क्रिप्स दोनों ने ही ब्रिटिश पार्लियामेंट के समक्ष दिये गये अपने वक्तव्यों में यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि प्रान्तों के गुट से बाहर निकल सकने के अधिकार में किसी प्रकार की रुकावट नही डाली जानी चाहिये और यदि किसी ऐसे विधान की बनाने की चेष्टा की गई जिससे प्रान्तो के इस अधिकार में किसी प्रकार की बाधा पड़ने का भय हो तो वह १६ मई की सरकारी घोषणा के विरुद्ध होगा, कांग्रेस ने अपने ६ जनवरी के प्रस्ताव में ब्रिटिश सरकार द्वारा ६ दिसम्बर को की गई सरकारी घोषणा की व्याख्या को स्वीकार कर लिया और मान लिया कि गुट में निर्णय साधारण बहुमत से ही होगा।"

"इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि काग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर वाले वक्तव्य को पूरी तरह मान लिया है और मुस्लिम लीग के लिए विधान-परिषद से बाहर रहने का कोई बहाना नही रह गया है। मुझे आशा है कि लीग की कार्यकारिणी-समिति अपनी २६ जनवरी की बैठक में मुल्क की मौजूदा हालत पर शांति के साथ विचार करेगी और निश्चय करेगी कि लीग कौंसिल का वह प्रस्ताव जिसमें विधान-परिषद से अलग रहने का निर्णय किया गया था, वापस ले लिया जाय।'

जिन भारतीयों को इस बात की शंका है कि विधान-परिषद स्थगित कर दी जायेगी, क्योंकि मुस्लिम लीगी रुकावट से देश चिन्तित हो उठा है, शंका का समाधान करते हुए २६ जनवरी को स्वतंत्रता दिवस के समारोह के सिलसिले में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने निर्भीकता के

साथ उक्त शंका का समाधान करते हुए घोषित किया है—"जितनी भी बाधाएं हमारे सामने आरही हैं उनसे हमारा काम बन्द नहीं होगा। हमारा काम लगातार जारी रहेगा।"

अखिल भारतीय मुस्लिम-लीग की कार्यकारिणी ने ३१ जनवरी १९४७ को देश के वैधानिक प्रश्न पर तीन हजार शब्दों का एक लम्बा प्रस्ताव प्राप्त करते हुए कहा कि "कांग्रेस ने ब्रिटिश-मंत्रि मिशन की १६ मई की घोषणा की ६ दिसम्बर को की गई सरकारी व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया है इसलिये वह मंत्रि-मिशन के उस वक्तव्य पर अपनी स्वीकृति वापस लेने के फैसले पर पुनः विचार करने के लिए अखिल भारतीय मुस्लिम-लीग कौंसिल की बैठक बुलाने में कोई लाभ नहीं समझती।"

प्रस्ताव में यह भी कहा गया है कि "लीग-कार्यकारिणी कांग्रेस महा-समिति के प्रस्ताव को एक शब्द जाल तथा बेईमानी से भरी हुई चाल समझती है जो कि ब्रिटिश सरकार, मुस्लिम लीग और लोकमत को धोखा देने के लिये चली गई।

लीग कार्यकारिणी का कहना है कि "विधान-परिषद जिसमें केवल कांग्रेस का ही प्रतिनिधित्व है, प्रारंभिक अवस्था में ही सिद्धान्तों और कार्य-प्रणाली के बारे में फैसला करके उन मर्यादाओं का उल्लंघन कर चुकी है जो कि १६ मई के वक्तव्य द्वारा परिषद के कार्यों और अधिकारों के बारे में लागू की गई थी और इस प्रकार विभागों के कार्यों और अधिकारों को ठेस पहुँची है। ऐसी हरकतों से कांग्रेस अब से पहिले ही विधान-परिषद को एक ऐसी बेढङ्गी चीज में परिवर्तित कर चुकी है, है, जो मिशन-योजना से बिलकुल ही भिन्न है।

"अतः लीग कार्यकारिणी अपील करती है कि ब्रिटिश सरकार मंत्रि मिशन द्वारा घोषित वैधानिक योजना को असफल घोषित करदे क्योंकि न तो कांग्रेस ने १६ मई की ब्रिटिश सरकार की घोषणा ही स्वीकार की है न सिखों ने ही और न दलित वर्ग ने ही। चूंकि विधान-परिषद

के चुनाव और उसकी बैठक बुलाना अवैधानिक था तथा विधान-सभा को जारी रखना और उसकी सारी कार्यवाई और उसके फैसले अवैध, नियम विरुद्ध व गैर कानूनी है, इसलिए उसे तुरन्त भङ्ग कर देना चाहिये।"

लीग कार्यसमिति के प्रस्ताव पर एक दृष्टि

ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य को कांग्रेस द्वारा स्वीकार कर लिये जाने के बाद कुछ लोगों ने यह आशा प्रकट की थी कि मुस्लिमलीग मन्त्रि-मिशन की योजना को अस्वीकार करने के निर्णय पर पुनर्विचार करेगी और विधान-परिषद के कार्य में सहयोग देने को तैयार हो जायेगी। किन्तु यह आशा बिलकुल ही निर्मूल निकली। लीग-कार्य-समिति की बैठक इतने विलम्ब से बुलाये जाने का अर्थ ही यह था कि लीग की नियत ही साफ नहीं थी। विधान-परिषद ने उद्देश्यो सम्बन्धी प्रस्ताव तथा कुछ नियमों और कमेटियों की नियुक्ति का कार्यक्रम केवल इसीलिये स्थगित कर दिया था कि मुस्लिमलीग के प्रतिनिधियों को विधान-परिषद में आने का मौका मिल जाय। मुस्लिम लीग चाहती तो विधान-परिषद के द्वितीय अधिवेशन—२० जनवरी के पूर्व ही अपना निर्णय कर सकती थी किन्तु उसकी अड़ंगेबाजी की नीति को छोड़ने का कोई भी इरादा नहीं था। उसकी अन्दरूनी इच्छा तो यह थी कि विधान-परिषद को सभी आरंभिक कार्रवाइयाँ निबटा देना चाहिये और उसके बाद उन्ही निर्णयों के आधार पर यह नई शिकायत खड़ी करके रोड़ा अटका देना चाहिये कि चूंकि विधान-परिषद ने एकतर्फा निर्णय कर लिया है, लीग उसमे शामिल नही हो सकती।

मुस्लिमलीग-कार्य-समिति ने पण्डित नेहरू के उद्देश्य प्रस्ताव पर आपत्ति की है। लीग कार्य-समिति का कहना है कि वह मन्त्रि-मिशन की योजना और उसके अधिकारों के बाहर की वस्तु है।

मुस्लिमलीग ने अपने कथन के पक्ष में कोई दलील नहीं दी है और न यह बताया है कि किस प्रकार यह प्रस्ताव मन्त्रि-मिशन की योजना की सीमा से बाहर जाता है। क्या मुस्लिमलीग यह कहना चाहती है कि विधान-परिषद् प्रजातन्त्र की घोषणा नहीं कर सकती और क्या मुस्लिमलीग भारत पर इंगलैंड के राजा की छत्रछाया बरकरार रखना चाहती है ? क्या उसे इस पर आपत्ति है कि भावी भारत में शासन के समस्त अधिकार जनता से प्राप्त होंगे ? यदि मुस्लिमलीग का उत्तर इन प्रश्नों के बारे मे स्वीकारात्मक हो तो उसे अपनी स्वीकारोक्ति साहस के साथ प्रकट करना चाहिये। विधान-परिषद ने जो कमेटियाँ नियुक्त की हैं, उनमें लीग के प्रतिनिधियों के लिये स्थान खाली रखे गये हैं और यदि मुस्लिमलीग ने विधान-परिषद् में शामिल होने का निर्णय किया होता तो उन कमेटियों में लीगी प्रतिनिधियों को आसानी से शामिल किया जा सकता था। वास्तव में विधान-परिषद् ने कोई ऐसे नियम नहीं बनाये हैं जो विभागों के अधिकारों को छीनने वाले हों। यदि कोई ऐसा नियम बना भी हो तो वह संशोधित हो सकता है। उसका उत्तरदायित्व कांग्रेस पर क्या है ? मुस्लिम लीग का विधान-परिषद् से अलग रहना और उसके बाद विधान-परिषद् की कार्यवाहियों को अपने शामिल न होने के कारण गैर कानूनी तथा तथा अवैध बताना बेईमानी के अलावा क्या हो सकता है, जिसका कि लीग कार्य-समिति ने कांग्रेस पर आरोप किया है। मुस्लिम लीग चाहती ही यह थी कि विधान-परिषद की बैठकें ही न हो सके। जब परिषद् की बैठके दृढ़ता पूर्वक आरंभ हो गई तो लीग की मन्शा यह रही कि परिषद का कार्य किसी तरह रुक जाय किन्तु देश के दूसरे लोग जिन्हे देश की आजादी की भूख है, ऐसा न कर सके। मुस्लिम-लीग अंग्रेजों की गुलामी में विश्वास और सन्तोष कर सकती है किन्तु जो लोग देश को जल्दी से जल्दी अजाद देखना चाहते हैं वे उसकी निरन्तर की बहाने और अड़ंगेबाजी के चक्कर में नहीं आ सकते।

मुस्लिम लीग कार्य समिति की खास आपत्ति यह है कि कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर के वक्तव्य स्पष्ट शब्दों में स्वीकार नही किया है। विवाद विधान-परिषद् के विभागों की कार्य पद्धति से सम्बद्ध था और ब्रिटिश सरकार ने कार्य-पद्धति की जो व्याख्या की है उसे कांग्रेस ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है। कांग्रेस के प्रस्ताव में प्रान्तों पर दबाव न डालने की जो बात कही गई है, उसका कांग्रेस की उस स्वीकृति पर कोई असर नहीं पड़ता। यदि मुस्लिम लीग केवल अपने बहुमत के बलपर विभागों मे प्रान्तों के अधिकारों को हड़पना और मनमानी करने का इरादा नहीं रखती थी तो उसे ऐसा स्पष्ट कर देना था, जिससे आसाम, सीमाप्रान्त और सिखों को आश्वासन मिल जाता और सबकी सद्भावना और सहयोग से विधान-परिषद का कार्य सुचारु रूप से चलता। किन्तु इस सीधे मार्ग को ग्रहण करने के बजाय लीग कार्य-समिति कांग्रेस को ही बदनाम कर रही है। लीग ने यह भी शिकायत की है कि कांग्रेस ने भविष्य में उठने वाले मतभेदों के निराकरण के लिए संघ-अदालत के पास जाना स्वीकार नहीं किया है किन्तु यह मंत्रि-मिशन की योजना का कोई आवश्यक अंग नही है। विभागों की कार्यपद्धति के सम्बन्ध में खुद मुस्लिमलीग ने संघ-अदालत का निर्णय मानने से इन्कार कर दिया था। मतभेद उत्पन्न होने के पहिले ही मतभेदों का भूत खड़ा करने का काम मुस्लिमलीग ही करती आई है, जो अपनी पूर्व निर्दिष्ट कल्पना को पूरा करने के लिये हर-तिनके का सहारा ढूंढ़ने को व्यग्र है। मुस्लिमलीग कार्य-समिति ने ब्रिटिश सरकार से अनुनय की है कि वह विधान परिषद को भंग कर दे। ब्रिटिश सरकार ने मुस्लिमलीग को बढ़ावा देने और खुश करने के लिये बहुत कुछ किया है किन्तु यदि वह चाहे तो भी विधान-परिषद को भङ्ग करके विश्व में अपने आपको लज्जित तथा नत मस्तक नहीं करायेगी। विधान परिषद को भंग करना अब ब्रिटिश शक्ति के बाहर की बात है। लीग की सारे अड़ंगेबाजी और विरोध के बावजूद विधान-

परिषद तब तक भंग नहीं होगी, जब तक वह स्वतंत्र भारत का विधान बनाने का अपना निर्दिष्ट कार्य पूरा नहीं कर लेती; ब्रिटिश सरकार विधान परिषद् पर हाथ डालकर भारत की राष्ट्रीय शक्तियों को संघर्ष के लिये चुनौती नहीं दे सकती।

मुस्लिमलीग कार्य समिति के इस अदूरदर्शिता पूर्ण निर्णय पर सम्मति प्रकट करते हुए महात्मा गाधी ने ४ फरवरी को कहा कि "मै मुस्लिमलीग से यह अपील करूँगा कि वह विधान-परिषद में शामिल हो और अपना मामला पेश कर विधान-परिषद की कार्यवाही को प्रभावित करे। जब तक लीग तलवार के कानून-हिंसा-पर अवलम्बित नहीं हो जाती और मुझे यकीन है कि वह ऐसा नहीं करना चाहती, तब तक लीग तथा शेष भारत का कर्तव्य है कि वह विधान-निर्माण में सहयोग दे कि ब्रिटिश सरकार विधान-परिषद सम्बन्धी सरकारी घोषणा-पत्र के अनुसार कार्य करने को बाध्य है और मुझे आशा है कि भारत के साथ ईमानदारी का व्यवहार करने का बचा खुचा श्रेय भी वह न खो बैठेगी।"

इसी प्रकार देश तथा विदेश के राजनीतज्ञों तथा पत्रों ने भी लीग की कार्य-समिति के इस फैसले की अदूरदर्शिता एवं अडंगा नीति की तीव्र आलोचनाएँ की हैं।

धारा-सभा में हर प्रश्न पर मुस्लिमलीगी सदस्यों ने कांग्रेसी मिनिस्टरों का विरोध करना आरम्भ कर दिया और राजा गजनफर अली जैसे अन्तर्कालीन सरकार के मंत्री ने उत्तेजनात्मक भाषण देने आरम्भ कर दिये। इसका परिणाम यह हुआ कि अन्तर्कालीन सरकार में गहरी तनातनी का वातावरण उपस्थित हो गया और कार्य चलाना असम्भव-सा प्रतीत होने लगा। इस परिस्थिति को देखकर पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपने अन्य मंत्रियों की सलाह और दस्तखतों से एक के बाद दूसरा—ऐसे दो पत्र वायसराय को लिखे कि या तो लीग को विधान-परिषद में शरीक कराया जाय और नहीं तो अन्तर्कालीन सरकार से भी इन्हें निकाल दिया जाय। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो हम सभी

"देशी राज्यों पर सार्वभौमता भी जून १६४८ को समाप्त हो जायेगी" लेकिन साथ ही यह भी बतलाया गया है कि "बीच के समय में रियासतों के मामले अलग अलग समझौतों द्वारा तै किये जा सकते हैं। सम्राट की सरकार जिन्हे सत्ता सौपेगी उनसे अलग समझौते करेगी।

इस घोषणा पर देश के प्रमुख नेताओं की राय अच्छी रही और उन्होंने इस घोषणा का स्वागत किया। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने एक वक्तव्य प्रकाशित करते हुए २३ फरवरी को बताया कि—"निस्संदेह इस निश्चय से दूरदर्शिता पूर्ण परिणाम निकलेगे और सब सम्बद्ध जनों पर इस घोषणा से एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ गयी है। हम सबके लिये यह एक चुनौती है और हम वीरता के साथ इसके लिए तैयारी करेंगे। मेरा विश्वास है कि हम सब मिलकर इस दायित्व को संभालने का प्रयत्न करेंगे और भारत की स्वतंत्रता प्राप्त करेंगे।"

"उन लोगों को जो अब तक अलग हैं, हम सहयोग देने के लिये निमंत्रित करते हैं और सब से अनुरोध करते हैं कि वे अपने भय और सन्देह को त्याग कर इस ऐतिहासिक कार्य में साझीदार बनें, जिससे स्वतंत्रता प्राप्ति के अवसर पर हम एक महान राष्ट्र बन जायें।"

ब्रिटिश सरकार ने अपने राष्ट्र की ओर से भारतीय लोगों के लिये अपनी सद्-इच्छाएँ व शुभकामनाएँ प्रकट कर दी हैं। हम काफी समय से लड़ते-झगड़ते आ रहे हैं किन्तु अब हम हृदय से आशा करते हैं कि अब झगड़ने का समय बीत चुका है। हम एक शांति पूर्ण परिवर्तन काल की आशा करते हैं और चाहते हैं कि भविष्य मे ब्रिटिश राष्ट्र के साथ हमारे ऐसे मैत्री पूर्ण सम्बन्ध रहेंगे जिससे दोनो देशों को परस्पर लाभ पहुँचेगा और विश्व भर में शांति स्थापित होने में सहायती मिलेगी।"

तारीख २४ फरवरी को हेमचर में प्रार्थना-सभा में भाषण करते हुए महात्मागाधी ने ऐटली की घोषणा पर अपने विचार प्रकट करते

हुए कहा—'इस वक्तव्य से देश की भिन्न-भिन्न पार्टियों पर यह बोझ आ पड़ा है कि जैसा ठीक समझें करें। भारत में ब्रिटिश शासन का अन्त जून सन् १९४८ अथवा उससे पहिले ही हो जायेगा। स्थिति को सम्भालना या बिगाड़ना अब भारतीय पार्टियों पर ही निर्भर है। अब मेरी अपनी यह राय है कि यदि हिन्दू और मुसलमान बिना बाहरी दबाव के आपस में मिल जायँ तो उससे केवल उनकी राजनीतिक स्थिति में ही सुधार न होगा वरन् इसका प्रभाव समस्त भारत तथा सम्भवतया विश्व भर पर पड़ेगा। संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो हिन्दू-मुसलमानों की संयुक्त इच्छा को टाल सके।"

उक्त घोषणा पर स्पष्ट तो नहीं पर एक प्रेस कान्फरेन्स में वक्तव्य देते हुए मि० जिन्ना ने कहा कि "इन सब झगड़ों का अन्त भारत के विभाजन से ही हो सकता है—एक हिन्दुस्तान और दूसरा पाकिस्तान।"

इसका स्पष्ट मतलब यह हुआ कि ऐटली की घोषणा से मुस्लिम लीग में असन्तोष रहा।

ता० २५-२६ फरवरी को लार्ड सभा में भारत पर विवाद हुआ जिसमें मि० ऐटली की घोषणा की गहरी आलोचना की गई। इसका जवाब देते हुए भारत मंत्री लार्ड पेथिक लारेन्स ने कहा कि—"यदि हम और आगे बढ़ें तो हमें भारतवर्ष की भिन्न-भिन्न पार्टियों की सद्-इच्छा और सहयोग पर विश्वास करना ही चाहिये। यदि हम ऐसा नहीं करते तो इसका मतलब हुआ कि हमें फिर सारे भारतवर्ष में पहिले की तरह ही गिरफ्तारियाँ, सजायें व बिना सजा दिये नजर बन्दी आदि का उस संस्था से सामना करना पड़ेगा जो ज्यादा से ज्यादा लोगों की भारत में मानी हुई संस्था है।"

"हमें विश्वस्त सूत्रों से जो पता चला है उससे यह स्पष्ट हो चुका है कि हम भारतवर्ष में अब १९४८ से आगे अपना आधिपत्य कायम नहीं रख सकते।"

"मैं यहाँ पण्डित नेहरू के सभी प्रेस-वक्तव्यों को उद्धृत नहीं कर सकता पर इतना अवश्य कहूँगा कि वे सभी वक्तव्य उत्साह-प्रद एवं स्वागत के योग्य हैं।"

"ऐटिली के घोषणा पत्र को सावधानी से पढ़ने के बाद भी यदि मुस्लिमलीग समझती है कि उसे पाकिस्तान मिल जायेगा तो इसमें मुझे बहुत ही आश्चर्य होगा।"

लार्ड सभा की भारत विषयक बहस पर एक नजर—

इस महान उलझे हुए समय में एटली के भाषण को गौर से पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेज भारत से जाने को तो तैयार हैं, पर उसे हर तरह विभाजित करके ही जाना चाहते हैं। अब यह कार्य भारतीयों का है कि वे इस उलझे हुए समय को देखकर अपने देश-प्रेम का परिचय देते हुए इस विभाजन को यथाशक्ति रोकने की चेष्टा करें। वास्तव में यह भारतीयों का ही कार्य है कि वे चाहें तो अंग्रेजो का भारत से गमन निर्विघ्न भी हो सकता है। एटली ने यह तो कह दिया कि वे जून १९४८ में भारत छोड़ देंगे पर यह दुर्भाग्य की बात है कि उन्होंने यह नही कहा कि इस बीच के समय में उनके शान्ति से चले जाने के लिये उन्होंने किन उपायों का सहारा लिया है।

लार्ड पेथिक लारेन्स ने लार्डसभा में जो भाषण दिया है वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद की करारी हार का प्रतीक है। मि० कैसी ने कहा था कि "इस समय अंग्रेज भारत में विना शक्ति के शासन कर रहे हैं और वे अब उस शक्ति को किसी प्रकार प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए उन्हे अब अपनी शक्ति के मोह को त्याग ही देना चाहिये।"—पर यह सच नहीं है। उन्हे शक्ति तो लाजिमी तौर पर छोड़ना ही है पर शरारते थोड़े ही छोड़ना है। वे बराबर अपनी चालों का उपयोग किये जा रहे हैं। हम ऐसा कभी भी मानने को तैयार नहीं कि उन्होंने जो वक्तव्य दिये वे सभी ईमानदारी से भारत-परित्याग करने के विषय मे

सच्चाई के प्रतीक हैं। भारतीयों ने उनके वक्तव्यों का महज इसलिये स्वागत किया है कि वे भारत छोड़ रहे हैं। टैम्बलवुड ने लार्ड सभा में अल्प-संख्यकों, सिविल सरविस, व्यवस्था आदि का जिक्र करके भारतीयों को भयभीत करने की चेष्टा की है। उन्होंने रियासतों के भविष्य, दलित वर्गों के हितों, विभाजन आदि पर भी काफी विष उगला है। लेकिन टैम्बलवुड इससे अच्छा और कोई वक्तव्य दे ही नहीं सकते थे। वे ऐसे सुझावों का स्वप्न भी कभी नही देख पाते जो भारतीयों को स्वीकृत हो सके। यद्यपि घोषणा में अंग्रेजों ने भारत के विभाजन का खुला विरोध किया है पर उनकी शरारतों से साफ जाहिर है कि वे उसके टुकड़े करने पर तुले हैं। अब यह भारतीयो की अक्ल की परीक्षा का समय है। उन्हे अंग्रेजों द्वारा दिये गये विष के घड़े को अमृत में बदल कर बता देना है। जब अंग्रेजों ने भारतीयों की मुख्य माग—स्वतन्त्रा—को स्वीकार कर लिया है तो हमें साहस के साथ उनकी अन्य शरारतों को नष्ट करते रहने के लिये तत्पर रहना चाहिये। लार्ड सैम्यूअल ने कई देशों के उदाहरण देकर यह बताने की चेष्टा की है कि भारतीयो को स्वतन्त्रता प्रदान करके क्या वे रक्तपात कराना चाहते हैं? हम लार्ड सैम्यूअल से कहना चाहते हैं कि भारत का एक मात्र हित "संघ" निर्माण में है, उसके विभाजन आदि में नहीं। यदि यह नहीं हो सका तो सैम्यूअल साहब को जान लेना चाहिये कि ऐसा उनके द्वारा लीग को हर तरह बढ़ावा देने के कारण ही न हो सकेगा।

लार्ड पेथिक लारेन्स के वक्तव्य में एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि वे यह देखना चाहते हैं कि एटली ने जिस उद्देश्य से २० फरवरी की घोषणा की है, उस उद्देश्य में उन्हें सफलता के कुछ आसार दिखाई देते हैं या नहीं। यदि उन्हें उसमें सफलता दिखाई न देगी तो फिर वे दूसरे माग के अनुसरण की चेष्टा करेंगे। वे चाहे जिस मार्ग का भविष्य में अनुसरण करें पर हमें आशा है वे "भारत छोड़ो" प्रस्ताव को ही रद कर देने की कोशिश नहीं करेंगे। महात्मा

गांधी और पंडित जवाहरलाल नेहरू ने २० फरवरी की घोषणा को भारतीय प्रधान दलों में मैत्री कराने का अन्तिम अवसर समझकर स्वीकार की है। पर अब की बार सहयोग के मार्ग में पहिला कदम बढ़ाने का कार्य मुस्लिमलीग का है। हमें आशा है कि इस घोषणा को मुस्लिमलीग संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका के सैक्रेटरी आफ स्टेट जनरल मार्शल के वक्तव्य की भावना के अनुरूप ही ग्रहण करेगी। आन्तरिक झगड़ों से भारत की हानि है और विभाजन के असंख्य आपत्तियों का सामना अवश्यम्भावी है। लेकिन इन सब बातों के बावजूद हमारा तो लार्ड-सभा के अनुदार दल से यही कहना है कि भारत के तमाम पार्टियों ने उनके भारत छोड़ने के निश्चय का स्वागत किया है। जिन्ना साहब ने उक्त घोषणा पर अभी तक अपना कोई भी वक्तव्य नही दिया है बल्कि वे अभी भी पाकिस्तान और पाकिस्तानी राष्ट्र में अल्पसंख्यकों के संरक्षण के ही ढोल पीट रहे हैं। परन्तु सारे भारतवर्ष की सामुहिक राय एक स्वर में "भारत छोड़ो" के ही पक्ष में है।

ऐटली के वक्तव्य में "भारत छोड़ो" का अर्थ "भारत से ब्रिटिश फौजो का हटाया जाना" किया गया है। भारतीय उनके इस अर्थ का स्वागत करते हुए स्पष्ट कह देना चाहते हैं कि वे सफलता पूर्वक गमन न हो सकने के अभाव से किसी भी मार्ग को अपनायें, हमें उसमें कोई एतराज नहीं, पर उनका यहाँ से जाना पूर्ण और अन्तिम ही होना चाहिये। अपनी घोषणा में एटली ने भारत छोड़ने की प्रणाली का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है, इसी से इस शंका का जन्म होता है कि कहीं अंग्रेजों का इरादा इस दरवाजे से निकलकर पीछे के दरवाजे से फिर से घुस आने का तो नही है! हम एटली के इरादे को कैसे जान सकते हैं, लेकिन साम्राज्यवाद की प्रकृति को तो खूब जानते हैं। उस नाते से हमारा कहना यही है कि हमें हर वक्त आने वाली प्रत्येक रुकावट का सामना करने को तैयार रहना चाहिये। हमें जानना चाहिये कि हमारे ऊपर जबरदस्त जिम्मेदारी पड़ने वाली है। लेकिन स्वतंत्रता के

आगे जिम्मेदारियों का मूल्य नगण्य ही होता है। हो सकता है कि बरसों हम एक न हों, हो सकता है कि देश रक्तपात से सराबोर हो जाय, हो सकता है कि हमें घोर मुसीबतों का सामना करना पड़े, यह भी हो सकता है हमारे दिल एक दूसरे से बहुत दूर हो जायँ लेकिन अन्त में भारतीयों को स्वतंत्र ही होना है, उन्हे एक होना है, सम्मिलित होना है। इसे न तो लीग ही रोक सकती है और न ब्रिटेन का अनुदार दल।

"सर स्टैफर्ड क्रिप्स के शब्दों में समय निर्धारित कर देने से भारतीयों को अपने मतभेदों को दूर करने का अवसर मिलेगा। अब हम भारत के मामले में अत्यन्त ही विषम और अन्तिम स्थिति में पहुँच चुके हैं। अब हमें अपने कार्य की अपने देश, भारत तथा शेष विश्व के सामने परिणाम देखने की जोखम उठानी ही चाहिये। हमें अपने मतभेद अब उन कार्यों के करने से रोक नही सकते, जिनको हम न्यायोचित मानते हैं। इस उलझे हुए समय में हमें अपने देश वासियों और भारत को यह नहीं दिखाना है कि हम निर्णय बुद्धि में पिछड़े हुए हैं। हमे पूर्ण विश्वास है कि यदि भारत की तमाम पार्टियाँ अपने भेदभाव को भुलाकर सहयोग से कार्य करे तो वे अवश्य ही हमारे भारत छोड़ने की तिथि तक एक निर्णय पर पहुँच सकती हैं। हमारी, भारत वर्ष से भावी मैत्री का वास्तविक आधार दोनो के पारस्परिक सहयोग में ही सन्निहित है।"

८ मार्च को कांग्रेस कार्य-समिति की बैठक में तीन महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए। कार्य-समिति ने एटली की २० फरवरी की घोषणा पर संतोष प्रगट करते हुए कहा कि "कार्य-समिति उक्त घोषणा का स्वागत करती है कि ब्रिटिश सरकार का निश्चित इरादा है कि जून १६४८ तक भारत को सत्ता सौंप दी जाय और इस इरादे को कार्य रूप में परिणत करने के लिये वह पहिले से कदम उठाना चाहती है। सत्ता हस्तान्तर करने के कार्य को सुगम बनाने के लिये यह आवश्यक है कि व्यवहारतः अन्तर्कालीन सरकार को एक औपनिवेशिक सरकार

माना जाय और सरकारी कर्मचारियों तथा शासन-व्यवस्था पर उसका प्रभाव पूर्ण नियन्त्रण रहे तथा वायसराय और गवर्नर जनरल सरकार के वैधानिक प्रधान के रूप में कार्य करे। केन्द्रीय सरकार को अवश्य ही ऐसे मन्त्रिमण्डल के रूप में कार्य करना चाहिये जिसको पूर्ण सत्ता तथा जिम्मेदारी प्राप्त हो। अन्य कोई व्यवस्था अच्छी सरकार के असंगत है और संक्रमण काल मे जो राजनीतिक तथा आर्थिक संकटों से भरा है, ऐसी व्यवस्था खतरनाक भी है।"

"कांग्रेस ब्रिटिश-मंत्रि-मण्डल मिशन की १६ मई १९४६ ई० की योजना को स्वीकार कर चुकी है और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल ने दिसम्बर १९४६ ई० में इस योजना का जो भाष्य किया उसे भी कांग्रेस स्वीकार कर चुकी है। इसके अनुसार विधान परिषद कार्य कर रही है और अपना कार्य जारी रखने के लिये उसने विभिन्न समितियाँ बनाई हैं। अब इस कार्य को जल्दी पूरा करना और भी जरूरी हो गया है ताकि एक भारतीय संघ और उसकी इकाइयों के लिये विधान अंतिम रूप से तैयार हो जाय और सत्ता के अन्तिम हस्तान्तर को सुगम बनाने के लिये इस विधान को उपयुक्त समय के भीतर कार्यान्वित किया जाना चाहिये।"

"विधान-परिषद मे सम्मिलित होने के लिये कई रियासतों ने जो निश्चय किया है, कार्य समिति उसका स्वागत करती है और आशा करती है कि भारतीय संघ का विधान बनाने के इस कार्य में सब रियासतों तथा उनकी जनता को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा। लीग के जो प्रतिनिधि विधान-परिषद के सदस्य चुने गये हैं उनसे इस ऐतिहासिक कार्य मे शामिल होने के लिये कार्य-समिति फिर अपील करती है।"

"विधान-परिषद का कार्य प्रधानतया स्वेच्छा कार्य है। कार्य समिति ने कई बार कहा है कि भारत के लिये विधान बनाने में कोई जबरदस्ती नहीं होना चाहिये और न हो सकती है। जोर जबरदस्ती या

मजबूर किये जाने के डर से ही अविश्वास, शका तथा सघर्ष का जन्म होता है। यदि यह भय मिट जाय—जैसा कि वह अवश्य मिटेगा—तो सब जातियो के अधिकारों की रक्षा के लिये तथा सबको समान अवसर प्रदान करने के लिये भारत का भविष्य निर्धारित करना आसान होगा। यह स्पष्ट कर दिया गया है कि विधान-परिषद द्वारा निर्मित विधान केवल उन क्षेत्रों पर लागू होगा जो उसे स्वीकार करते हैं। यह ध्यान में रखना चाहिये कि कोई प्रान्त का भाग जो विधान को स्वीकार करता है और संघ में सम्मिलित होना चाहता है, वैसा करने से रोका नहीं जा सकता। ' अतएव किसी भी रूप में कोई जबरदस्ती नहीं की जा सकती। जनता स्वयं अपना भविष्य निर्धारित करेगी। अधिकतम सहमति के साथ लोकतन्त्रीय निर्णय करने का यह शान्तिपूर्ण तथा सहयोगपूर्ण तरीका ही एक मात्र तरीका है।"

"इस समय जब कि अन्तिम निर्णय करने हैं और भारत का भावी विधान भारतीय हाथों और भारतीय दिमाग से बनना है, कार्य-समिति सब दलों तथा वर्गों और आमतौर पर सब भारतीयों से हार्दिक अपील करती है कि वे हिंसा तथा जोर जबरदस्ती के तरीकों को त्याग कर विधान निर्माण के कार्य में शान्तिपूर्ण तथा लोक तन्त्रात्मक ढंग से सहयोग दें। अब निर्णय का समय आ गया है और उसे कोई भी नहीं रोक सकता है। एक युग का अन्त सन्निकट है और नया युग शीघ्र ही आरम्भ होगा। झगड़े फसादों तथा घृणा को भूतकाल की बीती बाते समझकर अब हमें वीरता से नवयुग के निर्माण में लग जाना चाहिये।"

मुस्लिमलीग के प्रतिनिधियों को निमंत्रित करते हुए उक्त प्रस्ताव मे अपील की गई है कि—"भारत में शीघ्रतापूर्वक सत्ता परिवर्तन की ओर ले जानेवाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भारतीय जनता के लिये यह अनिवार्य हो गया है कि वह अपने को इस परिवर्तन के लिये

सयुक्त रूप से और सहयोग पूर्वक तेजी के साथ तैयार करे, जिससे उसे शान्तिपूर्वक और सबके लिये लाभजनक रूप में कार्यान्वित किया जा सके। अतः काग्रेस कार्य समिति मुस्लिमलीग को आमन्त्रित करती है कि जो स्थिति उत्पन्न हो गई है उस पर विचार करने और उसके हल का उपाय निकालने के लिये वह काग्रेस के प्रतिनिधियो से बात-चीत करने के लिये अपने प्रतिनिधि नियुक्त करे।"

सिखो तथा अन्य दलों के हितों पर कार्य समिति ने अपने प्रस्ताव में विचार करते हुए कहा है कि "सिख तथा अन्य समूहों के हितों की रक्षा के लिये की जाने वाली कार्रवाई में उनका सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से सिख तथा अन्य सम्बन्धित समूहों से निकट सम्पर्क रखेगी।"

पंजाब व बंगाल के विषय में वस्तुस्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करते हुए कार्य-समिति के प्रस्ताव मे लिखा गया है कि—"पजाब और बंगाल मे अल्पसख्यक की समस्या तीव्र हो गयी है। क्योंकि वहाँ बहुमत और अल्पमत लगभग बराबर हैं। यह अनुभव किया जाता है कि जब तक मुसलमान प्रातीय शासन चलाने के लिये कुरान के आदेशों से स्फूर्ति प्राप्त करते हुए एक धार्मिक दल के रूप में आचरण करेंगे तब तक दोनों में से एक प्रान्त में भी स्थायी मन्त्रि-मण्डल नहीं बन सकता। यह मालूम हुआ है कि केन्द्रीय असेम्बली के बगाल हिन्दू सदस्यों की एक बैठक हुई थी। उसमें उन्हे आजाद हिंन्द फौज के मेजर जनरल चैटर्जी और हिन्दू महासभा के श्री चटर्जी की सदस्यता भी प्राप्त थी। बैठक में यह तै किया गया कि बगाल साम्प्रदायिक समस्या को हल करने का केवल एक उपाय उसका बाँट देना है। हमें भी यह रुख ग्रहण करने के लिए बाध्य होना पड़ा है क्योंकि बंगाल के लीगी मंत्रि-मण्डल में अल्पसंख्यक जाति का एक भी प्रतिनिधि नही है।"

कार्य समिति का पंजाब सम्बन्धी प्रस्ताव इस प्रकार है—

"पंजाब में, जो अभी तक इस छूत से बचा हुआ था, छः सप्ताह पहिले, लोकप्रिय मंत्रि-मंडल को, जिसपर वैधानिक तरीके से आक्रमण

किया ही नही जा सकता था, दबाने और भग करने के लिए कुछ उच्च सत्ताधारी व्यक्तियों के सहयोग से एक आदोलन खड़ा किया गया, इसमें एक हद तक तो सफलता मिली और ऐसा मत्रि-मडल स्थापित करने का प्रयत्न किया गया जिसमें उक्त आदोलन का सचालन करने वाले दल की प्रभुता हो। उसका तीव्र विरोध हुआ और अधिकाधिक और व्यापक हिसा उसका नतीजा हुआ। हत्या और अग्निकाण्ड के भीषण कृत्य हुये और अमृतसर तथा मुलतान भीषणता और संहार के दृश्य बने।"

"इन दुखद घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि हिंसा और बल प्रयोग से पंजाब की समस्या का हल नहीं हो सकता, और जबरदस्ती के बल पर की गई कोई व्यवस्था टिक नहीं सकती। इसलिए कोई ऐसा रास्ता निकालना जरूरी है जिसमें कि कम से कम दबाव हो। इसलिए पंजाब को दो प्रान्तों में विभाजित करने की आवश्यकता होगी, जिसमें मुसलमानों की प्रमुखता वाले भाग गैरमुसलमानों की प्रभुता वाले भाग से अलग किये जा सके। कार्य-समिति इस हल की, जो सब सम्बन्धित जातियों के लिए लाभकर होगा और जिससे एक दूसरे के बीच के झगड़े, भय और संशयों मे कमी हो जायेगी, सिफारिश करती है। कार्य-समिति पजाब की जनता से वहाँ चल रहे हत्याकाड और पाशविकता को बन्द करने, दुखद स्थिति का सामना करने और ऐसा हल निकालने का निश्चय करने की जिसमें किसी प्रमुख समूह पर दबाव न पड़े, और जो झगड़े के कारण सफलता-पूर्वक दूर हो सके, अपील करती है।"

काग्रेस कार्य-समिति के इस प्रस्ताव का भारत के तमाम प्रमुख राजनीतिज्ञों एवं सम्बन्धित विदेशी राजनीतिज्ञों ने स्वागत किया।

१६ मार्च को इंग्लैण्ड से लौटने के साथ ही करांची में सर सर्व पल्ली राधाकृष्णन ने बताया कि ब्रिटिश सरकार की यह इच्छा असन्दिग्ध है कि योग्य भारतीयों के हाथ में सत्ता सौंप दी जाय। ब्रिटेन की एक मात्र इच्छा

है कि भारत स्वतंत्र तथा संयुक्त ही रहे और उसका ब्रिटेन के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध रहे। यद्यपि एटली ने कहा है कि मजदूर सरकार जून १६४८ तक भारत के हाथों में सत्ता सौप देगी किन्तु व्यवहारिक रूप से भारत स्वतंत्र हो चुका है। ब्रिटिश सरकार ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि उनकी नवीनतम घोषणा में पाकिस्तान के लिए कोई भी गुंजायश नही है, और किसी भी रूप में सत्ता अशांति एवं अराजकता भड़काने वालों को नहीं सौपी जायगी। अब अग्रेजो ने अपने को इस विचार का आदी बना लिया है कि भारत ब्रिटिश-राष्ट्र-मण्डल को छोड़ सकता है। वे भारत पर प्रभुत्व कायम नही रखना चाहते बल्कि उसके साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहारिक सम्बन्ध रखना चाहते हैं।"

देशी रियासतों का प्रश्न-

भारतीय-विधान-परिषद के प्रथम अधिवेशन में देशी रियासतों के प्रतिनिधियो से बातचीत चलाने के उद्देश्य से जो रियासती समझौता समिति (Negotiating Gommittee) का निर्माण हुआ था उसके फल-स्वरूप जनवरी के आखिरी हफ्ते में नरेन्द्र-मण्डल के तथा मन्त्रियों की सम्मिलित बैठके हुई और उसमें नरेन्द्र-मण्डल की वैधानिक परामर्शदात्री समिति ने विधान-परिषद की समझौता समिति से बातचीत सम्बन्धी मसौदा तैयार कर लिया। मसौदे में परामर्शदात्री समिति को निम्न अधिकार प्रदान किये गये हैं—

१—रियासतों द्वारा नियुक्त की जाने वाली समझौता समिति को ही रियासतों की ओर से बातचीत करने का अधिकार रहे।

२—विधान-परिषद में विभिन्न रियासतों के प्रतिनिधियों की संख्या नियुक्त करना रियासतों का ही हक है।

३—प्रत्येक रियासत के विधान तथा सीमा के सम्बन्ध में विधान परिषद को कोई अधिकार नहीं रहेगा।

४—समझौता समिति के अधिकार का क्षेत्र विधान-परिषद द्वारा निर्धारित क्षेत्र से अधिक है।

मसविदे में यह भी कहा गया है कि भारतीय नरेश देश की स्वाधीनता के आधार पर भारत के लिए भावी विधान बनाने में सहयोग देने के लिये तैयार हैं, किन्तु विधान-परिषद में रियासतों के प्रतिनिधि अक्षरशः ब्रिटिश मंत्रि-मंडल के वक्तव्य के आधार पर ही सहयोग करेंगे, इसमें भारतीय रियासतें कोई परिवर्तन करना नहीं चाहतीं। भावी भारतीय संघ में रियासतों के सम्मिलित होने के सम्बन्ध में रियासतों से अलग-अलग समझौता करना होगा जैसा कि ब्रिटिश मंत्रि-मण्डल की योजना में है। रियासतें इस बात के लिए कभी भी तैयार नहीं होंगी कि संघ के अधिकार ब्रिटिश योजना में बताये गये अधिकार की अपेक्षा बढ़ाये जायँ।

नरेन्द्र-मण्डल का प्रस्ताव—नरेन्द्र-मण्डल ने भारत की वैधानिक समस्या के बारे में जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, वह उनकी अति सावधानी का परिचायक है। इस प्रस्ताव से न तो इस बात का पता चलता है कि रियासतें लोकतन्त्री भारत के साथ अपना मेल बैठाने के लिये अपने शासन-तन्त्रों में क्या परिवर्तन करने को तैयार हैं और न भारत के भावी विधान के सम्बन्ध में विधान-परिषद के निश्चयों से अपने को बाँधने को तैयार है, हालाँकि मन्त्रि-मिशन की योजना के अनुसार रियासती प्रतिनिधि उसमें भाग लेंगे। नरेशों ने यह दावा किया है कि विधान-परिषद द्वारा नियुक्त समझौता समिति से रियासतों की ओर से चर्चा करने का एक मात्र अधिकार राजाओं द्वारा नियुक्त समझौता समिति को ही है। रियासती जनता के प्रतिनिधियों ने राजाओं के इस दावे से इन्कार कर दिया है और यह स्पष्ट कह दिया है कि उनके परामर्श लिये बिना जो भी निर्णय किये जायेंगे, वे रियासती जनता के लिये अनिवार्य नहीं होंगे। यह अत्यन्त ही खेद का

विषय है कि समझौता-समिति की नियुक्ति करने में राजाओं ने रियासती जनता के प्रतिनिधियों का सहयोग लेना आवश्यक नहीं समझा। चारों ओर से जो परिवर्तन हो रहे हैं उनको समझते-बूझते हुए भी रियासती जनता के प्रति राजाओं के दृष्टिकोण में अभी तक कोई मौलिक परिवर्तन नही हुआ है और वे उसकी आकाक्षाओं के प्रति उपेक्षा-भाव प्रदर्शित कर रहे हैं। अपनी इस उपेक्षा द्वारा राजा लोग रियासती जनता को यह कहने के लिये बाध्य कर रहे हैं कि अकेले राजा रियासतों का प्रतिनिधित्व नहीं करते। राजाओं को यह समझने की आवश्यकता है कि इस प्रजातन्त्री जमाने में राजा नामधारी चन्द मुट्ठी भर व्यक्तियों को रियासतों के नाम पर सब कुछ करने का अधिकार नही हो सकता और रियासतों की दस करोड़ जनता की आवाज की उपेक्षा नहीं की जा सकती जो कि रियासतों का अनिवार्य और आवश्यक अंग है। राजाओं ने भारतवर्ष का सर्व-सम्मत विधान बनाने और प्रस्तावित भारतीय-संघ की स्थापना में अधिक से अधिक सहयोग प्रदान करने का आश्वासन दिया है। जो लोग इस समय विधान-परिषद के काम में सहयोग दे रहे हैं, उनकी कोशिश यही है कि सभी दलों के सहयोग से भारत का भावी विधान बनाया जाय। किन्तु भारतीय-विधान-परिषद को तो यदि किन्ही उचित अथवा अनुचित कारणों से किसी दल विशेष का सहयोग न मिले तो भी मन्त्रि-मिशन की योजना द्वारा निर्धारित कार्य-पद्धति के अनुसार विधान बनाना होगा। राजाओं ने अपने प्रस्ताव में उन बातों की भी चर्चा की है जिनको वे मन्त्रि-मिशन की योजना के अनिवार्य अग समझते हैं। पर अभी तो विधान-परिषद की समझौता समिति और रियासती समझौता समिति को केवल यह तै करना है कि रियासतों के लिए विधान-परिषद में जो ९३ स्थान निर्दिष्ट किये गये हैं उनका रियासतों के बीच आपस में बटवारा किस प्रकार हो और ये रियासती प्रतिनिधि विधान-परिषद मे किस तरीके से भेजे जायँ। रियासती प्रतिनिधि जब विधान-परिषद में शामिल हो जायँगे उस समय

यह भी विचार करना आवश्यक होगा कि कौन-कौन मे अधिकार भारतीय सघ के हाथ मे रहने चाहिये।

राजा लोग न केवल अपने मौजूदा अधिकारों को अक्षुण्ण रखने के लिए व्यग्र हैं, बल्कि राजनैतिक परिवर्तनों का लाभ उठाकर अपनी सत्ता के क्षेत्र को और भी विस्तृत कर लेने की चेष्टा कर रहे हैं। आज तो वे बृटिश सार्वभौम सत्ता के पूर्णतया अधीनस्थ हैं, किन्तु उसके हट जाने के बाद पूर्णतया स्वतंत्र और स्वच्छन्द हो जाना चाहते हैं। वे यह कल्पना भी कर रहे हैं कि उनकी इच्छा हो तो वे भारतीय संघ में शामिल हों और इच्छा हो तो उससे बिलकुल अलग और स्वतंत्र रहे। राजाओं का यह भी कहना है कि जब तक विधान का सारा चित्र उनके सामने नहीं आजायेगा, तब तक वे भारतीय-सघ में शामिल होने के बारे में कोई निर्णय नही करेंगे और हर छोटी-बड़ी रियासत अलग-अलग तौर पर भारतीय संघ मे शामिल होने का निर्णय करेगी। राजाओं के इस निर्णय को विधान-परिषद मुश्किल से ही स्वीकार कर सकेगी। जो रियासते मंत्रि-मिशन की योजना के आधार पर मूलभूत सिद्धान्तों को स्वीकार करके विधान-परिषद मे अपना प्रतिनिधि भेजती हैं, साधारण विवेक तो यही कहता है कि उन रियासतों को विधान-परिषद द्वारा बनाया हुआ विधान मान्य होना चाहिये। अवश्य ही वह विधान उस योजना के आधार भूत सिद्धान्तों के अनुसार होगा और यदि उसमें कुछ हेर फेर हुआ तो वह आपस की राय से ही होगा। यदि रियासतें विधान-परिषद के निर्णयों को मानने या न मानने के लिए स्वतंत्र रहती हैं तो उनके प्रतिनिधियो का विधान-परिषद में शरीक होना अर्थ-शून्य हो जाता है। राजा लोग यदि भारत की स्वतंत्रता में सचमुच सहायक होना चाहते हैं तो उन्हें अपने सहयोग को अनावश्क प्रतिबन्धों से नहीं जकड़ लेना चाहिये। रियासतों के भीतर आन्तरिक सुधार जारी करने के प्रश्न को भी राजाओं को अपना निजी मामला बनाकर नहीं रखना होगा। आन्तरिक सुधारों का प्रश्न रियासती जनता की दृष्टि से

तो जरूरी है ही, शेष भारत की दृष्टि से भी जरूरी है। जब ये शेष भारत के साथ एक राजनीतिक सूत्र में आबद्ध होने जा रहे है तो उन्हें इस सम्बन्ध मे उसकी भावनाओ और इच्छाओं का आदर और उसके साथ समझौता करना ही होगा।

ता० ८, ६ व १० फरवरी को विधान-परिषद तथा नरेशों की समझौता समितियों के प्रतिनिधियों की बैठके हुईं। इन बैठकों में दोनो समितियो ने एक दूसरे की स्थिति समझने का प्रयत्न किया। फलस्वरूप १० फरवरी को दोनों समितियों में रियासतों के विधान-सभा मे शामिल होने के प्रश्न पर समझौता हो गया। नवाब भोपाल चांसलर नरेन्द्र-मण्डल व पं० जवाहरलाल नेहरू ने एक सयुक्त वक्तव्य जारी करते हुए कहा कि—"नरेन्द्र-मण्डल द्वारा नियुक्त रियासतों की वार्ता समिति और विधान-परिषद की वार्ता-समिति के बीच शनिवार और रविवार को बैठके हुईं। बहस के दौरान में मन्त्रि-मिशन का १६ मई का वक्तव्य, विधान-परिषद के प्रस्ताव और राजाओं की कान्फरेन्स द्वारा स्वीकृत किये गये प्रस्तावों पर चर्चा हुई। हम एक आम समझौते पर पहुँच गये जिसके आधार पर विधान-परिषद में रियासतों के प्रतिनिधित्व पर विचार हुआ। तदनुसार विधान-परिषद और नरेन्द्र-मण्डल के मंत्रियों से रियासतों के लिये नियत ६३ सीटों के बटवारे के विषय में तफसील तैयार करने और उन्हें दोनों समितियों की अगली बैठक में पेश करने को कहा गया। आगामी बैठक १ मार्च को होगी।"

साथ ही विधान-परिषद के मंत्री ने भी इस आशय का वक्तव्य प्रकाशित किया कि "विधान-परिषद द्वारा नियुक्त रियासती वार्ता-समिति आज बड़ोदा के दीवान सर ब्रजेन्द्र लाल मित्तर से मिली और यह तै हुआ कि सभा में तीन प्रतिनिधि होंगे। यह भी निश्चय हुआ कि ये तीनों प्रतिनिधि अनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर राज्य धारा-सभा द्वारा ही चुने जायेंगे और केवल निर्वाचित तथा गैर सरकारी नाम-जद सदस्य ही उसमें मत देंगे। सरकारी नामजद सदस्य राय नहीं देंगे।"

इसके बाद कौंसिल भवन में दोनों समितियों की संयुक्त बैठक हुई। नवाब भोपाल ने एक वक्तव्य पढ़ा जिसमे नाराज होकर विधान-परिषद की वार्ता-समिति उस बैठक से हट जाने को तैयार हो गई, पर महाराज पटियाला ने स्थिति को विषमतर होने से बचा लिया। उन्होने पण्डित नेहरू मे जो प्रश्न किये और नेहरू जी ने जो उत्तर दिये वे महाराजाओं को सन्तोषप्रद लगे। नवाब भोपाल, सर सी० पी० रामा स्वामी ऐय्यर और सर रामास्वामी मुदालियर ही उन उत्तरों से सन्तुष्ट नही हुए। नवाब भोपाल व पोलिटिकल डिपार्टमेट ने जो षडयन्त्र रच रखा था वह पटियाला, बीकानेर, ग्वालियर, जयपुर, जोधपुर व उदयपुर के महाराजाओं के देशभक्तिपूर्ण रुख व सर मिर्जा इस्लाम के मार्ग-प्रदर्शन व नेक सलाह के कारण विफल हो गया। नवाब भोपाल ने रोड़ा अटकाया था कि जब तक २९ जनवरी का राजाओं का प्रस्ताव प० नेहरू नही स्वीकार कर लेते तब तक कोई भी चर्चा नही हो सकती। प० नेहरू के यह उत्तर देने पर कि विधान-परिषद् की वार्ता-समिति को देशी राज्यों के प्रतिनिधियों के बँटवारे और चुनाव के अलावा और किसी बात पर चर्चा करने का अधिकार नही है, तथा ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों के साफ-साफ यह कह देने पर कि अगर राजा लोग विधान परिषद् में नही आयेंगे तो विधान-परिषद् संघ और प्रान्तीय विधान बना लेगी और ब्रिटिश सत्ता के हट जाने के बाद राजाओं को अपनी सीमा के भीतर और बाहर तीव्र विरोध का सामना करते रहना पड़ेगा। नवाब भोपाल तथा असन्तुष्ट लोगों का रुख ढीला पड़ गया।

इसके बाद तमाम देशहितैषी नरेश बीकानेर की कोठी पर एकत्रित हुए और सभी ने यह तय किया कि नवाब भोपाल यदि २९ जनवरी के प्रस्ताव पर डटे रहेंगे तो सभी राजा इस्तीफा दे देंगे। नवाब भोपाल ने अपनी स्थिति बिगड़ती देखकर अपना प्रस्ताव वापस ले लिया। इसके बाद फिर नरेन्द्र-मण्डल की बैठक हुई पर उसमें किसी ने भी

यह प्रश्न नहीं उठाया कि बड़ौदा ने विधान-परिषद के साथ अलग ही समझौता कैसे कर लिया !

१४ फरवरी को बड़ौदा के दीवान सर ब्रिजेन्द्रलाल मित्तर ने प्रेस कान्फरेन्स में वक्तव्य देते हुए कहा कि—"२६ जनवरी के नरेन्द्र-मण्डल के प्रस्ताव के प्रकाशित होने पर राजाओं के औचित्य के दावे के बारे में विवाद उठ खड़ा हुआ। कांग्रेस का रुख यह था कि समझौता समितियों का काम रियासतों के प्रतिनिधित्व का तरीका तै करना और ६३ सीटों का बटवारा करना है। दिल्ली पहुँचने पर मैंने रियासतों का एक ऐसा मजबूत दल भी पाया जो रियासती समझौता समिति के अवरोधक रवैये इख्तयार करने की हालत में बड़ौदे के नेतृत्व का अनुसरण करने को तैयार था। मैंने इस दल का उत्साह बढ़ाया और देश के इस निर्णायक अवसर पर उनसे देश-भक्ति का परिचय देने की अपील की। मैंने उन्हें स्पष्ट कर दिया कि यह समय देश की आजादी या गुलामी के विषय में निर्णय करने का है, राजाओं के अधिकारों या विशेषाधिकारों का समय नहीं। इन रियासतों ने मेरी बात मान ली और नतीजा आपके सामने ही है। बड़ौदा के आगे बढ़ने के साथ ही उन्होंने उस घेरे को तोड़ दिया जो प्रतिक्रियावादियों ने खड़ा कर रखा था। हमारी चर्चा पंडित नेहरू से इस बात पर हुई कि अल्प-संख्यकों और पिछड़ी हुई जातियों को प्रतिनिधित्व मिले। पंडित नेहरू और सरदार पटेल ने सुझाया कि बड़ौदा की धारा-सभा में नामजदगी इन वर्गों के हित में ही की गई है, अतः यदि धारा-सभा के निर्वाचित और गैर सरकारी नामजद सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर प्रतिनिधियों का चुनाव करें तो वह उद्देश्य सिद्ध हो जायेगा और उन्होंने जोर दिया कि प्रतिनिधियों की पसन्दी चुनाव के तरीके से ही की जाय। हमारा भी यही उद्देश्य था कि हमारी समस्त जनता को प्रतिनिधित्व मिले। मैंने पण्डित नेहरू और सरदार पटेल को बताया कि महाराजा गायकवाड़ ने मुझे हिदायत

दी है कि मै स्वतंत्र भारत का विधान बनाने मे विधान-परिषद को सहायता प्रदान करूँ।"

नरेशों में २६ जनवरी के प्रस्ताव पर जो मतभेद हुआ उसके लिये नवाब भोपाल ने ता० १६ फरवरी को एक वक्तव्य दिया जिसमें उन्होंने बताया कि—"रियासतों की ओर के शुरु से आखिर तक सभी निर्णय सर्वसम्मति से हुए हैं और नरेशों मे किसी भी ओर से अलग होने की धमकी अथवा किसी मूल सिद्धान्त पर कोई मतभेद होने की कोई बात नही थी। रियासतों के रवैये की युक्तियुक्तता और उनके निर्णयों को सर्वसम्मत होने के कारण ही वे अपने मामले को इस रूप में आगे बढ़ा सके, जिन्हें वे अपने हित के लिये आवश्यक समझते थे। लेकिन रियासतें इस बात का दावा नही करती कि सारा श्रेय अथवा उसका अधिकाश भाग उनका है। रियासतों की मान्यता के विषय में भारतीय विधान-परिषद की वार्ता-समिति के प्रमुख वक्ता ने जो सन्तोषजनक रवैया ग्रहण किया, यदि वह न हुआ होता तो समझौता तो हो ही नही सकता था, यहाँ तक कि बातचीत भंग हो गई होती।"

इसके बाद त्रावणकोर के दीवान सर सी० पी० रामास्वामी अय्यर ने ता० १७ फरवरी के अपने वक्तव्य में बताया कि—"नरेन्द्र-मण्डल के चासलर के नेतृत्व में रियासतों तथा लीग के बीच, कांग्रेस का विरोध करने के लिये गठबन्धन हो रहा है। मुझे ऐसे किसी भी गठ-बन्धन की खबर नही है।"

"दोनों वार्ता-समितियों की कार्रवाई की रिपोर्ट चांसलर को पण्डित नेहरू की कृपा से दी गई तथा यह बात उस बैठक में बता दी गई थी जिसमें सर मित्तर उपस्थित थे। यदि उसे प्रकाशित किया जाय तो उससे यह स्पष्ट हो जायेगा, जैसा नवाब भोपाल ने कहा है कि रियासतों ने जो अपना मन्तव्य प्रस्तुत किया है, उसके प्रति कांग्रेस के उचित रवैये के ही कारण उनकी बातचात सफल हो सकी।"

२० फरवरी को दक्षिण (महाराष्ट्र) की रियासतो के समूहीकरण की योजना के सम्बन्ध में राजाओ के प्रतिनिधियों और कांग्रेसी नेताओ के बीच समझौता हो गया। योजना के मुख्य पहलू निम्न प्रकार से हैं—

१—राजागण घोषित करें कि सम्पूर्ण सत्ता जनता के हाथो में है।

२—विधान निर्मात्री सभा मे प्रजा के प्रतिनिधियों की प्रमुखता हो। उनका चुनाव लाख पीछे दो सदस्यों के हिसाब से किया जाय। सभा को सार्वभौम माना जाय।

३—भापा के आधार पर दो समूह बने—एक महाराष्ट्र का, दूसरा कर्नाटक का।

४—भाषा के आधार पर प्रान्तों की पुनर्रचना होने पर ये राज्य अपनी-अपनी भाषा के प्रान्तो में मिल जायँ और उस समय राजाओं के हितों का उचित संरक्षण किया जाय।

५—केवल राजाओं के बोर्ड का अध्यक्ष समूह का प्रतिनिधित्व करे और वही उस समूह का वैधानिक प्रमुख माना जाय।

६—यही अध्यक्ष समूह के हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश की नियुक्ति करे।

७—राज्यों की शासन सम्बन्धी और राजनीतिक सीमाएँ तोड़ दी जायँ।

प्रस्तावित समूह की जनसंख्या लगभग १२ लाख और वार्षिक आय सवा करोड़ रुपयों की होगी। राजाओं के विशेषाधिकारों का निर्णय करने के लिये अखिल-भारतीय प्रजा-परिषद के अध्यक्ष, कांग्रेस के प्रधानमन्त्री तथा दो राज-प्रतिनिधियों की एक मध्यस्थ समिति बना दी जायगी। विधान-परिषद में हरिजनों और मुसलमानों के लिये दो-दो स्थान सुरक्षित रखे जायँगे।

इस योजना को पंडित नेहरू व सरदार पटेल और डाक्टर पट्टाभि सीतारमैया ने स्वीकार कर लिया है।

२० फरवरी के प्रधान मन्त्री मि० एटली ने लोक सभा मे घोषणा करते हुए रियासतों के भविष्य के सम्बन्ध में जाहिर किया कि—"रिया-सतों के बारे में ब्रिटिश सरकार अपना अधिकार और सार्वभौमता के कर्तव्य, ब्रिटिश भारत की किसी सरकार को सौंपना नहीं चाहती। सार्वभौमता को सत्ता हस्तान्तरित करने से पूर्व ममाप्त करने का इरादा नहीं है। इस बीच में रियासतो के सम्बन्ध अलग-अलग समझौते से स्थिर किये जायेंगे। सम्राट की सरकार जिन्हे सत्ता सौंपेगी, उनसे अलग समझौते करेगी।"

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री की घोषणा पर एक दृष्टि---

प्रधान मन्त्री ने अपनी ताजी घोषणा द्वारा एक तारीख मुकर्रर कर दी है, जिसके भीतर ब्रिटिश भारत की शासन सत्ता अन्तिम रूप से जिम्मेदार भारतीय हाथों में सौंप दी जायेगी। इस घोषणा में देशी राज्यों सबंधी ब्रिटिश सरकार की नीति को एक बार फिर दुराया गया है। ब्रिटिश मंत्रि-मिशन ने अपने वक्तव्यो मे यह साफ तौर पर कह दिया था कि ब्रिटिश सरकार को देशी राज्यों पर जो सार्वभौम सत्ता प्राप्त है उसका नये विधान के आधार पर, भारत और इग्लैण्ड के बीच सधि हो जाने के बाद अन्त हो जायेगा। श्री एटली ने उसी बात को दुहराते हुए कहा है कि ब्रिटिश सरकार सार्वभौम सत्ता के अधिकारों और जिम्मेदारियों को ब्रिटिश भारत की किसी सरकार को नहीं सौंपेगी। साथ ही श्री एटली ने यह भी कहा है कि यद्यपि सत्ता अन्तिम रूप से हस्तान्तरिक करने के पहिले सार्वभौम सत्ता का अन्त नही किया जायेगा, किंतु बीच के अर्से के लिए अलग-अलग राज्यों और ब्रिटिश सरकार के सम्बन्धों में आपसी समझौतों द्वारा हेर फेर किया जा सकेगा। ब्रिटिश प्रधान मंत्री श्री एटली ने अपनी ताजी घोषणा में देशी राज्यों के सम्बन्ध में एक यह नई बात कही है।

यदि भारतीय स्वाधीनता वास्तव में होनी ही है तो ब्रिटिश सत्ता का केवल ब्रिटिश भारत से हटना ही आवश्यक नही है, बल्कि देशी

राज्यों पर से भी उसका अन्त होना चाहिये। ब्रिटिश सरकार ने यह तो स्वीकार कर ही लिया है कि देशी राज्यों पर से ब्रिटेन का प्रभुत्व समाप्त हो जायेगा, किन्तु प्रश्न यह है कि क्या ब्रिटेन ब्रिटिश भारत में शासन सत्ता भारतीय हाथों में सौंपने के बाद भी देशी राज्यों के साथ सार्वभौमिकता के आधार पर न सही, अन्य किसी आधार पर भारत सरकार से पृथक अपने स्वतत्र सम्बन्ध कायम रख सकेगा? हमारा खयाल है कि ब्रिटिश सरकार की ऐसी कोई कल्पना नहीं होगी। स्वतत्र भारत की कोई भी केन्द्रीय सरकार किसी भी देशी राज्य को, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, किसी विदेशी राष्ट्र के साथ स्वतंत्र सम्बन्ध रखने की अनुमति नहीं दे सकती। यदि कोई राज्य यह कहने का दुस्साहस करे कि वह अब पूर्णतया स्वतंत्र हो गया है, इसलिए वह किसी विदेशी राष्ट्र के साथ स्वतंत्र सम्बन्ध रखने का अधिकारी है तो उसका यह दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता। देशी राज्यों की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए केन्द्रीय सरकार किसी भी देशी राज्य को ऐसी स्वतंत्रता देकर सारे देश की सुरक्षा को खतरे में नही डाल सकती। ब्रिटेन का देशी राज्यों के साथ भविष्य में किसी प्रकार के स्वतत्र सम्बन्ध कायम रखना भारत की स्वाधीनता की भावना के विरुद्ध होगा, जिसका आदर करने के लिए ब्रिटेन वचनबद्ध हो चुका है।

यह मुख्यतः ब्रिटिश भारत की जनता के प्रयत्नों और संघर्षों का परिणाम है कि न केवल ब्रिटिश भारत से बल्कि देशी राज्यों से भी ब्रिटिश शासन का अभिशाप दूर होने जा रहा है। देशी राज्यों की जनता के अलावा राजाओं को भी विदेशी सत्ता के हाथों कम अपमानित होना नहीं पड़ा है। राजाओं को आये दिन के अपमानों से मुक्ति मिलने पर देश की जनता का आभारी होना चाहिये। अवश्य हीं तत्वतः छोटे-बड़े सभी देशी राज्य सार्वभौम सत्ता के अन्त होने के साथ पूर्ण स्वतंत्र हो जायेंगे। किन्तु यदि किसी देशी राज्य का शासक

इससे यह समझ बैठता है कि उसे स्वच्छन्द आचरण करने की छूट मिल गई है, तो वह बड़ी गलती करेगा। यह सच है कि ब्रिटिश सरकार सार्वभौम सत्ता भारत की केन्द्रीय सरकार को नहीं सौंप रही है किन्तु इससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता कि वह देश की प्रमुख राजनीतिक शक्ति होगी और इस नाते वस्तुतः उसे घटनाओं को प्रभावित करने की सत्ता प्राप्त होगी। जैसी कि ब्रिटिश मंत्रि-मिशन ने कल्पना की है यदि देशी राज्य स्वेच्छा-पूर्वक भारतीय संघ में शामिल न होंगे तो किसी अन्य आधार पर अपने सम्बन्ध उन्हें स्थिर करने होंगे। भारतीय सघ मे देशी राज्य समानता के आधार पर ही शामिल हो सकेंगे, किन्तु यदि वे ऐसा नहीं करते तो देश की प्रमुख राजनीतिक शक्ति के साथ अपेक्षाकृत छोटे राज्यों के कैसे सम्बन्ध हो सकते हैं, इसकी कल्पना की जा सकती है। देशी राज्यों को केन्द्रीय सरकार की सार्वभौमता स्वीकार करनी ही होगी। यह हो सकता है कि भावी केन्द्रीय सरकार आज की भांति अपने सर्वोपरि अधिकारों का मनमाना प्रयोग न करे। अतः देशी राज्यों को दो स्थितियों में से किसी एक का चुनाव कर लेना होगा, उनके लिये और शेष भारत के लिए बराबरी के आधार पर भारतीय संघ में शामिल होना ही श्रेयस्कर होगा। ब्रिटिश सत्ता के इस देश से विदा होने की निश्चित तारीख मुकर्रर हो चुकी है और अब देशी राज्यों को अपनी हिचकिचाहट अथवा विलम्बकारी नीति को छोड़ कर विधान-निर्माण के काम में तत्परता पूर्वक सहयोग देने के लिए उद्यत हो जाना चाहिये।

सम्बन्ध निर्धारित करने में अन्तःकालीन सरकार का भी विशेष भाग रहेगा। ब्रिटिश सरकार का राजनीतिक विभाग देशी राज्यों में प्रतिक्रिया-वादी रवैया रखता रहा है और उसने देशी राज्यों की प्रगति में रोड़े अटकाये हैं। इस कारण देशी राज्यों की जनता को और अन्तःकालीन

सरकार को भी राजनीतिक विभाग के प्रति व्यापक असन्तोष रहा है। यह आवश्यक है कि बीच के अर्से में राजनीतिक विभाग पर पर्याप्त अंकुश रखा जाय और अन्तःकालीन सरकार और देशी राज्यों को समान दिलचस्पी के मामले पारस्परिक सद्भावना और समझौते द्वारा निबटा लेने दिये जायँ। देशी राज्यों को यदि स्वतंत्र भारत में अपना उपयुक्त स्थान ग्रहण करना हो तो अपने आन्तरिक शासन-तंत्रों को अविलम्ब समयानुकूल लोकतंत्री रूप दे देना चाहिये।

ता० १ मार्च से नरेशों व विधान-परिषद की वार्तासमितियों की बैठकें आरम्भ हो गईं। पहिले दिन नरेशों ने विधान-परिषद की वार्ता समिति से इस आधार पर विचार विनिमय किया कि विधान-परिषद में रियासतों के प्रतिनिधियों में से ५० प्रतिशत जनता द्वारा निर्वाचित हों। विधान-परिषद के प्रतिनिधियों ने यह प्रकट किया कि परिषद के लिये, प्रत्येक रियासती प्रतिनिधियों के लिए चाहे उन्हें जनता या नरेशों ने नामजद किया हो, यह आवश्यक है कि वे किसी न किसी प्रकार के चुनाव द्वारा ही लिए जायँ।

कुछ नरेश इस पक्ष में थे कि जनता द्वारा दो तिहाई प्रतिनिधि चुने जायँ। इस पक्ष में त्रावणकोर, जयपुर व जोधपुर के नरेश हैं।

इसके अलावा विधान निर्माताओं का यह भी विचार है कि भावी भारतीय संघ में केवल २५ ३० रियासतों की इकाइयाँ ही सम्बन्ध रख सकें। इसके लिए छोटी रियासतों की गुटबन्दी करने की योजना पर पर विचार जारी है। इन गुटों में सबसे बड़ा गुट गुजरात और काठिया-वाड़ की रियासतों का होगा। अनुमानतः उक्त गुट से विधान-परिषद में १४ प्रतिनिधि लिए जायेंगे।

ता० २ को नरेन्द्र-मण्डल और विधान-परिषद की वार्तासमितियों के बीच यह समझौता हो गया कि विधान-सभा में रियासतों के जो प्रतिनिधि लिये जायेंगे उनमें से आधे वर्तमान धारा सभाओं द्वारा

कर लिया है। यदि नरेन्द्र मण्डल का यही रवैया रहा तो निश्चय ही उसमें फूट पड़ जायेगी और बड़ौदा की तरह दूसरी रियासतें भी उससे सम्बन्ध स्थापित करने पर उतारू हो जायेंगी। राजाओं को अपना रुख इस समय देश-भक्ति पूर्ण और ईमानदारी से भरा हुआ रखना ही सबसे अधिक जरूरी है।

इसके बाद ता० ११ मार्च को जयपुर के श्रीकृष्णमाचारी ने धारा सभा में घोषित किया कि विधान-परिषद के लिये जयपुर रियासत से ३ प्रतिनिधि चुने जायेंगे। ता० १० मार्च को ग्वालियर रियासत के उपाध्यक्ष श्री एम० ए० श्री निवासन् ने घोषित किया कि ग्वालियर विधान-परिषद में सम्मिलित होगा। उन्होंने पण्डित जवाहरलाल नेहरू की समझदारी और राजनीतिज्ञ दूरदर्शिता की बहुत ही दाद दी। ता० १२ मार्च को जोधपुर सरकार ने घोषित किया कि हमारी रियासत भी विधान-परिषद मे सम्मिलित होगी।

ता० १२ मार्च को भावनगर रियासत ने घोषित किया है कि भावनगर भी विधान-परिषद में सम्मिलित होगा।

इसके बाद १२ मार्च को जयपुर रियासत ने अपने ३ प्रतिनिधियों व बड़ौदा रियासत ने भी अपने ३ प्रतिनिधियों के नाम विधान-परिषद में जाने के लिये घोषित कर दिये हैं।

१३ मार्च को पटियाला रियासत से घोषित किया गया है कि यह रियासत भी विधान-परिषद में शामिल होने का निर्णय कर चुकी है। इसी तारीख में कोचीन रियासत के खाद्य और शिक्षामन्त्री श्री गोविन्द-मेनन ने घोषित किया कि कोचीन भी भारतीय-संघ का निर्माण करने के उद्देश्य से विधान-परिषद में सम्मिलित होगी।

राजाओं का एक सम्मेलन अभी बम्बई में हुआ जो ता० ४-४-४७ को खत्म हुआ। इस सम्मेलन को नरेन्द्र-मण्डल के चांसलर नवाब भोपाल ने बुलाया था। इस सम्मेलन में वह समझौता विचारार्थ प्रस्तुत किया गया जो विधान-परिषद में देशी राज्यों के प्रतिनिधित्व

के सम्बन्ध में राजाओं और विधान-परिषद् की समझौता समितियों में हो चुका है और देशी राज्यों से पूछा गया कि इस सम्बन्ध में वे क्या कार्रवाई करना चाहते हैं। कुछ अरसे पहिले तक राजाओं ने अखिल भारतीय वैधानिक प्रश्नों के सम्बन्ध में संयुक्त मोर्चा कायम किया था, किन्तु विधान-परिषद और राजाओं की समझौता समितियों की पिछली चर्चा के समय ही यह जाहिर होगया था कि उस संयुक्त मोर्चे में एक चौड़ी दरार पड़ गई है। राजाओं में स्पष्टतः दो दल हो गये थे। उनमें से एक देश के वैधानिक प्रगति के काम में सहयोग देने को उत्सुक है जब कि दूसरा किसी न किसी बहाने से समय टालने और अप्रत्यक्ष रूप से अड़ंगा लगाने की कोशिश कर रहा है। यदि इस पिछले दल का वश चला होता तो विधान-परिषद् और राजाओं की समझौता-समितियों में कोई समझौता ही नहीं हो पाता और भारत के हित-शत्रुओं को यह कहने का अवसर मिल जाता कि भारतीय विधान-परिषद् को देशी राज्यों का भी सहयोग प्राप्त नहीं है। किन्तु बड़ौदा ने सबसे आगे अपना साहसपूर्ण कदम बढ़ाकर प्रतिगामियों के मन्सूबों पर तुषारापात कर दिया। बड़ौदा ने विधान-परिषद की समझौता समिति के साथ अलग से समझौता कर लिया। बड़ौदा के इस उदाहरण से स्फूर्ति और प्रेरणा पाकर पटियाला, बीकानेर आदि कुछ अन्य रियासतों ने भी देशहित का परिचय दिया और विधान-परिषद की समझौता-समिति के साथ समझौता कर लेने की तत्परता प्रदर्शित की। यह इन रियासतों के रवैये का ही परिणाम था कि राजाओं की समझौता समिति ने विधान-परिषद् के लिये देशी राज्यों के प्रतिनिधियों के बटवारे और उनके चुनाव के तरीके के बारे मे समझौता करके राजाओं का संयुक्त मोर्चा भंग नहीं होने दिया। किन्तु इस समझौते के बाद भी राजाओं का प्रतिगामी दल अपनी चालें चलने से बाज नहीं आया और उसने तय किया कि जब तक राजाओं की आम सभा उस समझौते को स्वीकार न कर ले

तब तक उस पर कोई अमली कार्रवाई न की जाय। इस निश्चय के बावजूद उत्तरी भारत की अनेक बड़ी रियासतें जिनमें पटियाला, बीकानेर, जयपुर, जोधपुर, ग्वालियर और रीवा आदि शामिल हैं, विधान-परिषद मे शामिल होने के निश्चय की सार्वजनिक रूप से घोषणा कर चुकी हैं। कुछ रियासतों में प्रतिनिधियों का चुनाव भी हो चुका है और शेष मे होने वाला है। इन रियासतों के इस देशभक्ति पूर्ण निश्चय के बाद राजाओं के बम्बई-सम्मेलन की यह चर्चा अर्थ शून्य हो जाती है कि देशी राज्यों को विधान-परिषद में शामिल होना चाहिये अथवा नहीं और यदि होना चाहिये तो कब और किन शर्तों पर होना चाहिये। नरेन्द्र मण्डल के सगठन से पहिले ही देश की कुछ प्रमुख रियासतें अलग हैं और बहुत सी रियासतों के स्वतंत्र निर्णय ने नरेन्द्र-मण्डल की अधीनता में हो रहे इस सम्मेलन के प्रतिनिधि स्वरूप को काफी कम कर दिया है।

नरेन्द्र-मण्डल के चांसलर नवाब भोपाल ने एक प्रश्न फिर से उठाया है कि राजाओं के सम्मेलन ने पिछली जनवरी में जो प्रस्ताव स्वीकार किया था और जिसमें सार्वभौम सत्ता, स्वतत्रता, राजवश के अधिकारों और रियासतों की भौगोलिक सीमाओं को कायम रखने के सम्बन्ध में आश्वासन मांगा गया था, उस प्रस्ताव पर राजाओं को अब भी आग्रह करना चाहिये और जब तक भारतीय विधान-परिषद उस प्रस्ताव की मर्यादा को स्वीकार न करले, तब तक राजाओं को विधान-परिषद में शामिल न होना चाहिये। यह भी कहा जा रहा है कि देशी राज्यों के प्रतिनिधियों को आखिरी वक्त में अर्थात् भारतीय यूनियन के विधान के निर्माण होने के समय ही विधान-परिषद में शामिल होना चाहिये। हम यह कहने को बाध्य हैं कि देश के इतिहास की इस नाजुक घड़ी में नवाब भोपाल राजाओं को गलत नेतृत्व दे रहे हैं और उदयपुर के प्रधानमन्त्री सर विजय राघवाचार्य ने पूर्व कथित आश्वासन प्राप्त करने पर आग्रह किया तो उन पर भारतीय प्रगति के शत्रु होने का

आरोप लगाया जा सकेगा। जब राजा लोग मन्त्रि-मिशन की योजना को सोलहो आना स्वीकार करने की दुहाई देते हैं तो उनके लिये विधान परिषद से असहयोग करने का कोई कारण नही रह जाता है। यदि वे इस बारे में टालमटोल की नीति का अवलम्बन करेंगे तो अपने प्रतिगामी रूप को ही प्रकट करेंगे।

ता० २ अप्रैल को नरेन्द्र मण्डल मे फूट पड़ जाने के बाद बड़ौदा के दीवान सर बृजेन्द्रलाल मित्तर ने नरेन्द्र-मण्डल के २ अप्रेल के प्रस्ताव पर वक्तव्य देते हुए कहा कि "मण्डल का निश्चय और अधिक विलम्ब का कारण होगा, जबकि इस समय सबसे अधिक आवश्यकता शीघ्रता करने की है। अन्तिम स्टेज आने तक विधान-परिषद् से अलग रहने का नरेन्द्र-मण्डल का निश्चय उसकी कई बार दुहराई गई इस अभिलाषा के विरुद्ध है कि वह एक सर्वसम्मत शासन विधान की तैयारी में भरसक सहायता देगा। गत फरवरी मास में रियासती वार्ता समिति ने ब्रिटिश भारतीय वार्ता-समिति से जो बातचीत की थी उसके प्रति रियासती वार्ता-समिति ने संतोष प्रकट किया था। अब जब कि बुनियादी अधिकारो और अल्प-सख्यकों, कबीलों और पृथक इलाकों के महत्व-पूर्ण मामलों पर विचार किया जा रहा है, क्या रियासतों को कुछ भी नहीं कहना है? यह बात सभी जानते हैं कि जब तक पूरी तस्वीर तैयार नही हो जायगी तब तक कोई रियासत कोई विधान स्वीकार करने को वाध्य नहीं है। इसलिये इस समय विधान-परिषद् में शामिल होने में क्या आपत्ति है। आखिरी स्टेज में विधान-परिषद में जाने का यह अर्थ होगा कि जिन विषयों पर पूरी तरह से विचार हो चुका है उन पर दुबारा विचार करना होगा। इसका एक मात्र परिणाम विलम्ब होगा, जब कि भारत की स्वतंत्रता की प्राप्ति के मामले में निश्चित समय का बहुत मूल्य है।"

इसके बाद स्थिति को नाजुक होती देखकर महाराजा बीकानेर ने एक अत्यन्त ही दूरदर्शिता एवं महत्वपूर्ण वक्तव्य ता० ३ अप्रैल

को प्रकाशित करते हुए अन्य नरेशों से अपील की कि वे विधान-परिषद में सम्मिलित हों।

नरेन्द्र मण्डल में "विधान परिषद में रियासती प्रतिनिधि आगामी अधिवेशन में ही भेजे जायँ या बाद में!—"इस प्रश्न को लेकर स्पष्ट दो दल होगये। महाराजा ग्वालियर तथा उनकी कौंसिल के उप-प्रधान श्री निवासन ने यथाशक्ति बहुत ही चेष्टा की कि दोनों दलों में समझौता हो जाय। अतः उन्होंने एक फारमूले का निर्माण किया और इस प्रकार इस फारमूले द्वारा वह खाई बहुत चौड़ी होने से बचा ली गई जो कतिपय नरेशों के प्रतिगामी रुख के कारण अस्तित्व में आ चुकी थी।

इसी बीच ३ अप्रैल को मिस्टर जिन्ना के उस भाषण का, जिसमें उन्होंने पाकिस्तान के आधार पर युद्ध विराम संधि करने की अपील की थी, उत्तर देते हुए श्री वल्लभ भाई पटेल ने अहमदाबाद की एक सार्वजनिक सभा मे कहा कि—"त्रावणकोर के दीवान ने राज्य का दर्जा स्वतंत्र घोषित कर दिया है। त्रावणकोर हिन्दुओं के पैरों की जगह है। यदि पैर कट जाय तो फिर शरीर का क्या होगा? मेरी राजाओं को विनीत सलाह है कि वे अलग नहीं रह सकते। वे विधान-परिषद से बाहर नहीं रह सकते। राजा, यदि ब्रिटिश भारत के हिन्दू मुस्लिम मतभेदों से अनुचित लाभ उठायेंगे तो अपनी आत्म-हत्या कर लेंगे। यदि कोई राजा सार्वभौमता कायम करेगा तो वह भूल करेगा। सार्वभौमता तो जनता की है।"

अन्त में ४ अप्रैल को नरेशों तथा उनके मन्त्रियों के संयुक्त सम्मेलन द्वारा, जो फारमूला स्वीकार किया गया, उसके अनुसार प्रत्येक रियासत को यह स्वतन्त्रता दे दी गई कि वे संघ विधान-मस्विदे के तैयार होने की प्रतीक्षा न करके विधान-परिषद में सम्मिलित हो सकते हैं। इस फारमूले के परिणाम-स्वरूप २८ अप्रैल को होने वाले विधान-परिषद के अधिवेशन में रियासतों के २० प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे।

इन प्रतिनिधियों में बड़ौदा के दीवान श्री बृजेन्द्रलाल मित्तर, जयपुर के श्री कृष्णमाचारी तथा बीकानेर के श्री के० एम० पान्नीकर तथा रियासतों के प्रमुख प्रतिनिधि श्री हीरालाल शास्त्री तथा जयनारायण व्यास हैं। चार के अलावा सभी प्रतिनिधि निर्वाचित ही होंगे।

विधान-परिषद् के लिये निम्नलिखित रियासतें अपने प्रतिनिधि भेजेगी—

प्रतिनिधि संख्या

बड़ौदा—३, जयपुर—३, रींवा—२, कोचीन—१, बीकानेर—१, जोधपुर—२, ग्वालियर—४, पटियाला—२

तथा अन्य रियासतों की ओर से दो प्रतिनिधि निर्वाचित होंगे।

दक्षिण की रियासतें भी इसी प्रगतिशील दल में सम्मिलि होने वाली हैं।

संघ अधिकार-समिति में रियासत के दो प्रतिनिधियों की नियुक्ति का प्रश्न गम्भीर है।

यदि नरेन्द्र-मण्डल के चांसलर, जिन्हें नियुक्ति करने का अधिकार है, ऐसा करने से इन्कार करेंगे तो फिर प्रतिनिधियों की नियुक्ति का यह प्रश्न सम्बन्धित रियासतों तथा विधान-परिषद के अध्यक्ष पर निर्भर होगा।

नरेन्द्र-मंडल के प्रगतिशील दल की विजय पर एक दृष्टि

नवाब भोपाल द्वारा आमन्त्रित बम्बई के नरेन्द्र-मण्डल के सम्मेलन में राजाओं और उनके मंत्रियों की मंत्रणा और चर्चा का विवरण जो पहिले प्रकाशित हुआ था, उससे यह आशंका पैदा हो गई थी कि भोपाल के नवाब साहब का प्रतिगामी नेतृत्व रियासतों को फिलहाल विधान-परिषद् में शरीक न होने देगा और इस प्रकार न केवल ब्रिटिश भारत और रियासती लोकमत की उपेक्षा की जायेगी बल्कि देश में प्रतिगामी शक्तियों के हाथ मजबूत किये जायेंगे, किन्तु ऐसा प्रतीत

होता है कि महाराजा बीकानेर के दृढ़ रुख के कारण राजाओं के प्रति-गामी दल के मंसूबे पूरे न होने पाये और महाराजा ग्वालियर और ग्वालियर कौंसिल के उप-सभापति श्री० ए० निवासन के बीच बचाव के फल स्वरूप उसे झुकने और समझौता करने के लिये वाध्य होना पड़ा।

राजाओं के मुख्य मतभेद का विषय यह था कि रियासतों को विधान-परिषद में तुरन्त ही शामिल हो जाना चाहिये अथवा उस समय शामिल होना चाहिये जब विधान-परिषद प्रान्तों और समूहों का विधान बना चुकने के बाद अखिल भारतीय यूनियन का विधान बनाने का कार्य आरंभ करे। यद्यपि रियासतों की ओर से अनेक बार यह दुहराया गया है कि वे देश की स्वतंत्रता की मांग का समर्थन करती हैं और देश का सर्वसम्मत विधान बनाने के काम में पूरा सहयोग देने को उत्सुक हैं, फिर भी नवाब भोपाल और उनके जैसे विचार के राजाओं ने विधान-परिषद के काम में सहयोग देने के बारे में रियासतों के अन्तिम निर्णय को अधिक से अधिक समय तक टालते रहने की नीति का ही अवलम्बन किया। ये लोग राजाओं के सम्मेलन में ऐसा प्रस्ताव मंजूर करवाना चाहते थे जिसके अनुसार इस बारे में अनिश्चित अवस्था ही बनी रहती। किन्तु सौभाग्यवश राजाओं के हल्को में ऐसे भी लोग हैं जो समय की तात्कालिक आवश्यकता को अनुभव करते हैं और इस नाजुक मौके पर देश के व्यापक हितों को दृष्टि से ओझल नहीं होने देना चाहते। उनकी राय मे अब वह समय आगया है, जब रियासतों को भावी भारत का विधान बनाने के महत्व पूर्ण काम में सहयोग देना चाहिये और इस प्रकार ब्रिटिश हाथों से भारतीय हाथों में सत्ता परिवर्तन करना और संभव बनाना चाहिये। जब विधान-परिषद और राजाओं की समझौता समितियो में रियासती प्रतिनिधियों के बटवारे और उनके चुनाव के तरीके के बारे में समझौता हो चुका है और देशी राज्यों के अधिकारों के बारे

में राजाओं की ओर से जो प्रश्न उठाये गये थे, उनके बारे में दोनों समझौता-समितियो की चर्चा सन्तोष जनक रही बताई जाती है। देशी राज्यों के लिये विधान-परिषद के साथ अपना सहयोग रोक रखना किसी तरह उचित और नैतिक नहीं हो सकता। यदि वे ऐसा करते हैं तो दूसरो को यह समझने का मौका देते हैं कि वे भारतीय प्रगति के मार्ग में रोड़े अटका रहे हैं और उनकी देश भक्ति और देश प्रेम की बातें जबानी जमा खर्च से अधिक महत्व नहीं रखतीं।

किन्तु मामला राजाओं के प्रतिगामी दल की शक्ति से बाहर जा चुका था। अनेक देशी राज्यों ने निजी तौर पर विधान-परिषद में शामिल होने के अपने निश्चय की घोषणा कर दी थी। वे अपनी सार्वजनिक घोषणा से विमुख नहीं हो सकते थे। यदि प्रतिगामी दल ने अपनी बात पर आग्रह किया होता तो राजाओं में इस प्रश्न पर दो दल हो जाते और राजाओं की यह फूट आगे चलकर स्वयं उनके स्वार्थों के लिये अहितकर सिद्ध होती। अतः उसने समझदारी और दूरदर्शिता से काम लिया और राजाओं के सम्मेलन ने समझौते के तौर पर जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, उसमें उन राज्यों को जो विधान परिषद में अविलम्ब सहयोग देना चाहते हैं, यह स्वतन्त्रता दे दी है कि वे उपयुक्त समय पर ऐसा कर सकते हैं। इससे स्पष्ट है कि उपयुक्त समय का निर्णय राजा लोग स्वयं ही करेंगे। अवश्य ही प्रस्ताव में यह शर्त भी रखी गई है कि विधान-परिषद द्वारा समझौता समितियों के समझौते को स्वीकार कर लेने के बाद ही इन राज्यों को विधान-परिषद में शामिल होना चाहिये। उस समझौते को विधान-परिषद की स्वीकृति निश्चित रूप से प्राप्त हो जायेगी और उसकी प्रतीक्षा में देशी राज्यों को, जो विधान-परिषद में शामिल होने को तैयार हैं, प्रतिनिधियों के चुनाव की आवश्यक कार्रवा स्थगित नहीं रखना चाहिये। इससे यही अच्छा था कि यदि राजाओं के सम्मेलन ने देशी राज्यों को विधान-परिषद में सहयोग देने के बारे में निश्चित

नेतृत्व दिया होता। विधान-परिषद की उपसमितियाँ मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों, कबायली और निष्कासित प्रदेशों आदि के बारे में विचार कर रही हैं। देशी राज्यों के प्रतिनिधि इन प्रश्नों के निबटारे में उचित योग दे सकते हैं, जो देशी राज्य विधान-परिषद में अविलम्ब आने का निर्णय न करेंगे, वे विधान के आवश्यक अंगों को निर्धारित करने का अवसर अपने हाथ से खो देंगे और उनका ऐसा करना रियासती जनता की घोषित इच्छा के विपरित होगा। जो रियासतें विधान-परिषद में शामिल हो रही हैं, उनके निश्चय की हम सराहना करते हैं। राजाओं के सम्मेलन के बाद उनकी काम करने की स्वतन्त्रता सुरक्षित हो गई है। यह बड़े ही हर्ष का विषय है कि बड़ौदा, जयपुर, पटियाला, बीकानेर तथा दक्षिण की रियासतों ने विधान-परिषद की आगामी बैठक में सम्मिलित होने की सूचना विधान परिषद को दे दी है। इससे स्पष्ट है कि उक्त रियासतों के जन प्रतिनिधि भी विधान-परिषद में सम्मिलित होंगे।

ता० ६ अप्रेल को पटियाला नरेश ने वक्तव्य देते हुए कहा कि "नरेशों की "ठहरो और परिणाम को देखो" नीति जो उन्होंने विधान-परिषद के सम्बन्ध में इख्तयार की है, वह बहुत ही हानिप्रद है और साथ ही इस अनुपस्थिति से वे उन लोभों से भी वंचित रह जायेंगे जो आरम्भ से सम्मिलित होने पर उन्हें प्राप्त हो सकते हैं। मैं उन नरेशों में से हूँ जो भारतीय स्वतन्त्रता की ओर की जानेवाली प्रगति में सबसे अधिक विश्वास करता हूँ। मुझे इस बात का गर्व है कि हम भारत के भावी विधान-निर्माताओं के साथ सहयोग करके भारतीय स्वतन्त्रता के प्रश्न को हल करने में साझीदार बने। हमारा यह कर्तव्य है कि गद्दी-तकियों पर बैठने के बजाय अपने और उससे भी ज्यादा देश के लाभ के लिये हम विधान-परिषद में बैठकर देश के भावी-विधान-निर्माण में अपने देश-प्रेमी व्यक्तियों को दिल खोलकर साथ दें।"

विधान-परिषद ने रियासतों के कमसे कम ३ प्रतिनिधियों को विधान-परिषद की समितियों की सदस्यता के लिये निश्चित रूप से लेने के लिये तै कर लिया था। बड़ौदा के दीवान सर बृजेन्द्र लाल मित्तर ने विधान-परिषद की संघ-अधिकार-समिति का सदस्य होना स्वीकार भी कर लिया। जब २ अन्य सदस्यों को संघ-अधिकार-समिति एवं परामर्श-दात्री-समिति में लेने के बारे में विधान परिषद के अध्यक्ष ने नवाब भोपाल, नरेन्द्र मण्डल के चासलर को लिखा तो उन्होंने इन नियुक्तियों के लिये इन्कार कर दिया। उन्होंने विधान-परिषद के अध्यक्ष को लिखा है कि जब तक वे नरेन्द्र मण्डल की स्थायी समिति के प्रस्ताव की मुख्य बातों को स्वीकार नहीं कर लेते, तबतक वे प्रतिनिधि भेजने को तैयार नहीं। नवाब भोपाल की मुख्य शर्तें ये हैं—

१—नरेन्द्र मण्डल की स्थायी समिति के प्रस्ताव का कुछ मुख्य बातों की गारन्टी।

२—रियासतों के उत्तराधिकारियों के अधिकार की रक्षा।

३—विधान-परिषद में भाग लेने का अर्थ रियासतों द्वारा विधान-परिषद के सभी निर्णयों को मान्य करना न होगा।

इस प्रश्न पर नेहरुजी व नरेन्द्र मण्डल के चांसलर में पत्र व्यवहार चल रहा है। नरेन्द्र मण्डल की रियासत-समझौता-समिति और विधान परिषद की रियासत-समझौता-समिति की सयुक्त बैठक में, इसके पूर्व ही, इस बात पर समझौता होगया था कि विधान-परिषद में रियासतों के लिये ९३ स्थानों में विभिन्न रियासतों को कितने-कितने स्थान दिये जायँ तथा उनके प्रतिनिधि किस प्रकार चुने जायँ। विधान-परिषद की समझौता समिति ने कहा था कि रियासतों सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय करते समय रियासतों के प्रतिनिधियों के विचारों पर ध्यान दिया जायेगा। विधान-परिषद में सम्मिलित होने के पहिले इन प्रश्नों को अलग कर देना न्यायोचित नही होगा।

विधान-परिषद की समझौता-समिति ने नरेन्द्र-मण्डल की समझौता

समिति से हुई बातचीत के सम्बन्ध में रिपोर्ट तैयार करली है जो २८ अप्रैल वाले विधान-परिषद के अधिवेशन में पेश की जायगी! नेहरु जी का कहना है कि विधान-परिषद में इस रिपोर्ट पर बहस न की जाकर परिषद की समझौता-समिति को नरेन्द्र-मण्डल की समझौता-समिति से समझौता करने की स्वतंत्रता दी जाय।

१३ अप्रेल को विधान-परिषद के अध्यक्ष डा० राजेन्द्र प्रसाद ने बम्बई के व्यापारी परिषद में भाषण देते हुए कहा कि—

"हमारे सामने पहिली चीज विधान-परिषद है। हम चाहते हैं कि इस देश के सब वर्गों के लोग इस संस्था में विश्वास रखें जिसे स्वतंत्र हिन्दुस्तान का विधान बनाने का काम सौंपा गया है। यह निश्चित है कि देश के विभाजन से कोई भी समस्या हल नहीं होगी।"

इसी दिन जालियाँ वाला बाग-दिवस के उपलक्ष में नई दिल्ली में भाषण देते हुए नेहरु जी ने कहा कि—

"एटली साहब के बयान से एक फायदा अवश्य हुआ। वह यह कि जो इन मामलों को महसूस नहीं करते थे उनकी भी इस तारीखी ऐलान से आँखें खुल गईं। इसका खास असर राजाओं पर पड़ा। उन्होंने करवट ली, और सोचा कि चर्चा तो इन चीजों की पहिले भी सुनी थी, मगर यह मालूम नहीं था कि अंग्रेज इतनी जल्दी यहाँ से चले जायेंगे। उन्होंने कमेटियाँ बनाईं और एक का दूसरे से और दूसरे का तीसरे से मशिवरा होने लगा। अगर इन बुजुर्गों को मशिवरा ही करना था तो अपनी प्रजा के नुमाइन्दों से करना था। ६ करोड़ आदमी उनकी रियासतों में बसते हैं, मगर फिर भी उनके सामने वे मामले आये जो आज तक नहीं आये थे।"

१५ अप्रेल को भाषण करते हुए सरदार वल्लभ भाई पटेल ने बड़ौदा में कहा कि—"अब वह समय आगया है जब कि शासक व शासित अपनी अपनी स्थिति को भलीभाँति समझ लें। अभी भी कुछ राजा सर्वोच्च सत्ता के साथ अपने प्रत्यक्ष सम्बन्धों व सम्राट के

साथ की गई पवित्र संधियों की बातचीत कर रहे हैं। अब तो ईश्वर की, जो राजाओं का भी राजा है यह इच्छा है कि भारत की जनता जून १६४८ तक स्वतंत्र हो जाय। राजाओं को कांग्रेस से भयभीत होने की आवश्यकता नही है। क्योंकि उसने कभी भी उनकी वंश परम्परा या शासन को खत्म करना नहीं चाहा है। इसके अलावा विभिन्न रियासतों के प्रजा-मण्डल, यदि उन्हें सत्ता सौंप भी दी जाय, तो भी अविलम्ब शासन प्रबन्ध अपने हाथ में नहीं ले सकते। स्वतत्र भारत में भारतीय नरेशों का भविष्य महान होगा, वे विदेशों में भारत के राजदूत बनकर तथा भारतीय सशस्त्र सेना में भाग लेकर देश की भारी सेवा कर सकते हैं।"

टेहरी राज्य ने शिमला की अन्य ३० रियासतों के साथ विधान-परिषद में सम्मिलित होना तै कर लिया है। इसके साथ ही ये समस्त रियासतें अपने अपने राज्यों में जनतन्त्रीय सरकार भी स्थापित करना चाहते हैं।

१६ अप्रेल को दिनखेल, कुम्बरखेल, और जरवाखेल के अफ्रीदी कबीले वाले मलिकों का एक जिरगा सीमाप्रान्त के प्रधान मंत्री डाक्टर खाँ साहब से मिला। जिरगा ने खाँ साहब से कहा कि हम सहर्ष विधान-परिषद से मिलेंगे और जिस तरह एक स्वतंत्र राष्ट्र दूसरे स्वतंत्र राष्ट्र से बातचीत करता है, उसी तरह समानता के आधार पर हम भी विधान-परिषद की समिति से बातचीत करेंगे। जिरगा ने यह भी कहा कि "हम आप पर (खाँ साहब) पर पूरा भरोसा करते हैं और हमारी बातचीत के वक्त आपको भी शामिल रहना चाहिये, ताकि हमें आपकी सलाह मिलती रहे।"

जिरगा में निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे—

दिनखल से—मिरासखान, कमरगूल, इस्लामगूल, शरमास्टर, गुलादाद, खसताबखान, इजातगुल।

कुम्बरखेल से—गुलामखान, इयानखान, कुरोजखान, आजमखान, बाबादरखान, मदवासखान।

जमाखेल से—जवासखान, अफजलखान, हसनखान, मरबदशाह, अशरफखानें और सुलेमानशाह।

१६ अप्रेल को विधान-परिषद की मूल अधिकार-उपसमिति ने (Fundamental Rights sub-commitee) अपना बिल तैयार कर लिया है। उस बिल मे उप-समिति ने यह सिफारिशें की हैं कि छुआ-छूत का अन्त किया जाय और उसे जुर्म समझा जाय। न्याय की दृष्टि में किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जाय। प्रत्येक छोटे बालक को १४ वर्ष की आयु तक निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा दी जाय तथा २१ वर्ष और उससे अधिक आयु वाले प्रत्येक व्यक्ति को मतप्रकाशन का अधिकार प्राप्त हो, जिससे वयस्क मतदान प्रथा अपनाई जा सके। उप-समिति के सबसे अधिक महत्वपूर्ण निष्कर्ष धार्मिक स्वतन्त्रता, भाषण तथा समाचारपत्रों की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में हैं। यह भी गुन्जायश रखी गई है कि राष्ट्र के हितार्थ समय पड़ने पर किन अंशों तक उनकी स्वतन्त्रता पर नियंत्रण किया जाय।

विधान-परिषद की संघ अधिकार-समिति ने परीक्षात्मक रूप में विदेशी मामलों, रक्षा तथा यातायात के सम्बन्ध में तथा इन विषयों के प्रबन्ध के लिये संघ को आवश्यक धन प्राप्त करने के अधिकार दिये जाने के सम्बन्ध में कुछ निष्कर्ष तैयार किये हैं। उक्त तीनों विषयों के अन्तर्गत आनेवाले मामलात की एक सूची भी समिति ने तैयार कर ली है। इस सूची पर जो बहस हुई उसमें रियासती प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया।

१७ अप्रेल को भाषण करते हुए सरदार वल्लभ भाई पटेल ने सूरत में राजाओं के सम्बन्ध में कहा कि—

"एक ओर राजा "ठहरो और देखो" की नीति से काम ले रहे

हैं। वे यह जानना चाहते हैं कि सत्ता किसको दी जाती है। वे इधर यह कहते हैं कि उनकी रियासतों की जनता अभी शासनाधिकार संभालने के लायक नहीं हैं। वे अभी सम्राट से सीधे सम्बन्ध रखने की बातें करते हैं। लेकिन सम्राट की सरकार ने स्वयं ही घोषित कर दियाँ है कि सार्वभौमता तो समाप्त हो जायेगी। हम राजाओं को समाप्त नहीं करना चाहते लेकिन हम यह चाहते हैं कि वे अपनी प्रजा को उत्तरदायी शासन दे दें। यदि वे ऐसा तुरन्त न करें तो निकट भविष्य में सही। जब अंग्रेज १५ मास में ही भारतवर्ष को सत्ता सौंपने के लिये तैयार हैं तब राजा यह नहीं कह सकते कि लोग उत्तरदायी शासन लेने के लिये तैयार नहीं हैं। अतः राजाओं को चाहिये कि वे विधान-परिषद में तुरन्त अपने निर्वाचित प्रतिनिधि भेज दें।"

१—सर बृजेन्द्रलाल मित्तर (बड़ौदा) २—दरबार गोपालदास देसाई (बड़ौदा) ३—श्री पी० गोविन्द मेनन (कोचीन) ४—सर टी० विजय राघवाचार्य (उदयपुर) ५—सर वी० टी०, कृष्णमाचारियर (जयपुर) ६—पण्डित हीरालाल शास्त्री (जयपुर) ७—श्री सी० एस० वैंकटाचार्य (जोधपुर) ८—श्री जयनारायण व्यास (जोधपुर) ९—सरदार पानिकर (बीकानेर) १०—राजा शिव बहादुर सिंह (रीवाँ) ११—लाला यादवेन्द्र सिंह (रीवाँ) १२—सरदार ज्ञानसिंह (पटियाला) १३—सरदार यादव सिंह (पटियाला) ।

पहिले दिन की कार्रवाई का प्रारम्भ करते हुए डा० राजेन्द्रप्रसाद, अध्यक्ष विधान परिषद ने तीन सदस्यों—१—श्री राजा महेश्वर दयाल सेठ २—सर अजीजुल हक व ३—श्री मजूमदार (बड़ौदा) के निधन की चर्चा की । इसके बाद अध्यक्ष ने रियसती प्रतिनिधियों का स्वागत किया । उन्होंने बृटिश भारत की २० फरवरी की घोषणा की चर्चा करते हुए कहा—

"अब हमारे लिए यह आवश्यक हो गया है कि भारत को सत्ता हस्तान्तरित किये जाने के लिए हम जून १९४८ से बहुत पहिले अपना विधान तैयार कर लें । जिन सिद्धान्तों पर शासन विधान बनाया जाय उन्हें स्थिर करने के लिए विभिन्न समितियाँ नियुक्त कर दी जायँ । इन समितियों की रिपोर्ट जून जुलाई तक तैयार हो जाना चाहिये, जिससे परिषद सितम्बर या अक्टूबर तक विधान की रूपरेखा स्थिर कर सके ।"

इसके बाद रियासतों के विभिन्न प्रतिनिधियों ने परिषद् के अध्यक्ष डा० राजेन्द्र प्रसाद को उनके स्वागत के लिए धन्यवाद दिया । सर बृजेन्द्रलाल मित्तर ने कहा कि "रियासतें अलग अलग अस्तित्व रखने में विश्वास नहीं रखती हैं । इसलिए हम सबको देश के अलग अलग टुकड़ों की प्रतिभा और सामर्थ्य के अनुरूप ऐसा शासन विधान तैयार करना चाहिये जिसके द्वारा विकास स्वाभाविक एवं स्वास्थ्यकर हो ।"

बीकानेर के दीवान सर पानिकर ने कहा—"कि रियासतों के जो

प्रतिनिधि विधान सभा में आये हैं, वे २ करोड़ जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। और डेढ़ करोड़ रियासती जनता के प्रतिनिधित्व ने परिषद में शामिल होने की तैयारियाँ कर ली हैं। इसके सिवाय रियासती जनता की जो सख्या बचती है उसका उतना महत्व भी नहीं है। रियासतों के प्रतिनिधि विधान परिषद में शरीक हुए यही महत्वपूर्ण बात है। वार्ता समिति ने सामूहिक चेष्टा संभव बनाई इसके लिए उसकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी ही है।"

कोचीन के श्री गोविन्द मेनन ने कहा कि "रियासती जनता ने भी स्वतन्त्रता के युद्ध में भाग लिया है, इसलिये उनके दिमाग में किसी प्रकार के सन्देह की गुञ्जायश नहीं है।"

इसके बाद पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने रियासती वार्ता-समिति की रिपोर्ट के सम्बन्ध में प्रस्ताव पेश किया। प्रस्ताव में उक्त रिपोर्ट को भी दर्ज किया गया और देशी राज्यों के प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए यह आशा प्रकट की गई कि अन्य रियासतों के प्रतिनिधि भी शीघ्र ही विधान-परिषद में शामिल हो जायेंगे। अपने भाषण के दौरान में पण्डित नेहरू ने कहा कि--

"नवाब भोपाल ने विधान परिषद में शामिल होने से पूर्व कुछ आश्वासन और गारन्टियाँ दिये जाने के बाबत कहा है। किन्तु हम प्रत्येक भारतवासी को यह आश्वासन देना चाहते हैं कि हम उसके साथ अपने साथी जैसा बर्ताव करेंगे, परन्तु साथ ही हम उसे यह भी जता देना चाहते हैं कि भविष्य में सोने और चांदी के ताज का उतना महत्व नहीं रहेगा जितना स्वतंत्र भारत की नागरिकता का। हम लोग केवल इतना ही आश्वासन दे सकते हैं। जो लोग आगये हैं हम उनका स्वागत करते हैं, जो आयेंगे हम उनका स्वागत करेंगे। हम उनके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहते, जो नहीं आयेंगे। जो लोग आगये हैं और जो लोग नहीं आयेंगे उनके बीच में जो खाई दा हो गइ है वह बढ़ती जायगी। वे लोग दो मुख्तलिफ रास्तों पर

चलेंगे और यह बड़े दुर्भाग्य की बात होगी। मेरा तो यही विश्वास है कि इन दोनों में जल्दी ही मेल हो जायेगा। कुछ भी हो, किसी को भी मजबूर नहीं किया जायेगा। जैसा कि श्री गोविन्द मेनन ने कहा है—सभी रियासतों को इसमें सम्मिलित होने को इच्छुक रहना चाहिये। मैं इस मामले में किसी अधिकार के साथ ही यह बात कह रहा हूँ। इस रिपोर्ट पर सही की जरूरत नहीं है।"

डाक्टर काटजू ने उक्त प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"समय की गति समूचे भारत के लिए एक यूनियन केन्द्र को जन्म देगी। रियासतों की सुरक्षा, अखण्डता और अस्तित्व उनके प्रजा के प्रेम में है। यदि वे इन चीजों से वंचित हैं तो अधिकांश रियासते गायब हो जायेंगी और इसके लिए उनकी प्रजा और अवशिष्ट भारत को कोई दुख नहीं होगा।"

इसके बाद प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

श्री शोमनाथ लाहिड़ी। (एक मात्र कम्यूनिष्ट सदस्य) के प्रश्न पर डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि रियासतों की तरफ से इस समय १६ प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं उनमें से ११ निर्वाचित और ५ नामजद हैं। इस घोषणा पर हर्षध्वनि प्रकट की गई।

कार्य-संचालन समिति की एक सदस्या श्रीमती दुर्गाबाई के सुझाव पर भवन समिति में दो रियासती प्रतिनिधि लेना स्वीकृत हो गया। शेष दो स्थानों की पूर्ति बाद में होगी।

इसके उपरान्त यूनियन अधिकार समिति की रिपोर्ट सर गोपाल स्वामी अय्यर ने पेश की। उन्होंने बताया कि "रिपोर्ट पर विचार जुलाई में किया जायेगा क्योंकि जून महीना भारत के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण महीना है, इस माह में कई राजनीतिक निर्णय होने वाले हैं। उनके अनुसार रिपोर्ट में कई उलटफेर होना है। जो रिपोर्ट इस समय तैयार है, वह कैबिनेट मिशन की योजना के आधार पर तैयार की गई है। यदि भारत को दो या अधिक सार्वभौम राज्यों में बाँटा जायेगा तो केन्द्र को अधि-

कार देने के सम्बन्ध में कैबिनेट मिशन की योजना से स्वतंत्र रूप से काम करना होगा।"

इसके बाद एसेम्बली कल के लिए स्थगित हो गई। अध्यक्ष ने घोषणा करते हुए कहा कि अब कल से बैठक प्रातःकाल ८-३० से आरम्भ होकर १२-३० तक समाप्त होती रहेगी।

ता० २६ अप्रैल को विधान-परिषद में स्वतन्त्र भारत की नई रूप-रेखा की बुनियाद डालने वाली रिपोर्ट गृह सदस्य सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा पेश की गई। यहाँ यह रिपोर्ट संशोधित रूप में पूरी उद्धृत की जाती है—

मूलाधिकार समिति की रिपोर्ट

१—जहाँ प्रसङ्गवश अन्य अर्थ की आवश्यकता न हो वहाँ,

(१)—राज्य—शब्द में यूनियन और उसकी इकाइयों की धारा-सभाओं व सरकारों तथा यूनियन के प्रदेशों के अन्तर्गत नियुक्त समस्त स्थानीय व अन्य अधिकारियों या राजकीय संस्थाओं का समावेश होगा।

(२)—यूनियन—का अर्थ भारतीय संघ होगा।

(३)—यूनियन का नियम—शब्द में यूनियन धारासभा द्वारा बनाये गये तमाम कानूनों तथा उन सब वर्तमान कानूनों का समावेश होगा जोकि यूनियन या उसके किसी अन्य हिस्से में प्रचलित हों।

२—यूनियन के प्रदेशों की सीमा में प्रचलित वे सब वर्तमान कानून, आज्ञाएँ, रेग्यूलेशन. रीति रिवाज, प्रथाएँ जोकि विधान के इस भाग के अन्तर्गत गारन्टी किये गये अधिकारों के साथ मेल न खाती हों, उस हद तक मंसूख समझी जायेंगी जिस हद तक कि वे उसके प्रतिकूल न हों। यूनियन तथा उसकी कोई भी इकाई ऐसा कोई भी कानून नहीं बनायेगे जोकि इन अधिकारों का अपहरण करे या सङ्क्षिप्त करे।

३—प्रत्येक व्यक्ति जो कि यूनियन में पैदा हुआ है या यूनियन के नियमों के अनुसार उसका स्वाभाविक अंग बना लिया गया है और उसके कानूनों द्वारा शासित है, यूनियन का नागरिक समझा जायेगा। यूनियन की नागरिकता की उपलब्धि व समाप्ति के बारे में अन्य कानून बनाये जा सकते हैं।

नोट—इस धारा पर विधान-परिषद में पुनः विचार किया जायेगा।

४—(१)—राज्य, धर्म, नस्ल, जाति या लीक के आधार पर किसी भी नागरिक से भेदभाव नहीं किया जायेगा।

(२)—किसी भी नागरिक से—

क—व्यापारिक प्रतिष्ठानों में, जिनमें सार्वजनिक विश्राति गृह और होटल भी शामिल हैं, प्रवेश,

ख—पुलों, तालावों, सड़कों एवं पूर्णतः सार्वजनिक कोष से बने व संचालित आम जनता के प्रयोग के लिये समर्पित किये गये सार्वजनिक स्थानों के प्रयोग के बारे में जब तक धर्म, जाति, नस्ल या लिङ्ग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जावेगा, जब तक कि इनके बारे में स्त्रियों व बच्चों के लिये खास तौर से अलग व्यवस्था नहीं की गई हो। स्त्रियों व बच्चों के लिये पृथक व्यवस्था करने से इस धारा से कोई बाधा नही पड़ेगी।

५—क—सरकारी नौकरी के मामले में सब नागरिकों को समान अवसर प्राप्त होंगे।

ख—किसी भी नागरिक को यूनियन के भीतर केवल धर्म, जाति, नस्ल, लिङ्ग, वंश या जन्मस्थान के कारण सरकारी नौकरी के लिए अयोग्य करार नही दिया जायेगा, किन्तु राज्य को ऐसे किसी भी वर्ग के लिये, जिसे उसकी राय में सरकारी नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है, विशेष स्थान सुरक्षित करने का अधिकार होगा।

इस मसविदे की कोई भी चीज़ ऐसा कोई कानून बनाने से नहीं रोक सकेगी जिसमें यह कहा गया हो कि किसी धार्मिक या वर्ग विशेष की संस्था के प्रबन्धक या व्यवस्थापक अधिकारी अथवा उसकी व्यवस्थापक सभा के सदस्य उस विशिष्ट धर्म या वर्ग के ही सदस्य होने चाहिये।

६—अस्पृश्यता—समस्त रूपों में उठा दी जायेगी। तथा उसके आधार पर लागू की गई किसी भी प्रकार की सामाजिक अयोग्यता अपराध समझी जायेगी।

७—यूनियन कोई खिताब नहीं देगी।

यूनियन का कोई नागरिक किसी अन्य देश से कोई खिताब नहीं स्वीकार करेगा। राज्य के मातहत किसी लाभ या जिम्मेदारी के पद पर नियुक्त कोई भी व्यक्ति यूनियन सरकार की अनुमति लिये बिना किसी अन्य देश से कोई उपहार, पारिश्रमिक, पद या किसी प्रकार का खिताब स्वीकार नहीं करेगा।

८—सार्वजनिक व्यवस्था और नैतिकता की रक्षा करते हुए निम्न अधिकारों के उपयोग में प्रत्येक नागरिक को आजादी होगी बशर्ते कि यूनियन या उसके अन्तर्गत किसी प्रदेश की सरकार ऐसी संकट कालिक स्थिति की घोषणा न कर दे जिसे कि वह अपनी सुरक्षा के लिये खतरनाक समझती हो।

अ—प्रत्येक व्यक्ति को भाषण या विचार प्रकाशन का अधिकार।

ब—नागरिकों का शान्तिपूर्वक व बिना हथियारों के एकत्र होने का अधिकार।

स—नागरिकों का सङ्गठन व यूनियन बनाने का अधिकार।

द—प्रत्येक नागरिक का सारी यूनियन में आजादी से आने जाने का अधिकार।

इ—प्रत्येक नागरिक का यूनियन के किसी भी हिस्से में रहने और

बसने, सम्पत्ति प्राप्त करने, रखने और बेचने तथा कोई भी पेशा, व्यापार, धन्धा इख्तयार करने का अधिकार।

कानून बनाकर इस अधिकार पर ऐसी पाबन्दियाँ लगाई जा सकती हैं जो कि अल्पसंख्यक दल या कबीलों की रक्षा आदि सार्वजनिक हित की दृष्टि से आवश्यक हों।

९—किसी भी व्यक्ति को कानून की उचित कार्रवाई किये बगैर उसके जीवन या आजादी से वंचित नहीं किया जायेगा और न किसी व्यक्ति को यूनियन की सीमाओं के भीतर एक समान कानूनी बर्ताव से ही वंचित किया जायेगा।

१०—यूनियन के कानूनों के भीतर रहते हुए नागरिकों को परस्पर व्यापार, व्यवसाय की या एक प्रादेशिक इकाई से दूसरी प्रादेशिक इकाई में परस्पर सम्बन्ध की आजादी होगी।

कोई भी प्रादेशिक इकाई कानून बनाकर सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता व स्वास्थ्य की दृष्टि से या विशेष संकट काल में इस अधिकार पर पाबंदी लगा सकेगी।

इस धारा में कही गई कोई चीज़ किसी प्रादेशिक इकाई को किसी भी अन्य इकाई से आयातित माल पर भेदभाव किये बिना वही ड्यूटी लगाने से नहीं रोक सकती जोकि स्वयं उसके अपने तैयार किये गये माल पर लगाई जाती हो।

व्यापार या राजस्व आदि के किसी नियम के द्वारा किसी एक इकाई को दूसरी पर तरजीह नहीं दी जायेगी।

११—मनुष्यों का व्यापार, और बेगार अथवा इसी प्रकार की अन्य जबरन मजदूरी निषिद्ध समझी जायेगी। इस निषेध का भङ्ग अपराध समझा जायेगा।

इस धारा से राज्य द्वारा सरकारी कार्यों के लिये धर्म, जाति, नस्ल या वर्ग का भेद किये बिना अनिवार्य सेवा लागू किये जाने में कोई बाधा नहीं होगी।

नोट—इस धारा पर पुनः विचार किया जायेगा।

१२—चौदह वर्ष से कम उम्र का कोई बालक किसी कारखाने, खान या अन्य किसी कठोर श्रम वाली नौकरी में नहीं लगाया जायेगा।

१३—सभी व्यक्तियों को आन्तरिक विश्वासों की समान आजादी रहेगी, तथा सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य की रक्षा करते हुए तथा इस अध्याय की अन्य धाराओं का पालन करते हुए किसी भी धर्म के स्वाधीनतापूर्वक आचरण और प्रचार का समान अधिकार रहेगा।

स्पष्टीकरण—(१)—कृपाण का धारण या वहन करना सिख धर्म के पालन में समझा जायेगा।

(२)—उपरोक्त अधिकार में ऐसी आर्थिक, राजनीतिक या अन्य सांसारिक प्रवृत्तियाँ शामिल नहीं होंगी जो कि धर्म पालन के साथ सम्बद्ध हों।

(३)—इस धारा में जिस धर्माचरण की आजादी की गारंटी की गयी है उससे राज्य द्वारा सामाजिक कल्याण या सुधार के निमित्त बनाये गये कानून, बनाये जाने में कोई बाधा नहीं पड़ेगी।

१४—प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय या उसके किसी अंग को यह अधिकार होगा कि वह धर्म के मामले में अपने कार्यों का स्वयं संचालन कर सके, और आम कानून का पालन करते हुए चल या अचल सम्पत्ति रख सके तथा प्राप्त कर सके और उसका संचालन कर सके एवं धार्मिक या पुण्य कार्यों के लिए संस्थाएँ खोल व चला सके।

१५—किसी भी व्यक्ति को किसी चीज पर कर देने के लिए विवश नहीं किया जायेगा जिसकी आय का खास तौर से किसी विशिष्ट

धर्म या सम्प्रदाय की रक्षा व उन्नति के लिए विनियोग किया जाता हो।

१६—किसी भी व्यक्ति को, जो कि सार्वजनिक कोष से सञ्चालित या सहायता प्राप्त करने वाले किसी स्कूल में अध्ययन करता है, उस स्कूल में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने या स्कूल में तथा उससे सम्बद्ध पूजा गृह आदि में होने वाली धार्मिक पूजा में सम्मिलित होने के लिए बाधित नहीं किया जायेगा।

नोट—यह धारा परामर्श समिति को पुनः विचारार्थ भेजी गई।

१७—दबाव व अनुचित प्रभाव के कारण किया गया धर्म-परिवर्तन कानून द्वारा स्वीकृत नहीं किया जायेगा।

नोट—यह धारा परामर्श समिति को पुनः विचारार्थ भेजी गयी।

१८—(१)—प्रत्येक प्रादेशिक इकाई में अल्पसंख्यकों की भाषा, लिपि तथा संस्कृत की रक्षा की जायेगी और ऐसे कोई भी कानून एवं नियम, जिनसे कि इन अधिकारों पर आघात होता हो, नहीं प्रचलित किये जायेंगे।

(२)—धर्म, सम्प्रदाय अथवा भाषा, किसी भी आधार पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के साथ राजकीय शिक्षणालयों में प्रवेश के मामले में भेदभाव नहीं किया जायेगा और न उनपर किसी धर्म विशेष की शिक्षा ही जबरदस्ती लादी जायेगी।

नोट—यह उपधारा परामर्श समिति को पुनः विचारार्थ भेजी गई।

(३)—अ—धर्म, सम्प्रदाय अथवा भाषा, किसी भी आधार पर आश्रित प्रत्येक अल्पसंख्यक वर्ग की किसी भी प्रादेशिक इकाई में अपनी इच्छा के अनुसार शिक्षा-संस्थाएँ खोलने व चलाने की आजादी होगी।

ब—धर्म, सम्प्रदाय अथवा जाति किसी भी आधार पर

आश्रित किसी भी अल्पसंख्यक वर्ग के द्वारा संचालित किसी भी स्कूल के साथ सरकारी सहायता देने के मामले में भेदभाव नहीं किया जावेगा।

१६—किसी भी व्यक्ति या कारपोरेशन की कोई भी चल-अचल संपत्ति, जिसमें किसी व्यवसाय या उद्योग में लगी पूंजी भी शामिल है, सरकारी कार्य के लिए तब तक नहीं ली जायेगी, जब तक कि कानून द्वारा इस प्रकार ली या अधिकार में की जाने वाली सम्पत्ति के लिए मुआवजा देने की व्यवस्था न कर दी गई हो तथा यह स्पष्ट न कर दिया गया हो कि किन सिद्धान्तों पर व किस ढङ्ग से यह सम्पत्ति ली जायेगी।

२०– (१)—किसी भी व्यक्ति को तब तक जुर्म के लिए दण्ड नहीं दिया दिया जायेगा जब तक कि उसने किसी ऐसे कानून का भङ्ग नहीं किया हो जो कि उस जुर्म करने के समय प्रचलित हो, न किसी ऐसे व्यक्ति को कोई ऐसा दण्ड ही दिया जायेगा जो कि उस अपराध के करने के लिए कानून द्वारा निहित दंड से बड़ा हो।

(२)—किसी भी व्यक्ति पर एक ही अपराध के लिए एक से अधिक बार मुकदमा नहीं चलाया जायेगा, न किसी व्यक्ति को किसी फौजदारी के मुकदमे में स्वयं अपने विरुद्ध गवाह बनने के लिए विवश किया जावेगा।

२१—(१)—यूनियन तथा उसकी हरएक एकाई के सरकारी कानूनों, मिसलों (रिकार्डों) तथा अदालती कार्यवाहियों (प्रोसीडिंग्ज) को पूर्ण आदर व विश्वास के साथ स्वीकार किया जायेगा तथा इन कानूनों, रिकार्डों तथा कार्यवाहियों को किस ढङ्ग से तथा किन परिस्थितियों में साबित किया जायेगा तथा उनके परिणाम का निश्चय किया जायेगा, इसका प्रतिपादन यूनियन के कानून के अनुसार किया जायेगा।

(२)—किसी भी प्रादेशिक इकाई में दिये गये अन्तिम फैसलों पर यूनियन के कानूनों द्वारा लगाई गई शर्तों का ध्यान रखते हुए सारी यूनियन में अमल किया जाएगा।

२२—(१)—इस बात की गारंटी की जाती है कि किसी भी कानून को लागू कराने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को समुचित विधि के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीमकोर्ट) से अपील करने का अधिकार रहेगा।

(२)—इस सम्बन्ध में अन्य अदालतों को जो अधिकार दिये जायेंगे उन पर आघात किये बिना सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीमकोर्ट) को यह अधिकार होगा कि वह इस विधान में जारी किये गये अधिकार के अनुसार हैबियस कार्पस, मडेमस, निषेधाज्ञा, क्वीवारन्टो और सटीयोरेराई जारी कर सके।

(३)—इन प्रतीकारक कानूनी कार्यवाहियों के प्रयोग का अधिकार तब तक मुल्तवी नहीं किया जायेगा जब तक कि विद्रोह, बाह्य आक्रमण, या अन्य गम्भीर संकट काल में, सार्वजनिक सुरक्षा की दृष्टि से वैसा करना आवश्यक न हो।

२३—यूनियन की धारा सभा कानून बनाकर यह निश्चय कर सकती है कि विधान के इस अङ्ग से गारन्टी किये गये किसी अधिकार को सशस्त्र सेनाओं तथा सार्वजनिक व्यवस्था रक्षा के लिए नियुक्त लोगों (पुलिस आदि) के लिये किसी हद तक सीमित या मंसूख किया जाय ताकि वे पूरी तह अपने कर्तव्यों का पालन एवं अनुशासन की रक्षा कर सकें।

२४—यूनियन की धारा सभा ऐसे कानून बनायेगी जिनसे कि विधान के इस अंग में वर्णित उन चीजों पर, जिनके लिये ऐसे कानून की जरूरत है, अमल कराया जा सके, साथ ही वह इस अंग में अपराध घोषित किये गये ऐसे कार्यों के लिये दण्ड का ना

विधान करेगी जिनके लिये कि अभी तक कोई दण्ड व्यवस्था नहीं है"।

इस महत्वपूर्ण मूलाधिकार रिपोर्ट को पेश करते हुए सरदार पटेल ने कहा कि "रिपोर्ट में न्याय सम्बन्धी अधिकारों का विधान है। दूसरे अधिकारों के बारे में, जिसमें सामाजिक नीति के मार्ग दर्शक सिद्धान्तों का समावेश है, बाद में रिपोर्ट उपस्थित की जायेगी।"

रिपोर्ट के सम्बन्ध में बोलते हुए पण्डित हृदयनाथ कुंजरू ने कहा कि "मेरी सम्मति में मूलाधिकारों में राज्यों के आपसी व्यापार की स्वतन्त्रता शामिल करना वाञ्छनीय नहीं है। १० वीं धारा प्रान्तों के अधिकारों में हस्तक्षेप करती है। एक प्रादेशिक इकाई को दूसरे के माल पर कर लगाने की इजाजत कैसे दी जा सकती है? इसके विपरीत हम प्रादेशिक इकाई को यह तय करने का अधिकार देना चाहते हैं कि उसकी आबादी क्या हो? रिपोर्ट की तजवीज का अर्थ यह होगा कि एक प्रदेश से दूसरे में बहुत प्रवासी आयेंगे। इसके असर पर आसाम की घटनाओं को ध्यान में रखते हुए विचार करना चाहिये।"

बंगाल की परिगणित जाति के प्रतिनिधि श्री ठाकोर ने अनुरोध किया कि "मूलाधिकारों में जाति प्रथा को बिलकुल ही उठा देना चाहिये।" साम्यवादी सदस्य श्री सोमनाथ लाहिड़ी ने कहा कि "यह पुलिस के सिपाही के दृष्किोण से लिखी गई है। प्रत्येक अधिकार के साथ उसकी काट है जिससे सत्ताधारी दल अपने विरोधियों को स्वतन्त्रता से वञ्चित कर सके।"। श्री राज गोपालाचार्य के सुधार की चर्चा करते हुए श्री लहिड़ी ने कहा कि "सरदाल पटेल भाषण देने के बाद हमें गिरफ्तार करना चाहते हैं, राजाजी तो हमें भाषण से पूर्व ही गिरफ्तार कर लेंगे। अतः यह रिपोर्ट बनावटी है।"

उक्त रिपोर्ट पर विचार प्रकट करते हुए श्री सिधवा ने कहा कि "आर्थिक अधिकार, व्यक्तिगत अधिकार और राजनीतिक अधिकार उपसमिति की बाद की रिपोर्ट में आयेंगे।"

प्रो० एन० जी० रङ्गा ने कहा कि "रिपोर्ट एक मूल्यवान खरीता है। कांग्रेस को पुलिस के सिपाहियों का ऐसा कटु अनुभव है कि मूलाधिकार पुलिस को कम से कम अधिकार देने की दृष्टि से बनाये गये हैं लेकिन उनका उद्देश्य देश को नाज़ी या साम्यवादी ढंग की डिक्टेटर शाही से बचाना है।"

रिपोर्ट का उत्तर देते हुए सरदार पटेल ने कहा कि "रिपोर्ट योंही ऊटपटांग नहीं बना दी गई है। न तो यह कृत्रिम है और न अकृत्रिम। यह उन प्रमुख वकीलों की तैयार की है जिन्होंने सब देशों के मूलाधिकारों का अध्ययन किया है। उपसमिति में दो दल थे। एक दल इतने अधिकार शामिल करना चाहता था जितनों पर अदालत से अमल कराया जा सके। दूसरा दल इन अधिकारों को बहुत ही आवश्यक बातों तक ही सीमित रखना चाहता था। इस रिपोर्ट में इन दोनों के बीच के विचार हैं। तीसरा दल जो पुलिस और कानून रखना ही नहीं चाहता था, उपसमिति में था ही नही। रिपोर्ट को सदस्यों के हाथों में गये १० घण्टे ही हुए हैं इतने से समय में ही इस पर १५८ सशोधन आ चुके हैं। यही इस बात का सूचक है कि सदस्य बहुत ही अध्ययनशील हैं। परिषद इन सशोधनों पर अब विचार कर सकती है।"

इस प्रकार अलग-अलग धाराओं पर विचार आरम्भ हुआ।

परिभाषाओं वाली पहली धारा को साधारण से संशोधन के बाद अलग लिया गया। दूसरी धारा के लिए श्री सन्तानम् ने एक संशोधन पेश किया। दूसरी धारा में कहा गया है कि जो कानून बुनियादी अधिकारों के खिलाफ जायेंगे उन्हें रद्द समझा जायेगा। श्री सन्तानम् ने संशोधन पेश किया कि इन कानूनों को शासन विधान में संशोधन के द्वारा ही रद्द किया या घटाया बढ़ाया जा सकेगा।

नागरिकता वाली तीसरी धारा पर खूब मनोरंजक वाद-विवाद छिड़ा। परिभाषा के अनुसार "जो व्यक्ति भारतीय यूनियन में पैदा हुआ होगा या यूनियन के विधान के अनुरूप और उसके अन्तर्गत रहकर बस गया

होगा, यूनियन का नागरिक माना जायगा।"—सरदार पटेल ने सुझाया कि कुछ पेश किये गये संशोधनों की रक्षा करने के लिए परिभाषा में ये शब्द और जोड़ दिये जायँ—"यूनियन की नागरिकता सम्बन्धी अतिरिक्त व्यवस्था यूनियन के कानूनों द्वारा की जा सकती है।"

श्री पी० दास ने कहा कि "यह परिभाषा बहुत ही व्यापक है और इसके अनुसार विदेशियों के भारत में उत्पन्न हुए बालक स्वतः ही भारत के नागरिक मान लिए जायेंगे।"

अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि "श्री पी० दास द्वारा उठाये गये एतराज पर विचार करना चाहिये।"

सर अल्लादि कृष्णास्वामी ने उक्त धारा की विशद व्याख्या करते हुए कहा कि—"नागरिकता का आधार जन्म या रक्त होता है। एंग्लो अमेरिकन विभावना है कि नागरिकता जन्म के ऊपर निर्भर है। जबकि यूरोपियन विभावना है कि उसे रक्त के ऊपर अवस्थित किया जाय। उपसमिति ने एंग्लो अमेरिकन विभावना को ही तरजीह दी है। उन्होंने कहा कि किसी नागरिक के नागरिक अधिकार प्राप्त करने का मतलब यह नहीं कि उसे राजनीतिक अधिकार भी प्राप्त हैं।"

इस पर खूब ही वाद-विवाद हुआ। अन्त में सरदार पटेल ने कहा कि—"जब साम्राज्य और ससार के अन्य भागों की नस्ल भेद सम्बन्धी नीति के विरुद्ध हम संघर्ष कर रहे हैं तो हमें नस्ल भेद सम्बन्धी नीति को प्रश्रय नहीं देना चाहिये।" उन्होंने हँसी के मध्य पूछा कि "भारतीय नागरिकता को प्राप्त करने के लिए यहाँ कितने आदमी बच्चों को जन्म देने आयेगे। हम लोगों को आकस्मिक जन्म के द्वारा आकस्मिक नागरिकता से भयभीत नही होना चाहिये। यदि बाद में पता चले कि इस परिभाषा का दुरुपयोग किया जा रहा है तो उसमें परिवर्तन भी किया जा सकता है।"

श्री राजगोपालाचार्य ने कहा कि "हम लोग एकतन्त्रीय नागरिकता को जन्म दे रहे हैं।"

डाक्टर काटजू ने परिभाषा के साथ सहमति प्रकट करते हुए कहा कि "भारतीय माता-पिताओं से विदेश में उत्पन्न हुए बच्चों को भारतीय नागरिक समझा जाये, यह बात परिभाषा में और जोड़ देनी चाहिये।"

सरदार पटेल ने कहा कि "नागरिकता सम्बन्धी अतिरिक्त व्यवस्था करने के अधिकार हाथ में रखने का अर्थ ही इस प्रकार के मामलों की व्यवस्था रखी जायेगी।"

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि "मुझे परिभाषा से पूर्ण सन्तोष नहीं है परन्तु यह स्वयं भवन के तय करने की बात है। इस विषय पर विवाद स्थगित किया जाये अथवा इस परिभाषा को स्वीकार किया जाये।"

इसके बाद भवन ने पण्डित नेहरू के इस सुझाव को स्वीकार कर लिया कि अध्यक्ष द्वारा प्रमुख कानून विशारदों की एक उपसमिति बनाई जाय जो उक्त परिभाषा की जांच करे।

इसके बाद भवन ने समानता के अधिकार वाली धारा पर विचार आरम्भ किया। सरदार पटेल ने कहा कि 'यह भेद भाव को मिटाने वाला कानून अन्य देशों में प्रचलित कानून के आधार पर बनाया गया है। चूंकि भारत में अस्पृश्यता सम्बन्धी एक विशेष समस्या मौजूद है इसलिये इस विशेष अवस्था का सामना करने के लिये कुछ खास व्यवस्था की गई है।"

इस पर श्री सोमनाथ लाहिडी ने एक संशोधन पेश किया जिसमें कहा गया कि राज्य अपनी प्रजा में जिन जिन बातों को लेकर भेद नहीं करेगा उनमें राजनीतिक कार्य प्रणाली की बात भी जोड़ देनी चाहिये।

सरदार पटेल ने इसका उत्तर देते हुए कहा कि "भेदभाव न करने वाली धारा आम शकल में होनी चाहिये। राजनैतिक कार्य प्रणाली ऐसी भी हो सकती है जिसके विरुद्ध न केवल भेदभाव ही करना आव-

श्यक है बल्कि जिसका दमन तक आवश्यक हो सकता है" (करतल ध्वनि)

इस पर श्री लाहिडी का संशोधन रद्द हो गया। किसी ने भी उसके पक्ष में मत नहीं दिये।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी ने सुझाव पेश करते हुए कहा कि वेशभूषा के आधार पर किसी वर्ग के साथ भेदभाव न किया जावे। अनेक यूरोपीयन भोजनालयों में भारतीय पोशाक पहिने लोगों को आज भी नहीं घुसने दिया जाता है।"

इसके उत्तर में सरदार पटेल ने कहा कि "कुछ लोग अभी तक दासत्व की मनोवृत्ति के शिकार हैं। और उससे अभी तक पीछा नही छुड़ा सके हैं। श्रीचौधरी जिन असुविधाओ की चर्चा कर रहे हैं वे अब गायब हो चुकी हैं। हाँ, यदि कोई नगा होकर घुसना चाहे तो उसे घुसने नहीं दिया जायेगा (हँसी)। अब वह जमाना आ गया है जब लोग जैसी चाहें पोशाक पहन कर जहाँ, चाहें जा सकते हैं।"

इस धारा पर उक्त और करीब १२ दूसरे संशोधन रद्द हो गये। इसके बाद भवन ने सामानता अधिकारों वाली धारा नं० ४ को मय उप कलमों अ और आ के पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया। इसके बाद ६ ठी धारा को जिसका सम्बन्ध अस्पृश्यता से है, पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया। धारा न० ५ पर विचार दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दिया गया।

३० अप्रैल की बैठक में सर्वप्रथम धारा नं० ५ पर वाद-विवाद आरम्भ हुआ। यह धारा सरकारी नौकरियों में समानता के अधिकारों के सम्बन्ध में है। इस धारा के पूर्व श्री बी० दास ने पूछा कि "क्या भारतवर्ष में जो अफगान शरणार्थी हैं उनके बालकों को भी इस धारा के अधिकार मिलेंगे।" श्री त्यागी ने पूछा कि "क्या प्रान्त निवास के आधार पर नौकरी देने पर पाबन्दी लगा सकेंगे। श्री सूरजमल ने पूछा कि क्या बिक्री कानून के अधिकार कायम रखे जायेंगे। सरदार पटेल ने

उत्तर देते हुए कहा कि "धारा में योग्यता का विधान है। यह किसी प्रान्त को नौकरी के मामले में कोई पाबन्दी लगाने से नहीं रोकता। श्री सूरजमल ने जो प्रश्न उठाया है वह अगली धाराओं के अन्तर्गत आ जाता है।

आगे चलकर पदवियों या खिताब न दी जाने वाली धारा का उत्तर देते हुए सरदार पटेल ने कहा कि मूलाधिकार समिति ने वंशानुगत पदवियों पर रोक लगा दी है। चूंकि इससे सार्वजनिक जीवन भ्रष्ट होता है इसलिए लोकमत उनके विरुद्ध है।

८ वीं धारा पर भी काफी विवाद हुआ। इसके बाद वह संशोधित रूप में पेश होकर स्वीकृत हुई। संशोधित धारा पिछले पृष्ठों पर उद्धृत की गई है। इस धारा पर श्री सोमनाथ लाहिड़ी ने सुझाव पेश करते हुए कहा कि "जिस विशेष अवस्था में नागरिक स्वतंत्रता को सीमिति किया जाय उसका सीधा सम्बन्ध यूनियन की रक्षा के प्रश्न से हो, न कि जब उसकी सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित हो।" श्री निकोलस राय और श्री जयपाल सिंह ने कबाइली इलाकों की ओर से बोलते हुए यह मांग पेश की कि इन इलाकों को यह आश्वासन दिया जाय कि उनकी रक्षा के लिए इस समय जो व्यवस्था मौजूद है उसमें किसी भी प्रकार का अन्तर नहीं पड़ेगा।" श्री जयपालसिंह ने यह भी कहा कि "कबाइली लोगों के लिए भूमि का प्रश्न जीवन-मरण है।"

पण्डित नेहरू ने इस विवाद में भाग लेते हुए कहा कि "मूलाधिकारों का सम्बन्ध स्थायी मामलों से है, न कि अस्थायी मामलों से। उन्होंने श्री निकोलस राय और श्री जयपाल सिंह के विचारों के साथ सहमति प्रकट की और उन्हें आश्वासन दिया कि कबाइली लोगों के साथ भारत की पूरी सहानुभूति है।

सरदार पटेल ने श्री लाहिड़ी के संशोधन का विरोध करते हुए कहा कि "श्री लाहिड़ी आन्तरिक व्यवस्था नहीं चाहते हैं। कबाइलियों

की ओर से बोलने वाले सदस्य इन इलाकों को हमेशा ही पिछड़े हुई देखना चाहते हैं।

श्री लाहिड़ी का संशोधन गिर गया और श्री मुंशी द्वारा संशोधित धारा अपना ली गई। यह धारा पीछे उद्धृत की जा चुकी है।

इसके बाद सरदार पटेल ने धारा नं० ६ पेश की। यह धारा कानूनी कार्रवाई के बगैर किसी को जीवन या स्वतंत्रता से वंचित न कर सकने के सम्बन्ध में है।

इस अवसर पर मूलाधिकार सम्बन्धी विचार स्थगित कर दिया गया। और व्यापारिक व्यवस्था समिति की रिपोर्ट श्री के० एम० मुंशी द्वारा पेश की गई। श्री मुंशी ने कहा कि "सीमिति व्यापार सम्बन्धी व्यवस्था को अन्तिम रूप देने में हमेशा ही असमर्थ रही है, क्योंकि राजनीतिक मामलों पर जो निश्चय होने वाला है उसका प्रभाव विधान परिषद के कार्य पर भी पड़ेगा। समिति ने यह सिफारिश भी की है कि दो समितियों की नियुक्ति की जाये जिनमें से एक यूनियन के शासन विधान के मुख्य सिद्धान्तों के विषय मे अपनी रिपोर्ट पेश करे और दूसरी एक आदर्श और अस्थायी शासन विधान के सिद्धान्तों के संबंध में रिपोर्ट दे। शासन विधान की रचना इस प्रकार होनी चाहिये कि भारत का कोई भी भाग उसे अपना सके और यदि कोई भाग फिलहाल अलग रहना भी चाहे तो बाद को परिवार में पुनः आकर मिल सके। उन्होंने सुझाया कि परिषद के अध्यक्ष १५ सदस्यों की एक समिति बनावें जो परिषद के अगामी अधिवेशन तक यूनियन के शासन विधान के ऊपर अपनी रिपोर्ट पेश करे और २५ सदस्यों की दूसरी समिति बनावें जो अस्थायी और आदर्श शासन विधान पर अपनी रिपोर्ट पेश करे।

कुर्ग के श्री पूनाचा ने सुझाया कि तीन सदस्यों की एक उपसमिति चीफ कमिश्नर के प्रान्तों के मामले पर विचार करे। इसके बाद डा०

पट्टाभि ने आशा प्रकट की कि समितियाँ प्रान्तों के पुनर्संठन के प्रश्न पर भी विचार करेंगी।

विधान परिषद के अध्यक्ष ने कहा कि समितियाँ श्री पूनाचा और डाक्टर पट्टाभि के सुझावों पर विचार करेंगी।

श्री मुंशी का प्रस्ताव पास हो गया और समिति को व्यापारिक सम्बन्धी अन्तिम रिपोर्ट बाद को पेश करने की अनुमति मिली।

१ मई को विधान परिषद की बैठक में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शिक्षात्मक अधिकारों पर चर्चा हुई। मनुष्य की बिक्री और बेगार पर रोक लगाने सम्बन्धी धारा पर बड़ी गहरी बहस हुई।

यह कहा गया कि इससे अनिवार्य फौजी भरती में बाधा पड़ेगी। अन्त में डाक्टर अम्बेडकर की इस धारा को प्रमुख वकीलों की एक उपसमिति के सिपुर्द करने की तजबीज मान ली गई।

परिषद ने १० वीं धारा श्री मुशी के संशोधन के साथ स्वीकार कर ली। इस धारा में संघ प्रदेशों के बीच व्यापार व आवागमन की स्वतन्त्रता का जिक्र है। यह धारा भी सशोधित रूप में स्वीकृत हो गई जो पहिले उद्धृत की जा चुकी है।

राज्य द्वारा सहायता प्राप्त स्कूलों में धार्मिक शिक्षा से सम्बन्ध रखने वाली १६ वीं धारा पर विचार नहीं किया गया। उसे सरदार पटेल के सुझाव पर उपसमिति के पास वापस भेज दिया गया। उपसमिति की सही के बाद उस धारा का निम्नलिखित रूप इस प्रकार हो गया—

"धोखा देकर, डरा धमकाकर या अनुचित दबाव द्वारा १८ वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति का एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तन कानून द्वारा नहीं माना जायेगा।"

श्री फ्रेक एन्थोनी ने कहा कि "१८ वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति के धर्म परिवर्तन पर प्रतिबन्ध लगाने का अर्थ यह होगा कि ईसाई धर्म का प्रचार करने के अधिकार द्वारा जो सुविधा प्राप्त हुई है, उससे धर्म

वंचित हो जायेगा। बालक स्वभावतः ही अपने माता-पिता के धर्म के अनुयायी होते हैं। परन्तु वयस्क होने पर उस बालक को अधिकार रहेगा कि वह अपने जीवित माता-पिता के धर्म का अनुयायी रहे अथवा पुराने धर्म का अवलम्बन करे।

दलित जातियों की ओर से बोलते हुए श्री ठाकुर ने कहा कि "धर्म-परिवर्तन उनकी जाति में सबसे अधिक होते हैं। धर्म-परिवर्तन करनेवालों को जो प्रलोभन दिये जाते हैं, उन्हें अनुचित दबाव समझा जाय।" श्री निकोलस राय ने कहा कि—"स्वयं मैंने १५ वर्ष की उम्र में धर्म परिवर्तन किया था। ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित करने के मामले में १८ वर्ष की बंदिश लगाना उचित नहीं।"

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन ने कहा कि "यद्यपि अधिकांश कांग्रेसी धर्म प्रचार का अधिकार दिये जाने के विरुद्ध हैं तथापि वे राजी हो गये हैं, जिससे ईसाई और अन्य धर्ममतावलम्बी उनके साथ रहें। परन्तु इस विषय पर अनेक सदस्यों के भिन्न मत हैं। बच्चों की धर्म-परिवर्तन से रक्षा की जानी चाहिये। यदि माता पिता धर्म-परिवर्तन करना चाहते हों तो बच्चों के लिये अभिभावकों की व्यवस्था करना कठिन नहीं रहेगा।"

श्री धीरेनदत्त ने सुझाया कि इस धारा को उपसमिति के सिपुर्द करना चाहिये।

रेवरेण्ड डी० सौजा का भाषण इस सम्बन्ध में बहुत ही गम्भीर एवं प्रभावशाली रहा। उन्होंने कहा कि "उक्त धारा के द्वारा जो समस्या उठ खड़ी होगी, वह केवल अल्प-संख्यक समस्या मात्र नहीं है। उसमें कानूनी पेचदगियाँ भी भरी हुई हैं। धर्म सम्बन्धी १३ वीं धारा जिस ढंग से पास की गई है, उससे अल्प-संख्यक जातियों को इतना अधिक आश्वासन मिला है कि उन्हें अब और भी अधिक संरक्षणों की मांग नहीं करना चाहिये। परन्तु साथ ही पारिवारिक अधिकार के सिद्धांत के सम्बन्ध में श्री एन्थोनी ने जो कुछ कहा है वह

भी काम की बात है।" उन्होंने अपने पहिले के वक्ता के इस कथन के साथ सहमति प्रकट की कि अध्यक्ष महोदय ने अन्य दो विवादग्रस्त धाराओं पर विचार करने के लिये प्रसिद्ध कानून विशारदों की जो समिति बनाई है, वह इस मामले पर भी ध्यान पूर्वक विचार करे।

श्री अलगूराय शास्त्री और श्री जगतनारायण लाल ने श्री मुन्शी के संशोधन का समर्थन किया। श्री जगतनारायण लाल ने कहा कि संसार के अन्य किसी भी देश के आधुनिक शासन विधान ने धर्म प्रचार सम्बन्धी अधिकार को स्वीकार नहीं किया है। इसलिये जब हमने अल्पसंख्यकों के प्रति अपनी सद्इच्छा का परिचय दे दिया है तो उन्हें भी श्री मुशी के संशोधन से सहमत हो जाना चाहिये।

डा० अम्बेडकर ने एक विद्वत्तापूर्ण वक्तृता के सिलसिले में बताया कि "श्री मुंशी के संशोधन को स्वीकार करने में क्या कठिनाइयाँ हैं। इस मामले पर मूलाधिकार समिति और अल्पसंख्यक उपसमिति ध्यानपूर्वक विचार कर रही हैं, पर उन्हें इस समस्या का कोई हल नहीं मिला। धारा में यह व्यवस्था अवश्य ही रहना चाहिये कि नाबालिग बच्चों को उनके अभिभावकों की रजामन्दी के बगैर दूसरे धर्म में परिवर्तित न किया जाय।"

सरदार पटेल ने बहस का उत्तर देते हुए कहा कि,, सामूहिक धर्म-परिवर्तन के, डरा धमका कर और दबाव डालकर धर्म परिवर्तन कराने के तथा अनाथ और नाबालिग बच्चों के धर्म परिवर्तन के उदाहरण मौजूद हैं। हम लोगों ने इस समस्या का हल पाने की तीन बार चेष्टा की, पर ऐसा हल न पा सके जो सबको स्वीकार्य होता।

अन्त में इस धारा को भी परामर्श-दायिनी-समित के पास भेजे जाने के बाबत प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुआ।

इसके बाद परिषद ने सांस्कृतिक और शिक्षण सम्बन्धी अधिकारों से सम्बन्ध रखने वाली धारा पर विचार किया। विचारोपरान्त पहिली

और तीसरी उपधाराएँ स्वीकृत कर ली गईं और उपधारा नं २ परामर्श दायिनी समिति के पास विचारार्थ भेज दी गई।

२ मई को पुनः मूलाधिकारों पर बहस आरम्भ हुई। नागरिकता सम्बन्धी परिभाषा को सरदार पटेल ने फिर हाउस के सामने पेश किया, किन्तु श्री के० सन्तानम् ने बताया कि इसमें एक त्रुटि यह रह गई है कि जो लोग ऐसी रियासतों में पैदा हुए हों जो यूनियन मे शामिल नहीं हुई होंगी, परन्तु जो स्थायी रूप से ब्रिटिश भारत में रहते आये हों, उनकी नागरिकता की कोई व्यवस्था नहीं की गई है।

इस परिषद की एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि डाक्टर अम्बेडकर विधान-परिषद के प्रत्येक कार्य में विशेष दिलचस्पी दिखा रहे और बड़ी लगन से कार्य कर रहे हैं। वे एक बैच से दूसरी बैच पर बारबार जाते देखे गये। वे परिषद के प्रधान व्यक्तियों में गिने जाते हैं।

आज परिषद ने वादविवाद के उपरान्त १६ से लेकर २४ धाराएँ पास की। इस प्रकार समस्त मूलाधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार होकर वह स्वीकृत की गई। उसकी कुछ धाराएँ परामर्श-दायिनी-समिति के सिपुर्द विचारार्थ की गई हैं।

श्री० के० एम० मुन्शी ने नागरिकता की परिभाषा और बेगार और सैनिक अनिवार्य भर्ती सम्बन्धी धाराओं के सम्बन्ध में प्रमुख कानून विशारदों की रिपोर्ट की। नागरिकता की परिभाषा वाली धारा को एंग्लो अमेरिकन कानून के आधार पर बनाया गया है। परिभाषा इस प्रकार है –

"हर ऐसा व्यक्ति, जो यूनियन में उत्पन्न हुआ हो और उसके कानूनों के मातहत हो, हर ऐसा व्यक्ति जिसके जन्म के समय उसके माता-पिता यूनियन के नागरिक रहे हों और हर ऐसा व्यक्ति जो यूनियन मे ही बस गया हो, यूनियन का नागरिक कहलायेगा। यूनियन की नागरिकता प्राप्त करने या उसका अन्त करने के सम्बन्ध में अतिरिक्त व्यवस्था यूनियन के कानून द्वारा की जायेगी।"

सरदार पटेल ने प्रस्ताव किया कि "परिभाषा को अपना लिया जावे।

श्री० सन्तानम् ने सुझाया कि "परिभाषा में एक त्रुटि रह गई है कि इसमें उन लोगों की नागरिकता की व्यवस्था नहीं है जो भारत के नागरिक नहीं हैं। इस प्रकार की व्यवस्था आवश्यक है, क्योंकि कुछ ऐसे लोग भी हो सकते हैं जो उन रियासतों में पैदा हुए हों जो यूनियन में शामिल नहीं होंगे और जो ब्रिटिश भारत में स्थायी रूप से रहते हों। यदि उनके लिये कोई व्यवस्था न की जायेगी तो वे यूनियन की नागरिकता से वंचित हो जायेंगे।"

सरदार पटेल ने बताया कि "इस बात को उठाने का यह अवसर नहीं है।"

श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, सर अल्लादी कृष्णामाचारी और डा० अम्बेडकर ने इस मुद्दे के महत्व को समझाया और अन्त में यह तै हुआ कि परिभाषा को पुर्नविचार के लिये परामर्श-दायिनी-समिति के पास वापस भेज देना चाहिये। इसी प्रकार बेगार और सैनिक अनिवार्य भरती सम्बन्धी धारा भी श्री मुन्शी के सुझाव पर परामर्श-दायिनी-समिति के पास भेज दी गई।

२ मई को विधान-परिषद की कार्यवाही देखने के लिये महाराज पटियाला दर्शकों की गैलरी में पूरे समय तक बैठे रहे।

परिषद को स्थगित करने से पूर्व डा० राजेन्द्रप्रसाद ने विधान को अन्ततः हिन्दुस्तानी में स्वीकार करने की आवश्यकता पर जोर दिया और कहा कि वे इस कार्य के लिये योग्य व्यक्ति नियुक्त करेंगे। इसके बाद अधिवेशन स्थगित हो गया।

ता० ४ मई को विधान-परिषद के अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने विधान के सिद्धांत निर्धारित करने के लिये १ संघीय समिति और २ प्रांतीय विधान समिति के निर्माण की घोषणा की—

संघीय-विधान-समिति

१—पंडित जवाहरलाल नेहरू
२—मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद
३—पण्डित गोविंद वल्लभपन्त
४—श्री जगजीवन राम
५—डा० अम्बेडकर
६—सर अल्लादी कृष्ण स्वामी अय्यर
७—श्री कन्हैयालाल मुंशी
८—प्रो० के० टी० शाह
९—डा० श्यामा प्रसाद मुकर्जी
१०—सर० वी० टी० कृष्णामाचारी
११—सरदार के० एम० पान्निकर
१२—सर एन० गोपाल स्वामी अयंगर
१३—श्री गोविन्द मेनन

प्रांतीय-विधान-समिति

१—सरदार वल्लभभाई पटेल
२—डा० सुब्रायन
३—डा० पट्टाभि सीतारमैया
४—श्री० वी० जी० खेर
५—श्री बृजलाल बियानी
६—डा० कैलाश नाथ काटजू
७—श्री हरेकृष्ण मेहताब
८—श्री किरण शंकर राव
९—श्री फूलन प्रसाद वर्मा
१०—श्री रोहिनी कुमार चौधरी
११—श्री जयरामदास दौलतराम

१२—श्री सरदार उज्ज्वल सिंह
१३—श्री दीवान चमनलाल
१४—श्री सत्यनारायण सिंह
१५—श्री पूचाना
१६—डा० पी० के० सेन
१७—श्री राधावल्लभ रथ
१८—श्री रफी अहमद किदवई
१९—श्रीमती हंसा मेहता
२०—श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर
२१—डा० एच० सी० मुकर्जी
२२—श्री आचार्य कृपलानी
२३—श्री शंकर राव देव
२४—श्री दिवाकर
२५—श्री नागप्पा

ये दोनों समितियाँ क्रमशः संघ व प्रान्तों के विधानों के मस्विदे तैयार करेंगी।

इस अधिवेशन पर एक दृष्टि

विधान परिषद की यह बैठक एक काफी लम्बे अरसे के बाद हुई। जब पिछली बैठक स्थगित हुई थी तो यह आशा की गई थी कि अगले अधिवेशन में मुस्लिम लीगी प्रतिनिधियों के लिए भी भाग लेना संभव होगा किन्तु मुस्लिम लीग ने अपनी जिद नहीं छोड़ी और इस बात की कोई आशा नहीं रह गई कि लीग मंत्रि मिशन की योजना के आधार पर देश के दूसरे दलों के साथ विधान बनाने के कार्य में सहयोग देने को प्रस्तुत होगी। मुस्लिम लीग अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग ही पकाने पर तुली है। विधान परिषद ने अब तक लीग के सहयोग की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए फूंक फूंक कर कदम उठाया है।

किन्तु अब इन्तजार की सीमा खत्म हो चुकी है। विधान निर्णय का कार्य तो वैसे ही जरूरी था, पर सरकार की फरवरी २० फरवरी की घोषणा ने उसे और भी जरूरी बना दिया। अब यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि विधान जल्दी से जल्दी बनकर तैयार हो जाय, ताकि वह मशीनरी खड़ी की जा सके जो समय पर बृटिश हाथों से सत्ता ग्रहण कर सके। परिषद के अध्यक्ष डा० राजेन्द्र प्रसाद ने आगामी अक्टूबर तक की अवधि सूचित की है और यह आशा करनी चाहिये कि विधान-परिषद और उसकी विभिन्न समितियाँ अपना कार्य इस अवधि तक समाप्त कर लेंगी। जब कि मुस्लिम लीग विधान परिषद में शरीक नहीं हो रही है तो विधान-परिषद के लिए मंत्रिमिशन की योजना के अनुसार तीन विभागों में विभाजित होना जरूरी नहीं रह गया है। विधान परिषद जो विधान बनायेगी वह देश के उन्हीं भागों पर लागू होगा जो उसे स्वीकार करने को रजामन्द होंगे। यह हो सकता है कि देश के कुछ हिस्से उस विधान को स्वीकार न करें। ऐसे हिस्से कितने होंगे और उनकी सीमाएँ क्या होंगी यह तो उन चर्चाओं के परिणाम स्वरूप तय होगा जो पिछले दिनों हुई हैं या अगले एक दो महीने में होंगी। किन्तु जिन लोगों पर विधान बनाने की जिम्मेवारी है वे अपने दायित्व को समझते हैं और वे ऐसा ही विधान बना सकते हैं जो उसकी सीमा में आने वाले सभी वर्गों के लिए समाधान कारक होगा।

विधान परिषद का यह अधिवेशन संक्षिप्त रहा। किन्तु इसमें कुछ देशी राज्यों के प्रतिनिधियों का शामिल होना महत्वपूर्ण है। यह खेद का विषय है कि काफी समय मिल जाने पर भी सभी देशी राज्यों के प्रतिनिधि इस अधिवेशन में शामिल नहीं हुए हैं। कुछ राजा अभी भी हिचकिचा रहे हैं और शामिल होने के पूर्व विधान-परिषद से कुछ बातों के बारे में आश्वासन प्राप्त करना चाहते हैं। ये ऐसी बाते हैं जिनके बारे में देशी राज्यों के प्रतिनिधि विधान परिषद में शामिल

होकर चर्चा कर सकते हैं। किन्तु कतिपय नरेशों ने अन्यथा पक्ष ग्रहण किया है। वे यह भूल जाते हैं कि राजवंशों की रक्षा, देशी राज्यों की आन्तरिक स्वतंत्रता और भौगोलिक सीमाओं की रक्षा विधान परिषद् के ब्रिटिश भारतीय हिस्से द्वारा दिये गये आश्वासनों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि रियासतों की जनता की सद्भावना पर निर्भर करती है। जो राजा देशी राज्यों को विधान परिषद से अलग रख रहे हैं, वे न केवल रियासती जनता की बल्कि ब्रिटिश भारत के लोगों की सहानुभूति भी खो रहे हैं। इसके विपरीत जिन राज्यों ने विधान-परिषद में शामिल होने का निश्चय किया है और इस अधिवेशन में अपने प्रतिनिधि भेजे हैं, उन्होंने अपनी देशभक्ति का सक्रिय परिचय दिया है। और भारत की एकता व अखण्डता सिद्ध करने की दिशा में महत्वपूर्ण योग दिया है। इस प्रकार पहिला बार राजाओं और रियासती जनता के वास्तविक प्रतिनिधि एक महान कार्य में शेष भारत के साथ हिस्सा ले रहे हैं। उनका यह कार्य साहसपूर्ण अथच प्रशंसनीय है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि विधान-परिषद का यह अधिवेशन तीन महीने बाद हुआ। अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद और परिषद के प्रमुख प्रवक्ता पण्डित जवाहरलाल नेहरू और संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत करने वाले सर गोपाल स्वामी अयंगर सभी के भाषणों में यह ध्वनि थी, मानो देश विभाजन एक निश्चित तथ्य हो गया है और इस तरह कार्य करना चाहिये कि हर हालत में उसे जमाया जा सके। रियासती प्रतिनिधियों की उपस्थिति इस सम्मेलन की एक महत्व-पूर्ण घटना रही, लेकिन लीग का रुख ज्यों का त्यों ही है। साथ ही यह भी कहा जा रहा है कि या तो लाहौर में या कराची में पकिस्तानी विधान परिषद की स्थापना होने वाली है। तथा अन्तरिय सरकार भी विभक्त होकर हिन्दुस्तान की अलग तथा पाकिस्तान की अलग हो जायेगी। ये दोनों अन्तरिय सरकारें फिलहाल एक ही गवर्नर जनरल के अधिपत्य में कार्य करेंगी। इन सब बातों से यह स्पष्ट है कि देश

का विभाजन होगा। विभक्त भारत रक्षा व्यवस्था की दृष्टि से स्वयं अपने लिए नहीं वरन् ब्रिटिश हित की दृष्टि से भी अवाञ्छनीय ही होगा। लेकिन आयरलैण्ड के अलस्टर की तरह पाकिस्तान भी अगर ब्रिटिश का पुछल्ला बनकर रहना स्वीकार कर ले तो भारत से जाकर भी ब्रिटेन भारत में अपनी ताकत बनाये रह सकता है और उस हालत में संयुक्त भारत के बजाय वह विभक्त भारत पसन्द करे अस्वाभाविक नहीं। यही बात उन राज्यों के बारे में भी मानी जा सकती है जो अपनी शक्ति के बजाय अंग्रेजों या पाकिस्तान के बलपर भारतीय संघ से स्वतंत्र रहने की इच्छा रखते हैं जहाँ ऐसे विभीषण विद्यमान हों वहाँ इस तरह की सभावनाएँ बराबर रहेंगी, इसीलिए विधान-परिषद का ऐसी संभावनाओं को सामने रखकर काम करने का निश्चय अनुचित नहीं कहा जा सकता।

जहाँ तक हमारे देश का सवाल है, मौलिक अधिकारों का प्रश्न सबसे पहिले श्री स्वर्गीय चक्रवर्ती विजय राघवाचार्य ने पंजाब की अमृतसर कांग्रेस १६१६, में उठाया था। जब दूसरे साल नागपुर में वह स्वय कांग्रेस अधिवेशन के सभापति बने तो इस प्रश्न को और महत्व मिला। दस साल बाद कराची कांग्रेस में मौलिक अधिकारों का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और अगस्त १६३१ में बम्बई में कांग्रेस महासमिति ने विचारपूर्ण संशोधन परिवर्तन द्वारा उसे व्यवस्थित रूप दिया। फलतः हमारे सामने स्पष्ट रूप में वह खाका आया जो अपनी स्वतंत्र हस्ती में हमें आवश्यक है।

"भारत के प्रत्येक नागरिक को प्रत्येक विषय में जो कि कानून और सदाचार के विरुद्ध न हो अपनी स्वतंत्र राय प्रकट करने, स्वतंत्र सस्थायें और संघ बनाने तथा बिना हथियार के और शान्ति पूर्वक एकत्र होने का अधिकार है।"—यह बताते हुए कांग्रेस द्वारा स्वीकृत मौलिक अधिकारों में घोषित किये गये प्रत्येक नागरिक को धार्मिक विश्वास एवं आचरण की स्वतत्रता है। अल्प-संख्यक जातियों की संस्कृति,

उपयोग की भाषा और लिपि की रक्षा की जायेगी, सब नागरिक कानूनी की दृष्टि से समान हैं, सरकारी नौकरियों और सार्वजनिक वस्तुओं में किसी के साथ भेद नहीं किया जायेगा, कानूनी आधार के बिना न किसी कि स्वतंत्रता का अपहरण किया जायेगा, न घर जायदाद में प्रवेश, या कुर्की या जब्ती की जायेगी, धार्मिक तटस्थता, बालिग मताधिकार, भ्रमण स्वातंत्र्य, दासत्व हीनता आदि का सब नागरिक उपभोग करेंगे।

अब जब देश का स्वप्न पूरा हो रहा है, और वास्तविक रूप में विधान निर्माण हो रहा है, नई परिस्थिति एवं वास्तविकताओं को सामने रखकर, उपर्युक्त मौलिक अधिकारों को हम नये रूप में पाये तो आश्चर्य नहीं होना चाहिये। यह बताने की जरूरत नही कि पहिले केवल कांग्रेसियों का दिमाग ही इस काम में लगा था और एक तरह से अस्वाभाविक परिस्थिति में ही यह काम हुआ था। इसके विरुद्ध इस बार मुस्लिम लीग को छोड़कर देश के सभी वर्ग इस कार्य में साझीदार हैं और बृटेन से सत्ता प्राप्ति के बाद इसी के अनुसार काम चलाने का खयाल परिस्थिति में वास्तविकता ला रहा है। सरदार पटेल द्वारा मौलिक अधिकारों का जो मसौदा पेश किया गया यह वही नहीं है जो कांग्रेस स्वीकार कर चुकी है। जहाँ तक वर्तमान मसौदे का सम्बन्ध है, ऊँचे दर्जे के कानूनज्ञों और विधान-शास्त्रियों का उसमें हाथ है। फिर भी परिषद में हुई बहसों से स्पष्ट है कि अभी उसे और ठोस और परिपूर्ण बनाया जायेगा। हमें आशा है कि बहस और संशोधनों की कसौटी पर कसा जाकर वह ऐसे श्रेष्ठ और ठोस रूप में निर्मित होगा कि विभिन्न देशों में स्वीकृत मौलिक अधिकारों की सभी अच्छाइयों का उसमें समावेश हो जायेगा और बुराइयाँ निकल जायेंगी।

जो खाका अभी हमारे सामने है वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। भारतीय संघ की नागरिकता की व्यवस्था बहुत ही उदार रखी गई है। समानता की स्पष्ट गारन्टी है, अस्पृश्यता को उसके स्पष्ट रूप में खत्म का उसमें ऐलान है, उपाधियों के प्रलोभनों से बचने का उसमें स्पष्ट

संकेत है। जनता की शक्ति और नैतिकता को दृष्टि में रखते हुए "स्वतंत्र विचरण, संगठन व्यवसाय, धर्म पालन, भाषा, लिपि, सस्कृति आदि की स्वतंत्रता है, अल्प संख्यकों की हित रक्षा की गारन्टी है। बालिग मताधिकार है और १८ वर्ष से अल्पायु बालकों से कारखानों में काम न लेने का स्पष्ट विधान है। कौन सा मौलिक अधिकार किस रूप में व्यक्त होना चाहिये यह निर्णय करना विधान शास्त्रियों का काम है। जैसी इस रिपोर्ट पर गम्भीर बहस हुई है, इसी से पता चलता है कि कोई भी खामी अब इसमे नही रहेगी। यह प्रसन्नता की बात है कि रियासती प्रतिनिधि भी इस बहस में सम्मिलित हुए थे। इसका यही अर्थ है कि जो भी मौलिक अधिकार निश्चित हुए या होंगे वे भारतीय संघ की अंगरूप रियासतों में भी उसी रूप में व्यवहृत होंगे। रियासती प्रजा और बृटिश भारतीय प्रजा के बीच खड़ी कृत्रिम दीवारें इस प्रकार अनायास ही टूट गई हैं, यह कम महत्वपूर्ण नहीं है। विभाजन की पुकार के बीच भी इस प्रकार भारत एक हो रहा है, यह हमें भूलना न चाहिये।

परिशिष्ट

[१]

ब्रिटिश मंत्रि-मिशन एवं वायसराय की १६ मई की घोषणा—

"वक्तव्य में स्मरण कराया गया है कि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने प्रतिनिधि मण्डल को भारत द्वारा जितना शीघ्र और पूर्ण रूप से सम्भव हो सके उतना शीघ्र और पूर्ण रूप से स्वाधीनता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करने के ऐतिहासिक कार्य के लिये भेजा था। अतः प्रतिनिधि-मण्डल और वायसराय ने भारतीय राजनैतिक दलों के भारत की अखण्डता अथवा बँटवारे के आधारभूत प्रश्न पर किसी समझौते पर पहुँचने में सहायता प्रदान करने के लिये भरसक अधिक से अधिक प्रयत्न किये। इन प्रयत्नों का परिणाम हुआ शिमला सम्मेलन, जिसमें दोनों ही दल किसी समझौते पर पहुँचने के लिये अधिक से अधिक रियायत करने को तैयार थे किन्तु अन्त में किसी समझौते पर पहुँचना असम्भव सिद्ध हुआ। इसलिये अब प्रतिनिधि मण्डल ने इस बात का तात्कालिक प्रबन्ध करने का निश्चय कर लिया है, जिससे भारतीय भारत के भावी विधान का निर्णय कर सकें और तुरन्त ही एक अंतः-कालीन सरकार की स्थापना हो सके।

"प्रतिनिधि-मण्डल का कथन है कि उसने निकट से तथा तट-स्थतापूर्वक भारत के विभाजन की सम्भावना पर विचार किया है, क्योंकि वह मुसलमानों की इस वास्तविक तथा उत्कट चिन्ता से बहुत ही प्रभावित था कि कहीं मुसलमानों को निरन्तर हिन्दू मत की आधीनता

में न रहना पड़े। मण्डल का विचार है कि यदि भारत में आन्तरिक शांति रहती है तो वह ऐसे ही उपायों द्वारा सुरक्षित रह सकेगी जिनसे कि मुसलमानों को यह आश्वासन मिल सके कि उनकी संस्कृति, धर्म और आर्थिक व्यवस्था तथा अन्य बातों पर प्रभाव डालने वाले विषयों पर उनका नियन्त्रण रहेगा। मण्डल ने एक तरफ से तो पाकिस्तान के ऐसे पृथक सत्ता सम्पन्न राज्य के सम्बन्ध मे विचार किया है जिसमें मुस्लिमलीग ने छः प्रान्त रखने का दावा किया है और सीमाओं के संशोधन की बात स्वीकार की गई है और दूसरी तरफ मण्डल ने उस वैकल्पिक प्रस्ताव पर विचार किया है जिसमें अपेक्षाकृत लघु सत्ता-सम्पन्न पाकिस्तान की स्थापना की बात थी और जो केवल मुस्लिम बहुमत वाले प्रदेशो को मिलाकर ही बनाया जाना था।"

"इनमें से पहिले विकल्प की स्वीकृति की सिफारिश करने में मण्डल असमर्थ है, क्योंकि ऐसे पृथक राज्यों मे उन बड़े बड़े गैरमुस्लिम तत्वों को शामिल करने का वह कोई औचित्य नही समझता जो उत्तर पश्चिमी क्षेत्र में ३७·६ प्रतिशत तथा उत्तर पूर्व क्षेत्र मे ४८·३ प्रतिशत होंगे। दूसरे विकल्प को वे अव्यवहारिक समझ कर अस्वीकार करते हैं क्योंकि उसमे पंजाब की समस्त अम्बाला और जालन्धर कमिश्नरियाँ, सिलहट जिले को छोड़कर समस्त आसाम प्रान्त तथा कलकत्ता सहित पश्चिमी बगाल के एक बड़े भाग को प्रस्तावित क्षेत्र से बाहर निकाल देना होगा। प्रतिनिधि मण्डल का यह विश्वास है कि पंजाब और बंगाल का विभाजन इन दो प्रान्तों के अत्यधिक निवासियों की इच्छा तथा हितों के विरुद्ध होगा और पंजाब के किसी भी विभाजन से सिख अवश्य ही विभाजित हो जायेंगे।

"सत्ता सम्पन्न एक पृथक पाकिस्तान की रचना के विरुद्ध आर्थिक, सैन्य और शासन सम्बन्धी जोरदार कारण भी हैं। इसलिये यह प्रतिनिधि मण्डल ब्रिटिश सरकार को यह राय देने में असमर्थ है कि भारत में सत्ता सम्पन्न दो बिलकुल पृथक राज्यों को सत्ता हस्तान्तरित

कर दी जाय। किन्तु इस निर्णय का यह अर्थ नही है कि उन्होंने मुसलमानो के वास्तविक भय पर पूर्ण रूप से विचार नही किया, कि उनकी संस्कृति तथा उनका राजनीतिक और सामाजिक जीवन एक ऐसे शुद्ध संयुक्त भारत में विलीन हो जायेगा, जिसमें हिन्दू अवश्य ही सर्वोपरिस्थिति में होंगे।"

"देशी राज्यो के सम्बन्ध मे प्रतिनिधि मण्डल का कहना है कि यह बिलकुल ही स्पष्ट है कि ब्रिटिश भारत द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने पर, चाहे वह ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल में रहे या इससे बाहर, देशी राज्यों और ब्रिटिश सम्राट के बीच जो अब तक सम्बन्ध रहे हैं, वे बाद में नहीं रह सकेंगे। ब्रिटिश सम्राट द्वारा सर्वोच्च सत्ता न तो अपने पास रखी जा सकती है और न नयी सरकार को हस्तान्तरित की जा सकती है। देशी राज्यों के प्रतिनिधियों ने इस प्रतिनिधि मण्डल को विश्वास दिलाया है कि भारत के नवीन उत्थान में सहयोग देने के लिये वे तैयार और इच्छुक हैं। विधान-निर्माण में देशी राज्य किस ढंग से सहयोग प्रदान करेंगे, यह निश्चय ही सोच विचार और बातचीत का विषय होगा।

"तदनुसार प्रतिनिधि-मण्डल की सिफारिश है कि नव विधान का आधारभूत स्वरूप इस प्रकार हो—

१—समस्त भारत का एक संघ होना चाहिये जिसमें ब्रिटिश भारत और देशी राज्य होंगे और यह निम्न विषयों का संचालन करेगा—परराष्ट्र विषय, रक्षा व्यवस्था, यातायात, और उसे उपर्युक्त विषयों के लिये धन प्राप्ति करने के आवश्यक अधिकार प्राप्त होने चाहिये।

२—सम्बद्ध भारत में एक शासन परिषद और एक व्यवस्थापक मण्डल हो, जिनकी रचना ब्रिटिश भारतीय और देशी राज्यों के प्रतिनिधियों को लेकर की जाय। जिस किसी प्रश्न को लेकर व्यवस्थापक मण्डल में कोई बड़ी साम्प्रदायिक समस्या उठ खड़ी

हो, उसके निर्णय के लिए उपस्थित प्रतिनिधियों का बहुमत और दोनों प्रमुख सम्प्रदायों में से प्रत्येक का मतदान और साथ ही उपस्थित और मत देने वाले समस्त सदस्यों के बहुमत प्रयोजनीय हैं।

३—संघ के विषयों को छोड़कर अन्य समस्त विषय और समस्त अवशिष्ट अधिकार प्रान्तों को प्राप्त होना चाहिये।

४—संघ को दिये गये विषयों और अधिकारों को छोड़कर, देशी राज्यों के पास शेष सारे विषय और अधिकार होंगे।

५—प्रान्तों को शासन परिषदों और व्यवस्थापक मण्डलों के साथ-साथ गुट बनाने की भी स्वतंत्रता होनी चाहिये और प्रत्येक गुट को उन प्रांतीय विषयों का निर्णय करना चाहिये, जिनपर सामान्य रूप से विचार करना हो।

६—संघ तथा गुटों के विधान में एक यह शर्त रखी जाय कि कोई भी प्रान्त अपनी व्यवस्थापिका सभा के बहुमत से प्रथम दस वर्षों के बाद तथा बाद में प्रत्येक दस वर्ष के पश्चात् इस विधान की व्यवस्था पर पुनर्विचार तथा परिवर्तन कराने का अधिकारी होगा।

"प्रतिनिधि-मण्डल का कहना है कि उपर्युक्त आधार पर बनने वाले नये विधान के विस्तार में जाने की उनकी मन्शा नहीं है। ऊपर बताई हुई सिफारिशें करना उन्होंने इसलिये आवश्यक समझा कि इस बातचीत के दौरान में उन्हें यह स्पष्ट होगया था कि वे जब तक ऐसा नहीं करेंगे विधान-निर्माण कार्य में भारत के दो प्रमुख सम्प्रदायों के सहयोग की आशा नहीं हो सकती।

"वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त पर चुनाव अत्यधिक सन्तोषप्रद होते परन्तु इसमें बहुत ही देर लगती। वयस्क मताधिकार का सब से अच्छा विकल्प हाल में चुनी गई प्रान्तीय असेम्बलियों को निर्वाचन का आधार बनना है। यह ठीक है कि ये व्यवस्थापक सभाएँ विभिन्न प्रान्तों की जनसंख्या अथवा उनके विविध अंगों को समुचित रूप से

प्रतिनिधित्व नहीं करतीं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये प्रतिनिधि मण्डल ने निश्चय किया है कि सर्वोचित तथा सर्वाधिक व्यवहार्य योजना यह होगी—

क—मोटे तौर पर प्रत्येक प्रान्त को जनसख्या के आधार पर १० लाख पीछे एक सीट के अनुपात से सीटें दी जायें।

ख—प्रान्त के मुख्य सम्प्रदायों में इन निश्चित सीटों का बटवारा उनकी जन संख्या के अनुरूप हो।

ग—इस बात की व्यवस्था हो कि प्रान्तों में प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रतिनिधि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर प्रान्तीय एसेम्बली के उसी सम्प्रदाय के सदस्यों द्वारा चुने जायें।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वे केवल तीन प्रधान सम्प्रदायों—साधारण, मुसलिम तथा सिखो को ही स्वीकार करते हैं। छोटी छोटी अल्पसंख्यक जातियाँ साधारण सम्प्रदाय के साथ मत देंगी। किन्तु विशेष प्रतिनिधित्व का अधिकार न होने से चूंकि उनका प्रतिनिधित्व प्रायः नहीं के बराबर होगा, अतः विधान निर्मात्री परिषद को अल्प संख्यकों के विशेष हितों के सम्बन्ध में राय देने के लिये एक परामर्श समिति स्थापित करने की विशेष व्याख्या की गई है।"

"इस प्रकार चुने गये प्रान्तीय व्यवस्थापक मण्डलों के प्रतिनिधि भारतीय राज्यों के प्रतिनिधियों के साथ, यथासंभव शीघ्र नयी दिल्ली में एक संयुक्त अधिवेशन में सम्मिलित होंगे। अध्यक्ष के चुनाव तथा अन्य कार्य के लिये आरंभिक बैठक हो जाने के बाद, उपयुक्त प्रतिनिधि नीचे लिखे अनुसार तीन भागों में विभक्त हो जायेंगे।

भाग "ए"—मद्रास, बम्बई, सयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रान्त तथा उड़ीसा।

भाग "बी"—पजाब, उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त, सिंध।

भाग "सी"—बगाल और आसाम।

विधान-निर्मात्री-परिषद के ये तीनो भाग, अपने अपने गुट प्रान्तों के प्रान्तीय विधानों का निर्णय करेंगे और इन प्रश्नों का भी निर्णय करेंगे कि क्या "गुट" के लिए भी कोई विधान रहेगा और यदि रहेगा तो कौन-कौन से प्रान्तीय विषय उसके अन्तर्गत् रखे जायेंगे। नया संघ विधान लागू हो जाने पर, प्रान्तों को अपने नये व्यवस्थापक मण्डल के निर्णय से, गुटों से पृथक हो जाने की स्वतत्रता रहेगी। गुटों का विधान निश्चित हो जाने के बाद विधान-निर्मात्री परिषद के तीनों भाग, सघ का विधान निर्माण करने के लिए, भारतीय राज्य प्रतिनिधियों के साथ फिर सयुक्त अधिवेशन मे सम्मिलित होंगे।"

"सघीय विधान-निर्मात्री परिषद में किसी भी ऐसे प्रस्ताव के लिए जो उन सिफारिशों से विभिन्न हो, जो प्रतिनिधि मण्डल ने विधान के आधारभूत स्वरूप के सम्बन्ध में की है और किसी ऐसे प्रस्ताव के लिए जिसमे कोई बड़ा साम्प्रदायिक प्रश्न उठाया गया हो—दोनों ही प्रमुख सम्प्रदायों के उपस्थित प्रतिनिधियों के पृथक बहुमत की तथा सम्मिलित रूप से सब प्रतिनिधियों के बहुमत की आवश्यकता होगी।

"वायसराय तुरन्त ही प्रान्तीय व्यवस्थापक मण्डलों से अपने-अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने का आवेदन करेंगे।"

इसलिए हमारा प्रस्ताव है कि प्रत्येक प्रान्तीय धारा सभा निम्न-लिखित सख्या में प्रतिनिधि चुनेगी और धारा सभा का प्रत्येक भाग—साधारण, मुस्लिम तथा सिख—आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर अपना अपना प्रतिनिधि अलग चुनेगा।

गुट—"ए"

प्रान्त	साधारण	मुस्लिम	जोड
मद्रास	४५	४	४६
बम्बई	१६	२	२१
युक्तप्रान्त	४७	८	५५
बिहार	३१	५	३६

गुट—"ए"

मध्यप्रान्त	१६	१	१७
उड़ीसा	६	०	६
जोड़	१६७	२०	१८७

गुट "बी"

प्रान्त	साधारण	मुस्लिम	सिख	जोड़
पंजाब	८	१६	४	२८
सीमाप्रान्त	०	३	०	३
सिन्ध	१	३	०	४
जोड़	६	२२	४	३५

गुट "सी"

प्रान्त	साधारण	मुस्लिम	जोड़
बङ्गाल	२७	३३	६०
आसाम	७	३	१०
जोड़	३४	३६	७०

ब्रिटिश भारत का योग——————————२६२

देशी राज्यों का योग——————————९३

कुल योग——————————————३८५

नोट—चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिये कोष्टक "ए" में निम्नलिखित व्यक्ति भी शामिल किये जायेंगे—

१—केन्द्रिय एसेम्बली में दिल्ली तथा अजमेर—मेरवाड़ा का प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्य।

२—कुर्ग धारा सभा द्वारा चुना गया एक प्रतिनिधि।

कोष्टक "बी" में ब्रिटिश बलूचिस्तान का एक प्रतिनिधि और बढ़ाया जायेगा।"

[२]

ब्रिटिश मंत्रिमिशन और वायसराय द्वारा नरेन्द्र मण्डल के चांसलर को दिया गया, २२ मई १९४६ का स्मरणपत्र—MEMORANDUM

"ब्रिटिश प्रधान मंत्री ने लोक सभा में हाल ही में जो वक्तव्य दिया था उसके पहिले राजाओं को यह आश्वासन दिया गया था कि सम्राट का ऐसा कोई इरादा नही है कि राजाओं के सम्राट के साथ के सम्बन्धों और संधियों एवं इकरारनामों द्वारा प्राप्त उनके अधिकारों मे उनकी सहमति के बिना कोई परिवर्तन किया जाय। इस समय यह भी कहा गया था कि सधि चर्चा के फलस्वरूप जो परिवर्तन आवश्यक होंगे उनसे राजा लोग अकारण असहमत न होगे। नरेन्द्र मण्लल ने इसके बाद इसको पुष्ट किया कि देशी राज्य, भारत को पूर्ण दर्जा मिले— देश की इस आम इच्छा में शामिल हैं। ब्रिटिश सरकार ने अब घोषित किया है कि ब्रिटिशभारत की अब आगे आनेवाली सरकार अथवा सरकारें पूर्ण स्वाधीनता चाहे तो उनके मार्ग मे कोई रुकावट नही डाली जायेगी। इन घोषणाओं का नतीजा यह है कि भारत के भविष्य के बारे में दिलचस्पी रखने वाले सभी पक्ष भारत को ब्रिटिशराष्ट्र समूह के अन्तर्गत अथवा उसके बाहर स्वतंत्रता का पद प्राप्त हुआ देखना चाहते हैं। मंत्रि-मिशन उन कठिनाइयों को दूर करने में मदद देने आया है, जो भारत की इस इच्छा के पूरी होने के मार्ग मे खड़ी हैं।"

"अन्तःकालीन समय मे, जो नये विधान पर अमल होने के पहिले जिसके आधीन ब्रिटिश भारत स्वतंत्र अथवा पूर्ण स्वशासित होगा, ब्रिटेन की सार्वभौमसत्ता जारी रहेगी। किन्तु ब्रिटिश सरकार किसी भी हालत में उस सार्वभौम सत्ता को भारतीय सरकार को न सौंपेगी और न सौंप ही सकती है।"

"इस बीच में भारतीय रियासते हिन्दुस्तान के लिये एक नवीन वैधानिक ढाचा निर्माण करने मे एक महत्वपूर्ण भाग अदा कर सकती है और 'भारतीय रियासतों ने सम्राट की सरकार को सूचित भी किया है कि वे अपने एवं समस्त भारत के हितो को दृष्टि में रखते हुए इस ढाचे के निर्माण मे और उसके पूर्ण हो जाने के बाद उसमें उचित स्थान प्राप्त करने में अपना पूरा भाग अदा करना चाहती हैं। इस कार्य को आसान बनाने के लिये वे अपनी शासन व्यवस्था बहुत ऊँचे दर्जे की बनाकर निस्सदेह अपनी स्थिति को मजबूत करेगी। जहाँ किसी वर्तमान रियासत के साधन इतने छोटे हैं कि उस दर्जे तक उसे नही पहुँचाया जा सकता तो वे निस्संदेह शासन व्यवस्था की दृष्टि से आपस में या बड़ी रियासतों से मिल जाने की ऐसी उचित व्यवस्था कर लेगी कि जिससे प्रस्तावित ढाचे में समा सके। रियासतों की स्थिति और भी मजबूत हो जायेगी, यदि उनकी सरकारे जिन्होंने कि अर्से में अपने-अपने राज्यों में प्रतिनिधियों की सस्थाओं के द्वारा अपने से लोकमत की निकट सम्पर्कता स्थापित करले।"

"सक्रमणकाल में रियासतों के लिये यह आवश्यक होगा कि ऐसे मामलों सम्बन्धी भावी तौरतरीकों के बारे में जिनका सभी से एकसा सम्बन्ध हो, खासकर आर्थिक और राजस्व सम्बन्धी क्षेत्र में, ब्रिटिश भारत से समझौता करे। रियासतें भारत के नये वैधानिक ढाचे में शामिल होना चाहें या नहीं, इस तरह का समझौता आवश्यक होगा और इस विचार विनियम मे काफी समय लगेगा। और चूंकि नया विधान लागू होने तक सभवत: ऐसी कुछ वार्ताएँ अपूर्ण रहेंगी, शासन सम्बन्धी कठिनाइयों को बचाने के लिए रियासतों और उन लोगों के बीच कुछ समझौता हो जाना आवश्यक है जिनको बाद को बनने वाली सरकार या सरकारों का नियन्त्रण करने की संभावना है और जब तक नयी व्यवस्था पूरी न हो तक तक सम्मिलित मामलों सम्बन्धी प्रस्तुत व्यवस्था कायम रहनी

चाहिये। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश सरकार और सम्राट के प्रतिनिधि से जो मदद चाही जायेगी वे करेंगे।"

"जब ब्रिटिश भारत की स्वशासित अथवा स्वतन्त्र सरकार या सरकारों की व्यवस्था होगी तो ब्रिटिश सरकार का इन सरकारों पर इतना प्रभाव नहीं होगा कि ये सार्वभौम सत्ता के कर्तव्यों को निबाह सके। इसके साथ वे यह भी नहीं कह सकते कि इस कार्य के लिये भारत में ब्रिटिश सेना रहेगी। अतः देशी रियासतों की इच्छा के अनुसार ब्रिटिश सरकार सार्वभौम सत्ता के अधिकारों को छोड़ देगी। इसका अर्थ यह होगा कि ब्रिटिश राज्य के सम्पर्क में आने से जो अधिकार रियासतों को मिले उनका अन्त हो जायेगा और जो अधिकार रियासतों ने ब्रिटिश सरकार को दिये थे उनको वापस मिल जायेंगे। ब्रिटिश राज्य व ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों के बीच जो पारस्परिक राजनीतिक व्यवस्था रही है, वह समाप्त हो जायेगी। इस अभाव की पूर्ति के लिए देशी रियासतों को ब्रिटिश भारत की भावी सरकार या सरकारों से समझौता करके संघ में प्रवेश करना होगा और यदि वह नहीं हो सकेगा तो उनके साथ राजनीतिक सम्पर्क पैदा करने होंगे।"

[३]

मंत्रि मंडल मिशन और वायसराय का २५ मई का वक्तव्य—

"मंत्रि-मण्डल मिशन ने मुस्लिमलीग-अध्यक्ष के २२ मई के वक्तव्य और कांग्रेस कार्य-समिति के २४ मई के प्रस्ताव पर ध्यान से विचार किया है।"

"स्थिति यह है कि चूंकि भारतीय नेता एक लम्बे विचार विनिमय के बाद भी किसी आपसी समझौते पर नहीं पहुँच सके थे, इसलिये

मिशन ने दोनों प्रमुख राजनीतिक दलों के दृष्टिकोणों का ध्यान रखते हुए एक उपयुक्त हल के लिये अपनी सिफारिश पेश कर दी है। मिशन की योजना एक सम्पूर्ण वस्तु के रूप में है और यह उसी हालत में सफल हो सकती है जब इसे स्वीकार करके इस पर सहयोग की भावना से अमल किया जाय।"

"मिशन लीगी अध्यक्ष के वक्तव्य व कांग्रेस के प्रस्ताव द्वारा उठाये गये कुछ मुद्दों का संक्षेप में स्पष्टी करण भी करना चाहता है।"

"विधान-निर्मात्री परिषद् के अधिकारों व कार्यों को मन्त्रि-मण्डल-मिशन की घोषणा में स्पष्ट किया जा चुका है और यह भी बतला दिया गया है कि परिषद किस कार्य-प्रणाली पर चलेगी। एक विधान-निर्मात्री-परिषद् का निर्माण होने और प्रस्तुत आधार पर उसके काम शुरू कर देने के बाद उसकी इच्छा मे दखल देने या उसके निर्णयों पर आपत्ति करने का कोई इरादा नहीं है। जब विधान-निर्मात्री-परिषद अपना कार्य समाप्त कर चुकेगी, तब सम्राट की सरकार पार्लियामेन्ट के लिये एक ऐसी कार्यवाही करने की सिफारिश करेगी जो भारतीय प्रजा को पूर्ण सत्ता सौंपने के निमित्त आवश्यक समझी जायेगी, लेकिन उसमें दो शर्तें शामिल होंगी। एक तो अल्पसंख्यक जातियो की रक्षा के लिये उपयुक्त प्रबन्ध और दूसरी सत्ता हस्तान्तरित करने के बाद उत्पन्न होने वाले मामलों के सम्बन्ध में सम्राट की सरकार के साथ एक सन्धि करने की इच्छा। मन्त्रि-मण्डल-मिशन के खयाल में ये दोनों मामले विवादास्पद नही हैं।"

"यह चुनाव प्रणाली का परिणाम है कि विधान-निर्मात्री परिषद के लिये कुछ यूरोपीय भी चुने जा सकते हैं। इस प्रकार मिले अधिकार का वे उपयोग करेंगे या नही, यह उन्हें स्वयं निश्चय करना है।"

"बलूचिस्तान का प्रतिनिधि शाही जिरगा व क्वेटा म्यूनिसिपल्टी के गैर सरकारी सदस्यों की एक सयुक्त बैठक में चुना जायेगा।"

"कुर्ग में समूची व्यवस्थापिका कौंसिल को मत देने का अधिकार

होगा किन्तु सरकारी सदस्यों को चुनाव में भाग लेने की हिदायद कर दी जायेगी।"

"कांग्रेसी प्रस्ताव में वक्तव्य के १५ वे पैरे में जो यह अर्थ लगाये गये हैं कि "प्रान्तों की यह अपनी पसन्द होगी कि वे उस विभाग में शामिल हों या न हों जिसमें उन्हें रखा गया है"—मन्त्रि-मण्डल-मिशन के इरादों से मेल नहीं खाते अर्थात् ये अर्थ ठीक नहीं हैं। प्रान्तों की गुटबन्दी करने के कारण सुविदित हैं और यह योजना का एक आवश्यक अंग है। इसमें यदि कोई संशोधन हो सकता है, तो वह प्रमुख दलों में आपसी समझौता होने से ही हो सकता है। विधान-निर्मात्री-परिषद का कार्य समाप्त होने के बाद गुटों से अलग होने का अधिकार स्वयं लोगों द्वारा ही कार्यान्वित किया जायेगा क्योंकि नये प्रान्तीय विधान के आधीन प्रथम चुनाव मे गुट से अलग होने का यह प्रश्न एक बड़ा मुद्दा बन जायेगा और नवीन मताधिकार के मातहत लोग एक सच्चे प्रजातन्त्री निश्चय में भाग ले सकेंगे।"

"यह प्रश्न कि विधान-निर्मात्री-परिषद के लिये रियासती प्रतिनिधियों की नियुक्ति कैसे की जाय, एक ऐसा प्रश्न है जिस पर रियासतों के साथ विचार करनाचाहिये। इसका फैसला करना मिशन का काम नही है।"

"मिशन ने यह बात मान ली है कि अन्तःकालीन सरकार का आधार नया होगा। वह आधार यह है कि सब विभाग, जिनमें युद्ध मन्त्री का विभाग भी सम्मिलित होगा, भारतीयों के हाथ में रहेंगे और नई सरकार के सदस्य भारतीय राजनीतिक दलों से परामर्श करके चुने जायेंगे। भारत सरकार के निर्माण में ये परिवर्तन अत्यधिक महत्व पूर्ण परिवर्तन हैं और स्वतंत्रता की ओर एक लम्बा कदम है। सम्राट की सरकार इन परिवर्तनों के प्रभाव को स्वीकार करेगी, उनका भारी महत्व समझेगी और भारत के रोजमर्रा के शासन में भारत सरकार को अधिक से अधिक संभव स्वतंत्रता प्रदान करेगी।"

"चूंकि कांग्रेस के प्रस्ताव मे यह मान लिया गया है कि अवान्तर काल मे वर्तमान शासन-विधान जारी रहे, इसलिये अन्तःकालीन सरकार, कानूनीतौर से केन्द्रीय धारा सभा के प्रति उत्तरदायी नहीं बनायी जा सकती। हाँ, यदि सरकार के सदस्य धारा सभा द्वारा कोई महत्वपूर्ण कानून स्वीकार कराने में असफल रहे या उनके विरुद्ध कोई अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया जाय तो उन्हें व्यक्तिगत या सामान्य रूप से इस्तीफा देने से कोई शक्ति नहीं रोक सकेगी।"

"निस्संदेह नया विधान बनने पर स्वतंत्र भारत की इच्छा के विरुद्ध भारत में ब्रिटिश फौजे रखने का कोई इरादा नहीं है, लेकिन अवान्तर काल में, जो आशा है छोटा ही होगा, वर्तमान विधान के मातहत ब्रिटिश सरकार की यह जिम्मेदारी है कि वह भारत की सुरक्षा कायम रखे और इसलिये ब्रिटिश फौजों का रहना जरूरी है।"

---

[४]

ब्रिटिश सरकार का ६ दिसम्बर १९४६ को घोषणा

"सम्राट की सरकार ने पडित जवाहर लाल नेहरु, श्री मुहम्मद अली जिन्ना, श्री लियाकत अली खाँ व सरदार बलदेवसिंह के साथ जो बातचीत शुरू की थी, वह कल शाम को समाप्त होगई, क्योंकि पंडित नेहरु व सरदार बलदेवसिंह आज भारत लौट रहे हैं। बातचीत का विषय विधान-निर्मात्री परिषद में समस्त दलों को शामिल करना व उनका सहयोग प्राप्त करना था। अभी यह आशा नहीं की जा सकती कि कोई अन्तिम समझौता होगया है, क्योंकि किसी भी अन्तिम निर्णय से पहिले भारतीय प्रतिनिधियों को अपने सहयोगियों से परामर्श करना होगा। मुख्य कठिनाई, मन्त्रि-मंडल मिशन की १६ मई की

घोषणा के पैरा नं० १६ (५.) व . ८) की जो विभागो की बैठको से सम्बन्ध रखता है, परिभाषा पर उत्पन्न हुई। यह पैरा इस प्रकार है—

"१६—(५) ये विभाग उन प्रान्तों के, जो इनमें शामिल होंगे, प्रान्तीय विधानों का निर्णय करेंगे और इस बात का भी निर्णय करेंगे कि आया इन प्रान्तों के लिये कोई गुट-विधान कायम किया जाय और यदि ऐसा हो तो वह गुट किन प्रान्तीय विषयों से सम्बन्ध रखेगा। प्रान्तो को उपधारा (८) के अनुसार गुटबन्दी से अलग होने का अधिकार होना चाहिये।" •

उपधारा—(८) इस प्रकार है—

"नये विधान के सम्बन्ध में समझौता होने के बाद तुरन्त, प्रत्येक प्रान्त को यह अधिकार होगा कि वह उस गुट से, जिसमें उसे रखा गया है यदि चाहेगा तो निकल सकेगा। गुटबन्दी से निकलने का ऐसा निश्चय नई विधान-परिषद् के आधीन किये गये प्रथम आम चुनावों के बाद उस प्रान्त की धारा-सभा द्वारा किया जायेगा।"

"मन्त्रि मण्डल मिशन की आरंभ से ही यह राय रही है कि कोई विपरीत समझौता न होने की सूरत में विभागो के निश्चय उन विभागों के प्रतिनिधियों के बहुमत द्वारा ही किये जाने चाहिये और यह राय मुस्लिम लीग द्वारा मन्जूर की गई है, किन्तु कांग्रेस ने एक भिन्न दृष्टि-कोण पेश किया है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि मन्त्रि-मिशन के वक्तव्य के असली अर्थ यह है कि प्रान्तों की गुटबन्दी व अपने विधान बनाने के बारे में निश्चय करने का पूरा अधिकार उस प्रान्त को ही है।

"सम्राट की सरकार ने न्याय सम्बन्धी विमर्ष किया है जिसके द्वारा यह पुष्टि होती है कि १६ मई के वक्तव्य का वही अर्थ है जैसा कि मंत्रि-मण्डल मिशन ने व्यक्त किया था। वक्तव्य के इस अंश को जैसा कि उसकी व्याख्या की गई, १६ मई की योजना का आवश्यक भाग समझा जाना चाहिये जिससे कि भारतीय जनता द्वारा विधान

निर्माण किया जा सके तथा जिसे सम्राट की सरकार पार्लियामैन्ट के सम्मुख प्रस्तुत करेगी। अतः विधान-परिषद में शामिल होने वाले सभी दलों द्वारा यह स्वीकार किया जाना आवश्यक है।"

"यह स्पष्ट है कि १६ मई के वक्तव्य के व्याख्या सम्बन्धी अन्य प्रश्न भी उठे। सम्राट की सरकार को यह आशा है कि यदि मुस्लिम लीग कौंसिल विधान-परिषद में शामिल होने को रजामन्द हो जाय तो वह काग्रेस की भांति इस बात से भी सहमत होगी कि व्याख्या संबधी प्रश्नों का निर्णय फीडरल कोर्ट द्वारा दिया जायेगा तथा वे उसे स्वीकार करेंगे जिससे कि विधान-परिषद तथा विभागों की कार्रवाई मिशन योजना के अनुसार हो सके।"

"मौजूदा गति अवरोध के सम्बन्ध में सम्राट की सरकार कागरेस से प्रार्थना करती है वि वह मिशन के विचारों को स्वीकार करे जिससे कि मुस्लिम लीग अपने रवैये पर पुनः विचार कर सके। यदि मिशन की व्याख्या के बावजूद विधान-परिषद इस आधार भूत बात पर फेडरल कोर्ट का निर्णय लेना चाहे तो इसके लिए उसे शीघ्र कार्रवाई करना चाहिये। फिर यह अधिक ठीक रहेगा कि विधान परिषद के विभागों की बैठके तब तक के लिए स्थगित रहें जब तक कि फेडरल कोर्ट का निर्णय नही हो जाता।"

"बिधान-परिषद की कार्रवाई के सम्बन्ध में जब तक आपसी समझौता न हो जाय तब तक उसकी सफलता की अधिक संभावना नहीं। यदि ऐसी विधान-परिषद द्वारा, जिसमें भारतीय जन संख्या के एक बड़े दल का प्रतिनिधित्व नही हुआ हो, कोई विधान तैयार किया गया तो सम्राट की सरकार जैसा कि कांग्रेस का भी विचार है, ऐसे विधान को देश की उन पार्टियों पर थोपने का प्रयास नहीं करेगी जो उससे सहमत नहीं होंगी।"

[५]

ब्रिटिश प्रधान मंत्री मि० एटली की २० फरवरी सन् १९४७ की घोषणा-

"ब्रिटेन की सरकार की नीति दीर्घकाल से हिन्दुस्तान में स्वराज्य की स्थापना के लिए कार्य करने की रही है। इसका अनुगमन करते हुए हिन्दुस्तानियों को अधिकाधिक उत्तरदायित्व दिया गया है। और आज हिन्दुस्तान का मुल्की शासन और हिन्दुस्तानी सशस्त्र सेना बहुत बड़ी सीमा तक हिन्दुस्तानी नागरिकों और अफसरो पर निर्भर है। वैधानिक क्षेत्र मे १९१९ ई० और १९३५ ई० के पार्लियामेंट के विधान कानूनों में बहुत कुछ राजनीतिक सत्ता हिन्दुस्तानियों को सौंपी गई है। सन् १९४० में सयुक्त सरकार ने यह सिद्धान्त स्वीकार किया था कि हिन्दुस्तानी स्वय पूर्ण स्वतंत्र हिन्दुस्तान का विधान बना लें। सन् १९४२ मे उसने इसके लिए लड़ाई समाप्त होते ही विधान निर्माण के लिए हिन्दुस्तानियों को विधान-परिषद बनाने के लिये निमन्त्रित किया।"

"ब्रिटिश सरकार इस नीति को ठीक और अनुकूल मानती है। पद ग्रहण के बाद से उसने इस नीति को कार्यान्वित करने का पूरा प्रयत्न किया है। गत १५ मार्च को प्रधान मंत्री एटली ने एक घोषणा में यह साफ-साफ कहा कि अपने देश के भावी दर्जे और विधान का निर्माण करना हिन्दुस्तान के लोगों का ही काम है और अब अंग्रेजों के हाथों से सत्ता हिन्दुस्तानी हाथों में देने का समय आ गया है।"

"गत वर्ष हिन्दुस्तान में जो ब्रिटिश मंत्रिदल भेजा था, उसने हिन्दुस्तानियों को विधान-निर्माण में मदद देने के लिये उनके नेताओं से तीन मास तक बातचीत की जिससे सत्ता निर्विघ्न और तेजी से सौंपी जा सके। जब यह स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश मन्त्रि दल के प्रयत्न के बिना समझौता नहीं होता है तब उन्होंने अपनी तजवीजें पेश कीं। ये

तजवीजें मई १९४६ ई० में प्रकट की गईं। उनमें कहा गया था कि हिन्दुस्तान का विधान दिये गये तरीके से एक विधान-परिषद बनायेगी जिसमें हिंदुस्तान और रियासतों की सब जातियों और हितों के लोग सम्मिलित होंगे।"

"मंत्रिदल के लौट आने पर हिन्दुस्तानियों में प्रमुख जातियों के प्रतिनिधियों की एक अन्तःकालीन सरकार बना ली। प्रान्तों मे धारा सभा के प्रति उत्तरदायी सरकारें पदस्थ हैं।"

"सम्राट की सरकार ब्रिटिश मंत्रि दल की योजना के अनुसार सब दलों की स्वीकृति से बनाये गये विधान के आधार पर स्थापित सरकार को उत्तरदायित्व सौपेगी। लेकिन ऐसा विधान बनाने की और ऐसी सत्ता स्थापित होने की कोई आशा नही है। वर्तमान अनिश्चित स्थिति खतरों से भरी हुई है। और उसे अनिश्चित समय तक कायम नहीं रखा जा सकता, सम्राट की सरकार यह साफ कर देना चाहती है कि उसका इरादा उत्तरदायी हिन्दुस्तानियों को अधिक से अधिक जून १९४८ ई० तक सत्ता सौप देने के लिए कार्रवाइ करने का है।"

"इस विशाल उप-महाद्वीप में जिसमें ४० करोड़ आदमी रहते हैं ब्रिटिश साम्राज्य के अग के रूप मे पिछली शताब्दि में शाति रही है। यदि देश का आर्थिक विकास करना है और रहन-सहन ऊँचा करना है तो यहाँ शान्ति और सुरक्षा की अब और भी अधिक जरूरत है।"

"सम्राट की सरकार अपना उत्तरदायित्व ऐसी सरकार को देना चाहती है जिसका आधार लोगों का निश्चित समर्थन हो और जो न्याय एवं योग्यता के साथ हिन्दुस्तान में शाति रख सके और शासन कर सके। इसीलिये सब दलों को अपने मतभेद भुलाकर अगले साल आने वाले इस दायित्व को अपने ऊपर लेने के लिये तैयार होना चाहिये।"

"महीनों के कठिन उद्योग के बाद ब्रिटिश-मत्रिदल ने विधान-निर्माण की विधि के बारे में दलों में बहुत कुछ समझौता कराया था। यह मई के वक्तव्य में दिया गया है। इसके अनुसार सम्राट की सरकार

ने पूर्ण प्रतिनिधिक विधान-परिषद के द्वारा वक्तव्य की तजवीजों के के अनुसार बनाये गये विधान को पार्लियामैन्ट मे पेश करना मंजूर किया था।"

"लेकिन यदि ऐसा हो कि पूर्ण प्रतिनिधिक परिषद पैरा ७ में दी गई अवधि तक ऐसा विधान न बना सकेगी तो ब्रिटिश सरकार यह सोचेगी कि ब्रिटिश भारत में निश्चित तारीख पर किसको अधिकार सौंपा जाय। ब्रिटिश भारत में एक तरह की केन्द्रीय सरकार को सत्ता दी जाय या कुछ क्षेत्रों मे वर्तमान प्रान्तीय सरकारों को या किसी दूसरे तरीके से जो अधिकतम उचित और लोक-हितकारी मालूम पड़े, सत्ता सौंपी जाय।"

"यद्यपि सत्ता जून १६४८ से पहिले हस्तान्तरित नही की जा सकेगी, लेकिन तैयारी की कार्यवाही पहिले से ही हाथ में लेनी होगी। मुल्की शासन की उत्कृष्टता कायम रखना जरूरी है और देश की रक्षा का पूरा इन्तजाम होना चाहिये। लेकिन सत्ता को हस्तान्तरित करने के साथ-साथ १९३५ के विधान की सब धाराओं का पालन कठिन होगा। सत्ता को अतिन्मरूप से हस्तान्तरित करने लिये कानून बनाना पड़ेगा।"

"रियासतों के बारे में ब्रिटिश सरकार अपना अधिकार और सार्वभौमता के कर्तव्य ब्रिटिश भारत की किसी सरकार को सौंपना नहीं चाहती। सार्वभौम अधिकार को सत्ता हस्तान्तरित करने से पूर्व समाप्त करने का इरादा नही है। इस बीच में ब्रिटिश सरकार से रियासतों के सम्बन्ध समझौते से स्थिर किये जायेंगे। सम्राट की सरकार जिन्हे सत्ता सौंपेगी उनसे अलग समझौता करेगी।"

"सम्राट की सरकार का विश्वास है कि हिन्दुस्तान में ब्रिटेन के जो व्यापारिक और औद्योगिक हित हैं, उनके लिये नयी अवस्थाओं में अच्छा क्षेत्र है। दोनों देशों के बीच व्यापारिक-सम्बन्ध पुराने और मित्रतापूर्ण हैं और वे दोनों के हित के लिये जारी रहेंगे।"

"लार्ड वैवेल की नियुक्ति युद्धकालीन थी। यह मालूम होता है

कि हिन्दुस्तान में नई और अन्तिम स्थिति के आरम्भ का समय इस नियुक्ति को समाप्त करने के लिये उपयुक्त समय है। उनके बाद लार्ड माउन्टबैटन वायसराय नियुक्त किये जाते हैं। यह पद-परिवर्तन मार्च में होगा। लोर्ड वैवेल को सम्राट की सरकार ने अर्ल की पदवी दी है।"

ब्रिटिश सरकार ने समय समय पर भारतीय समस्या के लिये जो वैधानिक कदम उठाये उनकी तालिका

१८५८ से १९४७ तक

१८५८—महारानी विक्टोरिया की घोषणा।

१८६१,९२—भारतीय कौंसिल एक्ट।

१९०९—मिन्टो मारले सुधार।

१९१७ (२० अगस्त)—मान्टेग्यू द्वारा भारत के लिये उत्तर दायित्व पूर्ण विधान बनाने के उद्देश्य की घोषणा।

१९१८ (जुलाई ८) मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड की रिपोर्ट।

१९१९ (२३ दिसम्बर) सम्राट द्वारा गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट की घोषणा।

१९२१ (९ फरवरी) ड्यूक ऑफ कनॉट द्वारा केन्द्रीय एसेम्बली और नरेन्द्र मण्डल की स्थापना।

१९२७—सायमन कमीशन की नियुक्ति।

१९२९—बटलर कमेटी (देशी राज्यों सम्बन्धी) की रिपोर्ट।

१९२९—(अक्टोबर) औपनिवेषिक स्वराज्य के सम्बन्ध में लार्डइर्विन की घोषणा।

१९३१—गांधी इरविन समझौता।

१९३५ —(२ अगस्त) गवर्नमैन्ट ऑफ इंडिया एक्ट।

१९३९—(११ सितम्बर) वायसराय द्वारा युद्ध काल के लिये संघ को स्थगित करने की घोषणा।

१९४०—(१० जनवरी) औपनिवेशिक स्वराज्य सम्बन्धी लार्ड लिनलिथगो का भाषण।

१९४१—(९ सितम्बर) चर्चिल द्वारा एटलान्टिक चार्टर के भारत पर लागू न होने की घोषणा।

१९४२—(११ मार्च) क्रिप्स मिशन की घोषणा।

१९४५—(१४ जून) वायसराय की शासन परिषद की भारतीयकरण योजना के सम्बन्ध में श्वेतपत्र।

१९४५—(१९ दिसम्बर) पार्लियामेन्ट्री प्रतिनिधि-मण्डल की घोषणा।

१९४६—(१९ फरवरी) मंत्रि-मण्डल मिशन की घोषणा।

१९४६—(२२ फरवरी) मिशन के कार्यक्षेत्र का लार्ड पेथिक लारेन्स द्वारा स्पष्टीकरण।

१९४६—(१५ मार्च) भारत की नीति पर ऐटली का वक्तव्य।

१९४६—(१६ मई) मंत्रि-मण्डल मिशन की घोषणा।

१९४६—(२२ मई) मंत्रि-मण्डल द्वारा नरेन्द्र-मण्डल को स्मरण पत्र।

१९४६—(२६ मई) मंत्रि-मण्डल का १६ मई के घोषणा पत्र का स्पष्टीकरण।

१९४६—(६ दिसम्बर) ऐटली व मन्त्रि-मण्डल व वायसराय की घोषणा।

१९४७—(२० फरवरी) ऐटली की घोषणा।